# पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन

(एम.फिल.हिन्दी में उपाधि हेतु प्रस्तुत)

## लघु-शोध-प्रबंध


**शोधार्थी**
अनिल अहिरवार
नामांकन संख्या : En16-00003

**शोध निर्देशक**
डॉ. राहुल सिद्धार्थ
सहायक प्राध्यापक
साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय



हिन्दी विभाग
भाषा, साहित्य और कला केंद्र
**साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय**
अकादमिक परिसर बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश – 464551 (भारत)


2018

# पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन

(एम.फिल.हिन्दी में उपाधि हेतु प्रस्तुत)

## लघु-शोध-प्रबंध


**शोधार्थी**
अनिल अहिरवार
नामांकन संख्या : En16-00003

**शोध निर्देशक**
डॉ. राहुल सिद्धार्थ
सहायक प्राध्यापक
साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय

विभागाध्यक्ष
(हिंदी विभाग)

हिन्दी विभाग
भाषा, साहित्य और कला केंद्र
**साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय**
अकादमिक परिसर, बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश – 464551 (भारत)


2018

# सर्वाधिकार

मैं, **अनिल अहिरवार** एतद् द्वारा घोषणा करता / करती हूँ कि साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय, रायसेन द्वारा इस शोध-प्रबंध / लघु-शोध-प्रबंध **पोस्ट बॉक्स नं॰ 203 नाला सोपरा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन** को शैक्षणिक / अनुसंधान उद्देश्य से इलेक्ट्रॉनिक या प्रिंट प्रारूप में उपयोग करने के अधिकार होंगे।

नोट: शोधार्थी अथवा अन्य द्वारा शोध-प्रबंध / लघु-शोध-प्रबंध के आँकड़ों / निष्कर्ष का प्रयोग व्यक्तिगत रूप से किया जा सकेगा बशर्ते कि विश्वविद्यालय के सर्वाधिकार का उल्लेख किया जाए।

स्थान: .................................... हस्ताक्षर

दिनांक: ................................. (शोधार्थी)

# <u>शोधार्थी द्वारा घोषणा-पत्र</u>

मैं एतद् द्वारा घोषणा करता/करती हूँ कि यह शोध कार्य **पोस्ट बॉक्स नं० 203 नाला सोपरा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन** डॉ० / प्रोफ़ेसर **राहुल सिद्धार्थ** (शोध निर्देशक), विभाग/केन्द्र **हिन्दी विभाग / भाषा, साहित्य और कला केंद्र** के अधीन किया गया मेरा मौलिक शोध-कार्य है, जिसे विभागीय शोध समिति द्वारा अनुमोदित किया गया है।

मैं, यह भी घोषणा करता / करती हूँ कि मेरी जानकारी के अनुसार इस शोध-प्रबंध / लघु-शोध-प्रबंध में किसी प्रकार का ऐसा तथ्य उदृत नहीं किया गया जो इस विश्वविद्यालय या किसी अन्य विश्वविद्यालय के समक्ष किसी भी उपाधि हेतु प्रस्तुत किया गया हो।

साथ ही मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि--

1. मैंने यू.जी.सी अधिनियम 2009 के मापदण्डों के अनुसार एक सत्र का कोर्स वर्क सफलतापूर्वक पूरा कर लिया है।
2. मैंने लघु-शोध-प्रबंध प्रस्तुती पूर्व सेमिनार भी दिया है और दिए गए निर्देशों / सुझावों के आधार पर संशोधनों को सफलतापूर्वक शामिल किया है।
3. मेरे द्वारा शोध-प्रबंध / लघु-शोध-प्रबंध से संबंधित शोध कार्य को ISSN / रेफर्ड जर्नल में एक शोध-पत्र प्रकाशित किया गया है जिसकी छायाप्रति लघु-शोध-प्रबंध के अन्त में संलग्न हैं। मैंने कॉन्फ्रेंस / संगोष्ठी में शोध-पत्र भी प्रस्तुत किये हैं।
4. मेरे द्वारा प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में कोई भी कंटैंट, किसी अन्य शोध या किसी प्रकाशित सामग्री का हिस्सा नहीं है। यदि Plagiarism के अन्तर्गत कोई भी content पाया जाता हैं, तो उसके लिए मैं स्वयं जिम्मेवार रहूँगा।

स्थान: .................................... हस्ताक्षर

दिनांक: .................................

# <u>प्रमाण-पत्र</u>

यह प्रमाणित किया जाता है कि शोध विषय **पोस्ट बॉक्स नं० 203 नाला सोपरा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन** श्री / श्रीमती / कु. **अनिल आहिरवार** द्वारा किया गया शोध कार्य है, जिसे साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय में एम.फिल. उपाधि के लिए मेरे निर्देशन में पूर्ण किया गया ।

मेरी जानकारी के अनुसार:

1. यह शोधार्थी का मौलिक कार्य प्रतीत होता है।

2. यह शोध कार्य यू.जी.सी. के दिशा निर्देशों को पूरा करता हैं।

3. विश्वविद्यालय की एम.फिल. / पी-एच.डी. उपाधि से संबंधित अध्यादेश की आवश्यकताओं को पूरा करता है।

स्थान: .................................                                                   हस्ताक्षर

दिनांक: .................................                                                  शोध-निर्देशक

# अनुक्रमणिका


पृष्ठ संख्या

**भूमिका** **I-V**

**प्रथम अध्याय : चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व एवं कृतित्त्व** **1-44**

**1.1** चित्रा मुद्गल : प्रमुख रचनाएँ एवं रचनाधर्मिता

**1.2** चित्रा मुद्गल : प्रस्तुत रचना की रचना प्रक्रिया के सूत्र

**1.3** व्यक्तित्व के प्रमुख बिंदु

**1.4** पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा: एक परिचय

**द्वितीय अध्याय: इतिहास एवं मिथक में थर्ड जेंडर (किन्नरों के संदर्भ में)** **45 -79**

**2.1** किन्नरों का इतिहास और ऐतिहासिक मान्यताएँ

**2.2** किन्नर जाति के संदर्भ में मिथकीय प्रयोग

**2.3** किन्नरों का मिथक और सत्य के मध्य विविध सूत्र

**2.4** किन्नरों  की पहचान का प्रश्न

**तृतीय अध्याय : पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा में व्याप्त सामाजिक चिंतन** **80-118**

**3.1** किन्नरों की पारिवारिक स्थिति : संदर्भ बिन्नी उर्फ़ विनोद

**3.2** किन्नरों की सामाजिक स्थिति : संदर्भ पत्र लेखन और माँ-पुत्र सम्बन्ध

**3.3** किन्नरों का समाज और समाज में किन्नर : अस्मितामूलक अध्ययन

**उपसंहार** **119-124**

**सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची** **125-128**

**परिशिष्ठ : प्रकाशित शोध-पत्र की छायाप्रति संलगन**

# भूमिका

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध **'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन'** पर शोध कार्य करते हुए इसके माध्यम से किन्नर समुदाय की समस्याओं को समाज के सामने लाने का प्रयास किया गया है। लेखिका चित्रा मुद्गल ने समयानुसार समाज के वंचित और शोषित वर्गों के प्रति समाज में उनके सहीं जगह। स्थान को लेकर लेखनी के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करती रहीं हैं। लेखिका ने उपन्यास लेखन के अतिरिक्त कहानी, नाटक आदि पर भी लेखन कार्य किया है। लेकिन आधुनिक युग गद्य का युग है। जिसमें उपन्यास शैली को एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में देखा जा सकता है। 'मानव' जिज्ञासा से बंधा हुआ सामाजिक प्राणी है। वह अपने अन्दर के भावों विचारों व संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए एक विशेष भाषा का प्रयोग करता है। उस भाषा को लिखित रूप देने के लिए लिपिबद्ध करता है। किसी भी व्यक्ति के द्वारा व्यक्त किए गए विचारों की लिपिबद्ध अभिव्यक्ति को साहित्य के रूप में देखा जा सकता है। साहित्य हमेशा समकालीन समाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों के परिवर्तन को स्पष्ट प्रतिबिम्बित करता है।

भारतीय समाज संरचना मे आज भी स्त्री-पुरुष को ही महत्व दिया जाता है। समाज मे आज भी में एक वर्ग सामाजिक भेद-भाव एवं बहिष्कार, तिरस्कार की पीड़ा सहन कर रहा है, जिसे आमतौर पर किन्नर (थर्ड जेंडर, हिजड़ा, छक्का आदि नाम) समुदाय कहा जाता है। वर्षों से समाज की मुख्यधारा से अलग-थलग यह वर्ग आज अपने मानवीय एवं सामाजिक अधिकारों की माँग कर रहा है। यह उपन्यास मुख्यधारा के समाज को यह सोचने पर मजबूर भी कर रहा है कि क्या वे मनुष्य नहीं है ? लिंग दोष के रूप में जन्म लेने के कारण उन्हें समाज से वंचित मान लिया जाता है। लेखिका का 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' उपन्यास उनके अन्य उपन्यासों से अलग कलेवर में सामने आया। इसमें किन्नरों की मूल समस्याओं को सामने लाने का प्रयास किया गया है। 'पोस्ट बाक्स नं.

203 नाला सोपारा' एक किन्नर समाज को साहित्य  अलग विषय को साहित्य के केंद्र में लाता है। अपने कथ्य एवं शिल्प के रचना विधान के द्वारा मुख्यधारा के साहित्य एवं समाज में हस्तक्षेप करता है। पत्र शैली में लिखा गया यह एक ऐसा उपन्यास है,जिसमें किन्नर विनोद उर्फ बिन्नी और उसकी माँ (बा) एक ही पत्र सम्प्रेषक और ग्रहणकर्ता की भूमिका में रहते हैं। यह उपन्यास सिर्फ किन्नर विनोद की व्यथा नहीं है बल्कि यह एक स्त्री के संघर्ष एवं विद्रोह  की कहानी भी है, जिसमें एक माँ अपने लिंग दोषी बच्चे को सहज स्वीकृति देती है और अपने परिवार के लोगों को भी बाध्य करती है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध  विषय '**पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन**' में थर्ड जेंडर अर्थात किन्नर समाज के संदर्भ में अस्मितावादी मूल्यांकन करना है। चित्रा मुद्गल द्वारा लिखित उपन्यास के अंतर्गत किन्नर समाज का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। हिन्दी साहित्य में किन्नरों का अस्मितावादी अध्ययन बहुत कम देखने को मिलता है। चित्रा मुद्गल द्वारा इस उपन्यास के माध्यम से  किन्नरों के प्रति दृष्टिकोण और समाज में किन्नरों की वास्तविक स्थिति चित्रित किया गया है। प्रस्तुत लघु-शोध प्रबंध को कुल तीन अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय : चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व है। इसमें चित्रा मुद्गल का जन्म, शिक्षा, परिवार, व्यक्तित्व निर्माण और साहित्यिक यात्रा में प्रवेश, उनके व्यक्तिगत अनुभव और उनकी रचनाधर्मिता को दिखाया गया है। साथ में यह भी देखने का प्रयास किया गया है कि प्रस्तुत रचना के प्रक्रिया के सूत्र कहाँ से कौन सी सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों के बीच से निकलकर बनते हैं।  इस अध्याय को चार उप-अध्यायों  में विभाजित किया गया है। प्रथम उप-अध्याय 'चित्रा मुद्गल : प्रमुख रचनाएँ एवं रचनाधर्मिता' है, जिसमें उनकी रचनाओं का एक संक्षिप्त परिचयात्मक विवरण दिया गया है और यह भी बताने का प्रयास किया गया है कि उनकी रचनाएँ किन-किन समकालीन परिस्थितियों को आत्मसात करके चलती हैं। दूसरा उप-अध्याय 'चित्रा मुद्गल : प्रस्तुत रचना के रचना प्रक्रिया के सूत्र' है। इसमें लेखिका के रचनाधर्मिता पर समकालीन हस्तक्षेप

व उसमें निहित तथ्यों तथा शैली को दिखाया गया है। तीसरा उप-अध्याय 'व्यक्तित्व के प्रमुख बिन्दु', जिसमें उनकी व्यक्तिगत पहचान, समय के सापेक्ष उनके लेखन की विशेषताओं को दिखाया गया है। इसके साथ समकालीन लेखकों में उनके स्थान का भी अध्ययन किया गया है। चौथा उप- अध्याय 'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा : एक परिचय' में इस उपन्यास का सामान्य परिचय दिखाया गया है। चित्रा मुद्गल ने इसके माध्यम से किन्नर समुदाय की व्यथा व उनकी स्थिति का वर्णन किया है।

द्वितीय अध्याय 'इतिहास एवं मिथक में थर्ड जेंडर (किन्नरों के संदर्भ में)' है। इसमें किन्नरों की मिथकीय अवधारणा को दिखाया गया है। प्राचीनतम ग्रंथ जैसे रामायण, महाभारत व पुराणों आदि के माध्यम से प्राचीन कालीन समाज की किन्नरों के प्रति क्या अवधारणा रही ? इसका अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है। इसमें कुल चार उप-अध्याय हैं। प्रथम उप-अध्याय 'किन्नरों का इतिहास और ऐतिहासिक मान्यताएँ' है। इस उप-अध्याय में किन्नरों के इतिहास का अध्ययन व विश्लेषण तथा ऐतिहासिक परम्पराएँ, समाज में उनका योगदान, अन्य संदर्भों में इनके अस्तित्व का अध्ययन किया गया है। दूसरा उप-अध्याय 'किन्नर' जाति के संदर्भ में मिथकीय प्रयोग' जिसमें किन्नरों के मिथक से लेकर इतिहास एवं वर्तमान समाज के संदर्भ में इनके स्थान को इस अध्याय में दर्शाया गया है। मिथकों को लेकर व्याप्त अवधारणा और आधुनिक वर्तमान समाज में किन्नरों की यथास्थिति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। तृतीय उप-अध्याय 'किन्नरों का मिथक और सत्य के मध्य विविध सूत्र' के अंतर्गत मिथक और सत्य के बीच अंतर्संबंध तथा उनकी मिथकीय वास्तविकता का अध्ययन किया गया है। इसमें किन्नरों के मिथक से लेकर वर्तमान समय के समाज में उनके स्थान व उनकी अस्मिता का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। चतुर्थ उप-अध्याय 'किन्नरों की पहचान का प्रश्न' है। इसमें उनकी जैविकीय, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षणिक, व पारिवारिक पहचान को दिखाने का प्रयास किया गया है। वर्तमान संदर्भों से जोड़ते हुए उनकी पहचान को व्यक्त किया गया है।

तृतीय अध्याय 'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा में व्याप्त सामाजिक चिंतन' है। इस अध्याय में उपन्यास के संदर्भ में किन्नरों का समाज और मुख्य धारा के समाज में अंतर व उनके माध्यम से किन्नर समुदाय के यथार्थ का अध्ययन किया गया है। किन्नरों की पारिवारिक स्थिति, पारिवारिक और सामाजिक संबंध, सामाजिक भेदभाव और किन्नर समाज की रीति-रिवाजों और परंपरा का विश्लेषण किया गया है। प्रथम उप-अध्याय 'किन्नरों की पारिवारिक स्थिति : संदर्भ बिन्नी उर्फ़ विनोद' में विनोद के परिवार का अध्ययन उपन्यास के आधार पर किया गया है। उपन्यास में व्याप्त माँ-पुत्र, पिता-पुत्र व भाई-भाई के संबंध को पारिवारिक संबंध न देखकर सामाजिक सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय में इसका विश्लेषण भी किया गया है। द्वितीय उप-अध्याय 'किन्नरों की सामाजिक स्थिति : संदर्भ पत्र लेखन और माँ-पुत्र सम्बन्ध' है। जिसमें माँ-बेटे के बीच पत्रों के माध्यम से हुए संवाद का अध्ययन व विश्लेषण किया गया है। इसमें माँ जहां एक तरफ मुख्य धारा के समाज का प्रतिनिधित्व करती दिखाई देती है, वहीं किन्नर विनोद किन्नरों के समाज का प्रतिनिधित्व करता है। तृतीय उप-अध्याय 'किन्नरों का समाज और समाज में किन्नर : अस्मितामूलक अध्ययन' है। इसमें किन्नर समाज की वर्तमान स्थिति व मुख्य धारा के समाज बीच उनकी स्थिति का विश्लेषण किया गया है। कोई भी समाज अपने समुदाय के व्यक्ति के लिए अलग सिद्धान्तों और मूल्यों का निर्माण करता है। मनुष्य के आदिम समाज से लेकर आधुनिक समाज तक की यात्रा में समाज का कालक्रमानुसार किन्नरों के प्रति व्यवहार की तरह परिवर्तित होता गया इन सभी तथ्यों को केंद्र में रखकर शोध कार्य करना ही इस लघु-शोध-प्रबंध का उद्देश्य रहा है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध पर शोध कार्य करते हुए किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में मिथक और इतिहास के आधार पर वर्तमान संदर्भों में उनके यथार्थ को देखने का प्रयास किया गया और यह भी देखा गया कि किन्नर समुदाय आज कौन-कौन सी परिस्थितियों का सामना कर रहा है। समाज के बहिष्कार तिरिस्कार के पीछे वह कौन से कारण रहे जिसके कारण किन्नर समुदाय के लोग आज भी कष्टमय जीवन यापन कर रहे हैं। किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में समाजशास्त्रीय शोध पद्धति से यहाँ पर

अध्ययन किया गया है। उन सूत्रों की भी खोज की करने का प्रयास भी किया गया है जिनकों आधार बनाकर एक समतामूलक समाज की स्थापना हो सके और मनुष्य - मनुष्य के बीच के भेद भाव को समाप्त किया जा सके।

सर्वप्रथम मैं अपने शोध निर्देशक और मार्गदर्शक डॉ. राहुल सिद्धार्थ के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने प्रस्तुत शोध कार्य के विषय चुनाव से लेकर शोध कार्य के सम्पन्न होने तक मुझे अनवरत मार्गदर्शन और सहयोग दिया। इसके साथ ही मैं विश्वविद्यालय के समस्त प्राध्यापक एवं कर्मचारीगण के प्रति भी अपना आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने हमेशा मेरा उत्साहवर्धन किया और अपना मार्गदर्शन दिया। अपनी माता वैजंती, पिता गजराज, बड़े भाई नीलेश, छोटे भाई देवेंद्र और यशपाल, भतीजे शाहिल और मनीष से मिले आशीर्वाद तथा प्यार का मैं आभारी रहूँगा। मैं अपने सहपाठी मित्रों में अनीश कुमार, अशोक कुमार सखवार, भंते लोकपाल, दिनेश कुमार, सपना वर्मा के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। इन सभी का सहयोग शोध-कार्य के दौरान मुझे प्राप्त होता रहा।

**दिनांक :** **(अनिल अहिरवार)**

**शोधार्थी**

**स्थान :** हिन्दी विभाग
साँची बौद्ध-भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय
अकादमिक परिसर, बारला, रायसेन, मध्य प्रदेश, भारत

# प्रथम अध्याय

## चित्रा मुद्गल का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

आधुनिक हिन्दी साहित्य में चित्रा मुद्गल सर्वतोन्मुखी प्रतिभा सम्पन्न प्रतिष्ठित कहानीकार, उपन्यासकार तथा नाटककार के रूप में देखी जाती हैं। नारी मुक्ति आन्दोलनों से पहले जिन लेखिकाओं ने हिन्दी साहित्य में नारी विमर्श की भूमिका बनाई, उनमें चित्रा मुद्गल का विशेष योगदान रहा है। हिन्दी साहित्य में चित्रा मुद्गल का महत्व इसलिए नहीं है कि वह भाषा व कथ्य के प्रयोग में पुरूष लेखकों को कहीं पीछे छोड़ आयी हैं। असली महत्ता तो उनकी नारी अस्मिता व दलित मध्यवर्गीय अस्मिता की विशिष्ट शैली से जूझने की उस शक्ति में है, जहाँ स्त्री समाज, दलित समाज एवं किन्नरों की व्यथा समाहित है। इस व्यथा का कारण लेखिका मुख्य धारा के समाज की कुंठित मानसिकता को मानती हैं। चित्रा मुद्गल स्त्री की स्वतन्त्रता के पक्ष में बात करते हुए समाज पर प्रश्नचिंह लगाती हैं तथा समाज व्यवस्था के सड़े-गले नियमों व विधानों को चुनौती देती दिखाई पड़ती हैं।

सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदना, उनके अन्दर की एक 'स्त्री' के संवैधानिक अधिकारों की जायज माँग तो है ही लेकिन सच तो यह है कि यह माँग उनकी व्यक्तिगत न बनकर समाज व देश के कल्याणकारी भविष्य की दिशा में अपनी मुख्य भूमिका निभाती है। चित्रा मुद्गल ने नारी अस्मिता को पुर्नस्थापित करने का प्रयास किया है। इसके साथ उन्होंने झोपड़पट्टियों में जीवन यापन कर रहीं दलित महिलाओं एवं मजदूरों की दयनीय यंत्रणाओं को अपनी लेखनी का माध्यम बनाकर गरीब, पीड़ित, शोषित मजदूरों एवं महिलाओं के हितों की रक्षा के लिए हमेशा संघर्षरत दिखाई देती हैं। रूढ़िवादी समाज व्यवस्था का विरोध करने के साथ भेदभाव पूर्ण व्यवस्था के विपरीत एक समतामूलक समाज व्यवस्था का सपना देखते हुए चित्रा मुद्गल कहती हैं कि, "**मनुष्य की गुलामी से मुक्त मनुष्यों वाले समाज का चाहे वह राजनीतिक हो या अर्थगत या वर्णगत या**

**मानसिक भावनात्मक या लिंग आधारित हो** ।"[1] लेखिका चित्रा मुद्गल ने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त भेदभाव चाहे वह जातिगत हो, वर्णगत हो या लिंग आधारित हो,उसका पुरजोर विरोध किया। मानवीय मूल्यों की स्थापना और मानवता के विघटन की चिंता इनके साहित्य की प्रमुख विशेषता है।

संसार में प्रत्येक व्यक्ति का व्यक्तित्व एक दूसरे व्यक्ति से भिन्न होता है। उनमें थोड़ी बहुत समानता हो सकती है लेकिन उनमें भिन्नता अधिक देखने को मिलती है। व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में सामाजिक शक्तियाँ प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में अपनी भूमिका निभाती हैं इसलिए किसी भी रचनाकार के कृतित्व का अनुशीलन करने के लिए उसके व्यक्तित्व के सन्दर्भ में अध्ययन कर लेना अनिवार्य हो जाता है। वरिष्ठ कथाकार चित्रा मुद्गल का जन्म 10 दिसंबर सन् 1944 को चेन्नई में हुआ। उनके पिता ठाकुर प्रताप सिंह उस समय आई. एन. सी. अश्विनी, मद्रास में नेवी में कमांडर के पद पर कार्यरत थे। उनका पैतृक गाँव उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले का निहाली खेड़ा गाँव है। चित्रा मुद्गल जमींदार घराने से सम्बन्ध रखती हैं इनका परिवार जमींदार था। इनके पिता ठाकुर प्रताप सिंह सामंती विचारधारा के समर्थक थे फिर भी उन्होंने अपनी बेटी को पढ़ाया लिखाया और साथ दिया। घर व समाज में पित्तृसत्तात्मक व्यवस्था हावी थी उस समय किसी भी लड़की को घर से बाहर निकलने की अनुमति नहीं दी जाती थी। चित्रा जी के व्यक्तित्व निर्माण में उस समय के समाज और उनके स्वयं के पूरे परिवार और उसकी विचारधारा का प्रभाव दिखाई पड़ता है। पितृसत्तात्मक समाज के प्रति विद्रोह का कारण उनमें बचपन से पनपी पिता के प्रति विद्रोह की भावना ने उन्हें पुरातन रूढ़िवादी व्यवस्था का विरोधी बना दिया।

चित्रा मुद्गल ने स्वयं अपने पिता के सन्दर्भ में कहा है कि माँ के साथ पिता जी का व्यवहार असंतोषजनक और बुरा था। चित्रा जी के पिता अंग्रेजी में रोमांटिक कविताएं और नाटक लिखते थे। चित्रा जी की माँ विमला ठाकुर बड़े घराने से सम्बन्ध रखती हैं वह उत्तर प्रदेश जनपद के प्रतापगढ़ के

---

[1]मुद्गल, चित्रा ,मेरे साक्षात्कार, नई दिल्ली ; किताब घर प्रकाशन, 2011, पृष्ठ17

वयालीस गाँवों के तालुकेदार की बेटी थीं। अपनी माँ के सम्बध में उन्होंने कहा है कि, "**मैं ढेठ गाँव की अनपढ़ माँ की लड़की हूँ। जो पति की झूठी थाली में खाना खाना स्त्री धर्म समझती थी।**"[1] इनकी माँ अत्यन्त सुखभवी, पाककला निपुण, सहनशील महिला थी, जिन्होंने अपने पति की विचारधारा का कभी विद्रोह नहीं किया बल्कि चुपचाप सहन करती रहीं।

चित्रा जी की आरंभिक शिक्षा गाँव और शहर में हुई। प्रारंभिक शिक्षा मुम्बई के सेंट्रल स्कूल में हुई थी। उसके बाद उन्हें अपने दादाजी के गाँव निहाली खेड़ा में ठाकुर बजरंगसिंह के यहाँ भेज दिया गया। चित्रा जी के दादा जी अंग्रेजों के जमाने में विक्टोरिया क्रास विजेता डॉक्टर थे। वह अपने आस-पास के इलाके में एक अच्छे डॉक्टर के रूप में जाने जाते थे। अपने दादा के घर में रह कर पढ़ते समय बचपन में उन्होंने देखा की उनके घर में काम करने वाले रामसेवक बारी के बेटे भीखू को गेहूँ की बोरी की चोरी करने पर उसको किस तरह पीटा गया। इससे उनके मन पर एक गहरी पीड़ा पहुँची। दुआर के विशाल सघन नीम के तने से उसे बाँध दिया गया। बडे बप्पा हंटर हाथ में लिये अपने बंगले से बाहर निकलते हैं। । तने से भीखू की बँधी देह आर्तनाद के साथ कसकसाने लगती है.............बारी काका और बारीन काकी बड़े बप्पा के पांवो पर लोट रहे हैं- "**क्षमा करि देव मालिक ! तुम्हार प्रजा हन..........बहिकगा बचुआ........एक मौका अऊर दै देव.........अब जो मुठ्ठी भूसिंव हिंया से हुआं कीन्हिस तौ दहिजार के खाल खीचि के भूसा भाई दीन्हेउ मालिक ! लेकिन बड़े बप्पा का हाथ तब तक नहीं रूकता जब तक वह स्वयं थककर चूर नहीं हो जाते।**"[2] इसी सामंती परिवेश में उन्हें अनेक ऐसी घटनाएँ देखने को मिली जिन घटनाओं ने चित्रा मुद्गल को समाज के शोषित, वंचित, दयनीय लोगों की स्थिति पर विचार करने को मजबूर किया और

---

1 Yougmans.blogspot.in (समकालीन लेखिका चित्रा मुद्गल : व्यक्तिव एवं कृतित्व) 28 अक्टूबर, 2017

2 जाधव, मीना, डॉ. इरेश स्वामी. (शोध प्रबंध). चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001, पृष्ठ 3

उन्हें इतना विक्षोभित, उद्देलित करने वाली घटनाओं का परिणाम चित्रा जी की साहित्यिक रचना प्रक्रिया में देखने को मिलता है।

चित्रा जी की प्रारंभिक शिक्षा गाँव से हुए और पॉचवी कक्षा से आगे की शिक्षा मुम्बई से घाटकोपर के हिन्दी हाईस्कूल से हुई। स्कूली-जीवन में उन्होंने खेलकूद में और चित्रकला में अनेक परितोषिक प्राप्त किये। पिता जी के विरोध करने पर भी वह नृत्य सीखती रहीं। क्योंकि नाचना-गाने की अनुमति ठाकुरों के यहॉ नहीं दी जाती थी। सन् 1963 में मुम्बई के सोमैया कालेज से इंटरमीडिएट की पढ़ाई पूरी की। सन् 1966 में चित्रा मुद्गल मुम्बई के जे.जे. स्कूल ऑफ फाइन आर्ट्स से चित्रकला में डिप्लोमा ग्रहण किया। चित्रा जी ने प्रेम विवाह किया था। उनका विवाह साहित्य में रूचि रखने वाले अवधनारायण मुद्गल के साथ हुआ। उस समय समाज में स्त्रियों की दशा अत्यंत सोचनीय थी। चारदिवारी के भीतर कैद स्त्रियों को एक निश्चित विचारधारा से मुक्त करने का विचार बनाकर उन्होंने अवध जी के साथ अंतर्जातीय विवाह किया। जिसको पुरूष प्रधान व समाज सामंती विचारधारा के लोग सहन करने में समर्थ नहीं थे। चित्रा जी के परिवार वाले इस विवाह के समर्थन में नहीं थे इसलिए इसका घर वालों ने जमकर विरोध किया और इसी कारण उनको घर से निकल दिया।

चित्रा जी अपने माँ के द्वारा कहीं गई बात से उस समय के समाज के सत्य को उजागर करते हुई कहती हैं कि, “**तुम नहीं जानती बैसवाड़ा के इन सूर्यवंशियों के खानदानों की लड़की का पांव तनिक भी अनुशासन से बाहर हुआ नहीं कि उसे अजाला (एक और आंगन) के कुएँ में बलात ढकेलकर प्रचारित कर दिया जाता है कि पानी खींचते हुए अचानक कुएं की पगत पर से बिटिया का पांव फिसल गया** ।”[1] परिवार की इस विचारधारा से प्रेरणा लेकर निकली चित्रा मुद्गल ने अपने लेखन में पुरूष की निरंकुश सत्ता, दोहरी मानसिकता,स्त्री के प्रति मानसिक व शारीरिक शोषण आदि सभी प्रकार के यथार्थ को अपनी रचना प्रक्रिया में सम्मिलित करती हैं।

[1]जाधव, मीना, डॉ. इरेश स्वामी. (शोध प्रबंध). चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001, पृष्ठ12

## चित्रा मुद्गल : प्रमुख रचनाएँ एवं रचनाधर्मिता

आठवें दशक की बहुचर्चित महिला रचनाकारों में चित्रा जी का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं पर लेखन किया है उन्होंने अपने स्कूली जीवन से कविता लिखना आरंभ कर कहानी, उपन्यास, निबन्ध, लेख, आदि सभी विधाओं पर निरन्तर लिखती रही हैं। चित्रा जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से मानवीयता के प्रति ऐसी संवेदनशीलता दिखाई है, जो सामान्य जनमानस के लिए जरूरी है। लेखिका ने घर की चारदीवारों में वैठकर साहित्य ही नहीं लिखा बल्कि दलित, शोषित, मजदूर संगठनों के बीच जाकर काम भी किया है। अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति और प्रेरणा शक्ति के संदर्भ में चित्रा जी कहती हैं, "**मृणाल ताई और डॉ. दन्ता सामंत ने मेरी चेतना भूमि को सींचा है। मीराताई जब तक जीवित थी सदैव उन्होंने मुझे आत्मविश्वास से भरा। वहीं अवध तो मेरी रीढ़ है ही**।"[1]

चित्रा जी के साहित्य को अच्छी तरह जानने के लिए उनकी महत्वपूर्ण रचनाओं को उनकी रचनात्मक विधाओं के आधार पर विभाजित कर परखना उपयुक्त होगा। चित्रा मुद्गल की प्रकाशित कृतियाँ इस प्रकार हैं -

**उपन्यास :**

1. एक जमीन अपनी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1990 ई.।
2. आवां, सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 1999 ई.।
3. दि क्रूसेड (एक जमीन अपनी का अंग्रेजी अनुवाद),ओशन पब्लिकेशन।
4. गिलिगड्ड,सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 ई.।
5. पोस्ट बॉक्स बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016 ई.।

---

[1]मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017,पृष्ठ 87

**कहानी संग्रह :**

1. जहर ठहरा हुआ,अनन्य प्रकाशन, दिल्ली,1981ई. ।
2. लाक्षागृह, पराग प्रकाशन, दिल्ली, 1982 ई. ।
3. अपनी वापसी, संभावना प्रकाशन, हापुड़, 1984 ई. ।
4. इस हमाम में, हिन्दी ग्रंथ अकादमी,नई दिल्ली, 1986 ई. ।
5. जगदम्बा बाबू गांव आ रहे हैं, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1992 ई. ।
6. ग्यारह लंबी कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन,दिल्ली, 1987 ई. ।
7. चर्चित कहानियाँ,सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994 ई. ।
8. मामला आगे बढ़ेगा अभी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1994 ई. ।
9. जिनावर, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली, 1996 ई. ।
10. दी हाइना एंड अदर स्टोरीज (अनुदित), ओशियन बुक्स प्रा. लि, दिल्ली, 1988 ई.।
11. लपटें, भारतीय ज्ञान पीठ, नई दिल्ली, 2002 ई. ।
12. केंचुल, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 ई. ।
13. भूख, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 ई. ।
14. वयान (लघुकथा संकलन), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2004 ई. ।
15. आदि-अनादि (संपूर्ण कहानियों का कथा संकलन, तीन खंडो में), सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007 ई. ।
16. ताशमहल (प्रेम कहानियों का संकलन),भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2004 ई. ।

**बाल कथा संकलन :**

1. जंगल का राजा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली,1986 ई. ।
2. देश-देश की लोक कथाएँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996 ई. ।

3. नीति कथाएँ , राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली, 1987 ई. ।
4. दूर के ढोल, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008 ई. ।
5. काँच की किरच, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, 2008 ई. ।
6. देश-विदेशकी लोक कथाएँ , राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, 2008 ई. ।

**बाल उपन्यास :**

1. माधवी कन्नगी, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली,1993 ई. ।
2. मणिमेंखले, साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 ई. ।
3. जीवक चिंतामणि, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 2002 ई. ।

**लेख :**

1. बयार उनकी मुट्ठी में, सामयिक प्रकाशन , दिल्ली, 2004 ई. ।
2. विचार संग्रह ,अभिनव प्रकाशन,1988, नई दिल्ली, 2004 ई. ।

**संपादित पुस्तकें :**

1. असफल दांपत्य की कहानियाँ , प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली,1887 ई. ।
2. टूटते परिवारों की कहानियाँ ,प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 1887 ई. ।
3. दूसरी औरत की कहानियाँ ,प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली,1987 ई. ।
4. भीगी हुई रेत,आधुनिक प्रकाशन, बीकानेर, 1989 ई. ।
5. पुरस्कृत कहानियाँ , संतोष प्रकाशन, नई दिल्ली, 1989 ई. ।
6. देह-देहरी,साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003 ई. ।
7. प्रेमचंद की प्रेम कहानियाँ , रोशनाई प्रकाशन,कोलकाता, 2005 ई. ।

**कहानियों पर फिल्में :**

1. 1988 ई. में दूरदर्शन के लिए टेलीफिल्म 'वारिस' का निर्माण।
2. 1986 ई. में दूरदर्शन लखनउ की ओर से कहानी 'बावजूद इसके' पर टेलीफिल्म का निर्माण।
3. 'प्रेतयोनी' कहानी पर हिन्दी फीचर फिल्म 'आबरू' का निर्माण।
4. निर्देशक मंजू सिंह के धारावाहिक में एक कहानी 'रूना आ रही है' शामिल।
5. धारावाहिक में टेलीफिल्म के रूप में कहानी 'अभी भी मझधार' शामिल ।
6. 'दशरथ का वनवास' और 'सौदा' कहानियों पर जी.टी.वी.रिश्ते' धारावाहिक में टेलीफिल्म का निर्माण।

**अनुवाद :**

1. पराग प्रकाशन, नई दिल्ली से 'गुजराती की श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ' प्रकाशित।
2. पराग प्रकाशन, नई दिल्ली से 'गुजराती की श्रेष्ठ कहानियाँ'(अनुवाद) प्रकाशित ।
3. गुजराती, मराठी, अंग्रेजी से ढेरों लेख एवं कहानियों का अनुवाद।

**पुरस्कार व सम्मान :**

1. सन् 1986 में राष्ट्रीय एकता एवं सद्भावना के लिए 'प्रज्ञा सम्मान' ।
2. वर्ष 1986 में 'ग्यारह लम्बी कहानियां' कथा संग्रह के लिए राजभाषा विभाग द्वारा राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह पुरस्कार।
3. सन् 1994 में उपन्यास 'एक जमीन अपनी' के लिए ग्रामीण संगठन, मुंबई द्वारा 'फणीश्वरनाथ रेणुसाहित्य पुरस्कार' ।
4. हिन्दी अकादमी की ओर से सन् 1956 में 'साहित्यकार सम्मान' ।
5. 'आवां' उपन्यास के लिए सहस्राब्दी का पहला 'इंदु शर्मा कथा सम्मान'।
6. सन् 2002 में 'आवां'उपन्यास के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से 'साहित्यक कृति सम्मान' ।

7. मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी की ओर से सन् 2002 में अखिल भारतीय वीर सिंह जूदेव सम्मान
8. सन् 2000 में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की ओर से 'साहित्य भूषण सम्मान'।
9. 'आवां'उपन्यास के लिए सन् 2003 में के. के. बिड़ला का प्रतिष्ठित व्यास सम्मान।
10. 'आवां' उपन्यास के लिए वर्ष 2007 में हिमांचल प्रदेश का प्रतिष्ठित शिखर सम्मान।
11. 'गिलिगडु' उपन्यास के लिए मध्य प्रदेश सरकार द्वारा सन् 2005 में चक्रधर सम्मान प्रदान किया गया।
12. सन् 2005-06 में 'गिलिगडु'उपन्यास के लिए 'श्रीमती रत्नी देवी गोयनका सम्मान।
13. 'इस हमाम में' कथा संग्रह के लिए हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा सन् 1886 में 'सहित्य कृति पुरस्कार'।
14. सन् 1986 में हिन्दी आकदमी, दिल्ली द्वारा 'जंगल का राजा' बाल कथा संग्रह के लिए बाल सहित्य कृति पुरस्कार।
15. हिन्दी कथा साहित्य में समकालीन महिला साहित्य लेखन के अन्तर्गत प्रथम पंक्ति के साहित्यकारों में चित्रा मुद्गलका प्रमुख स्थान है।

अपनी बहुमुखी प्रखर लेखन की प्रतिभा के द्वारा उन्होंने हर बार एक नए कथ्य और शिल्प के माध्यम से अपने विशिष्ट भूगोल की तलाश की है। भारतीय समाज में व्याप्त विषमता और उसके पीछे निहित कारणों को उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के सामने लाने का प्रयास किया है। समाज के उन सभी वर्गों को अपनी लेखनी का माध्यम बनाया है, जिनका मुख्यधारा के समाज के द्वारा किसी न किसी प्रकार से दमन और शोषण किया जाता रहा है। समाज के द्वारा हाशिये पर कर दिए गए वंचित, दमित एवं शोषित वर्ग, स्त्री चेतना, स्त्री मुक्ति व स्त्रीवादी आन्दोलनों के लिए लेखिका हमेशा संघर्षरत दिखाई देती हैं। चित्रा मुद्गल ने कविताएँ लिखना अपने स्कूल जीवन से ही आरम्भ कर दिया था। चित्रा जी मानती हैं कि अपने चारों ओर विद्यमान शोषण, अन्याय, अत्याचार,

अमानवीयता आदि का खुला प्रतिपाद करने के लिए कथा साहित्य ही एक सशक्त माध्यम है। वह इसी का माध्यम बनाकर भारतीय स्त्री की संपूर्ण गरिमा का प्रतिनिधित्व करती दिखाई देती हैं।

चित्रा मुद्गल का रचना संसार बहुत व्यापक है। **"अब तक उनके चार उपन्यास, चौदह कहानी संकलन, एक लघुकथा संकलन, तीन बाल उपन्यास, सात बालकथा संग्रह, तीन नाटक, दो वैचारिक संकलन, सात संपादित पुस्तके** ।"[1] उन्होंने मुंबई की उन बाइयों के अधिकारो के लिए लंबी लडाई लड़ी जो झोपड़पट्टियों में रहकर घरों में बर्तन और झाडू-पोंछे का काम किया करती हैं। उन्होंने हजारों महिलाओं को झोपड़पट्टियों की नारकीय पीड़ा से मुक्ति दिलाने वाले सामाजिक आंदोलनों में हिस्सा लिया व महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने का कार्य भी किया। चित्रा जी ने 'जागरण' संस्था में काम किया जिसका उद्देश्य गरीब, पीड़ित, शोषित महिलाओं की रक्षा करना था। चित्रा मुद्गल ने अपने व्यक्तित्व के इन्हीं भिन्न-भिन्न पहलुओं को रचनाओं में अभिव्यक्त किया है।

हिन्दी साहित्य में लगभग सन् 1990 के बाद अनेक विमर्शों की शुरुआत हुई, जिसमें दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, वृद्ध विमर्श, पसमांदा विमर्श आदि प्रमुख हैं। आज इनके माध्यम से साहित्य में अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श हो रहा है। आधुनिकता के इस दौर में व्यक्ति एवं समाज के अन्दर की संवेदना ख़त्म होती दिख रही है। मानवीयता और सामाजिकता के इन्हीं सभी बदलते मूल्यों की चिंता और मानवीय संवेदना को आत्मसात करके ही चित्रा मुद्गल ने अपना रचनात्मक कार्य किया है।वर्षों से अत्याचार और शोषण के शिकार मजदूर वर्ग, स्त्रियों, किन्नरों (थर्ड जेंडर), वृद्धोंके प्रति वह अपनी आत्मीय संवेदना और विचार समर्पित किए हैं। उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़िवादी परंपरा के गुण-दोषों का चित्र अपनी रचनाओं के माध्यम सेप्रस्तुत किया है। परिवार की सबसे छोटी इकाई व्यक्ति से लेकर सम्पूर्ण भावी सामाजिक,राजनैतिक , सांस्कृतिक विकृतियों को उन्होंनें साहित्य में स्थान दिया।

[1]वनजा, के, चित्रा मुद्गल: एकमूल्यांकन. नई दिल्ली : सामायिक बुक्स. संस्करण, 2016, पृष्ठ 184

आधुनिक युग समस्या प्रधान युग है। वर्तमान समाज के पास कई ज्वलंत समस्याएँ हैं। किसी भी देश के समाज व उसके रीतिरिवाजों, संस्कृतियों व परम्पराओं को उसके इतिहास एवं साहित्य के माध्यम से ही अध्ययन और प्रस्तुत किया जा सकता है। लेखिका ने इसी विचारधारा को केंद्र में रखकर अपनी कहानियों, उपन्यासों, नाटकों के माध्यम से अपने व्यक्तित्व एवं रचनाधर्मिता का परिचय दिया है। गद्य साहित्य में लेखिका चित्रा मुद्गल के एक दर्जन से भी अधिक कहानी संग्रह और चार उपन्यास, आठ बालकथा संकलन, तीन बाल उपन्यास आदि ने इनकी प्रतिभा में चार चाँद लगा दिए हैं। किसी भी रचनाकार के व्यक्तित्व और रचनाधर्मिता केआधार पर उनकी रचनाओं का मूल्यांकन और विश्लेषण करके ही शोध किया जा सकता है। इसलिए साहित्यकार की रचनाधर्मिता और रचनात्मक कार्य का अध्ययन करने के लिए उसकी रचनाओं पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। चित्रा मुद्गल के रचनात्मक साहित्य के सन्दर्भ में रीता सिन्हा कहती हैं कि, " **चित्रा मुद्गल के सर्जनात्मक रचना संसार में मानवीय प्रश्नों के लिए आकुलता है। भूमंडलीकरण और उत्तर आधुनिकता के इस दौर के कई ज्वलंत, मानवीय, सामाजिक और सांस्कृतिक और अपनी रचनाओं के सौन्दर्यशास्त्र का परिचय दिया है**।"[1]

आधुनिक युग में भूमंडलीकरण और बाजारीकरण के चलते आज मनुष्य  सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पाश्चात्य वस्तुओं एवं रहन सहन का अनुसरण और उपभोग कर रहा है। आर्थिक और सामाजिक संवेदनशीलता का आभाव आज वर्तमान भारतीय समाज में देखने को मिल रहा है। "**मनुष्य–मनुष्य के बीच मानवीय रिश्तों के संबंधो में जो शिथिलता और टूटन देखने को मिल रही है। उसके कारण मानवीय मूल्यों और रिश्तों नातो के जो मायने बदल गए है, इन सभी तथ्यों को इनकी रचनाओं में देखने को मिलता है**।"[2] फैशन और उपभोक्तावादी प्रवृत्ति इस समाज का मूलभूत अंग बन गयी है। राजनीति, स्वार्थनीति सत्तालोलुपता

---

[1]फरहत परवीन, (सं.). आजकल, अंक नबंवर,2016,पृष्ठ 57

[2]वनजा, के.. चित्रा मुद्गल : एक मूल्याकंन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स,2016 पृष्ठ 114

और अनैतिकता का साम्राज्य फैल गया है। इन्हीं सभी बिन्दुओं का चिंतन इनकी रचनाओं की प्रमुख विशेषता है। अपने रचनात्मक कर्म में समाज के सभी पक्षों का चित्रण करने वाली चित्रा मुद्गल पर कुछ विद्वान सिर्फ स्त्री-विमर्श की लेखिका और सिर्फ स्त्री के यहाँ तक ही सीमित मानते हैं। लेकिन इनका रचनात्मक कर्म स्त्री विमर्श से आगे निकलकर समस्त मानवीयता को आत्मसात करता दिखाई देता है।

चित्रा मुद्गल की रचनात्मक प्रक्रिया का अध्ययन करने के लिए उनके प्रमुख कहानी संग्रहों का अध्ययन करना तर्क संगत रहेगा। अतःइन प्रमुख कहानियों के आधार पर ही उनकी रचना धर्मिता को जानने का प्रयास किया गया है। प्रमुख कहानी संग्रह में '**ग्यारह लम्बी कहानियाँ**' सन् 1986 प्रभात प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित है। जिसकी प्रमुख कहानियाँ '**दुलहिन**', '**शून्य**', '**दशरथ का वनवास**', '**केचुल**', '**बंद**' आदि है। इन कहानियों में लेखिका की साहित्यिक साधना का उद्देश्य और समकालीन परिवेश में घटित घटनाओं का व्यापक चित्र देखने को मिला है। बाजारीकरण के चलते परिवारिक रिश्तों में जो मतभेद हो गया और आधुनिकता के चलते मनुष्य जितना कुण्ठाग्रस्त व तनावग्रस्त हो गया है। इन सभी बिन्दुओं का व्यापक विश्लेषण भी देखने को मिलता है। '**दुलहिन**', '**दशरथ का वनवास**' आदि कहानियाँ पारिवारिक मतभेद एवं पिता-पुत्र संबंध को दर्शाने में सफल मानी जा सकती हैं। स्त्रीवादी चिंतक के. वनजा के अनुसार चित्रा मुद्गल के साहित्य में "**समाज के बदलते परिवेश के कारण व्यक्ति के मानवीय संबंधो में जो शिथिलता आ गई है। एक ओर उसका खुलासा ओर उनका यथार्थ देखने को मिलता है तो दूसरी ओर निम्नवर्गीय जीवन का यथार्थ**।"[1] 'बंद' कहानी देशकालीन और समकालीन राजनीति के खोखलेपन को बड़े ही मार्मिक ढ़ग से प्रस्तुत करती है। शहर में जब भूख हड़ताल या बंद का आह्वान किया जाता है तो उसका प्रभाव आम आदमी पर क्या और किस प्रकार पड़ता है ? यह '**बंद**' कहानी के माध्यम से समाज के सामने लाने का प्रयास किया गया है। जब शहर में बंद या भूख हड़ताल चलती है तो उसका निम्न

---

[1]वनजा, के.. चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016 पृष्ठ 114

वर्गीय मजदूर के परिवारों पर क्या प्रभाव पड़ता है कितने दिन उन्हें भूखे रहना पड़ता है इन सभी सामाजिक पक्षों का व्यापक चित्रण किया गया है।परिवार को केंद्र में रखकर उनके संबंधो में आ रही टूटन और शिथिलता का एक व्यापक चित्र प्रस्तुत करने का अथक प्रयास भी इनकी रचनाओं में देखने को मिलता है।

सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों के प्रति व्याप्त संवेदना और करुणा ही लेखिका को सामाजिकता एवं मानवीयता के सरोकारों से जोड़ती हैं। बहुमुखी व्यक्तित्व की धनी चित्रा मुद्गल ने अपनी साहित्यक लेखनी के माध्यम से समाज के किसी एक पक्ष को केंद्र में नहीं रखा बल्कि उन्होंने सामाजिक, आर्थिक,राजनैतिक व पारिवारिक संबंधो आदि सभी पक्षों को अपनी रचना प्रक्रिया का अंग बनाया है। सन् 1887 में प्रभात प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित '**इस हमाम**' कहानी संग्रह में संग्रहित कहानियाँ '**भूख**', '**अपने अपने गिरेवान**','**होना संपादक की पत्नी**' आदि प्रमुख कहानियों के माध्यम से उन्होंनें गरीबी और बेरोजगारी जैसी समस्याओं को सामने लाने का प्रयास किया है। '**भूख**' कहानी की पात्र इन्ही समस्याओं के चलते गरीब और लाचार स्त्री लक्ष्मी को अपने बेटे के लिए एक भिखारिन को देने के लिए मजबूर होना पड़ता है। अशिक्षा और बेरोजगारी जैसी समस्याओं को केंद्र में रखकर उनकी '**चेहरे**' नामक कहानी लिखी गयी है। इस कहानी में लेखिका ने उन भिखारियों एवं जेबकतरों के अपराधिक कार्यो एवं वैश्यावृति के यथार्थ को सामने लाने का प्रयास किया है। जिन लोगों को कानून व्यवस्था के अन्दर के लोगों के द्वारा स्वार्थ पूर्ति का माध्यम बनाकर असमाजिक कार्यों में लिप्त कर दिया जाता है, और यह लोग अपराधिक कार्यो में लिप्त हो जाते हैं। एक बार इन कार्यों में लिप्त हो जाने के बाद उनसे बाहर नहीं आ पाते। '**होना संपादक की पत्नी'** कहानी लेखिका के स्वयं जीवन अनुभव और यथार्थ को व्यक्ति करती कहानी है । इनके पति अवधनारायण मुद्गल जो संपादक थे। उनके रहते लोग किस प्रकार अपनी रचनाओं को प्रकाशित कराने हेतु लेखिका को मान सम्मान देते थे और अपनी रचनाएँ छपवाने की अपील करते थे। व्यग्यात्मक तरीके से लिखी गई इस कहानी में बताया गया है कि समाज में लोग किस प्रकार अपनी

स्वार्थवृत्ति को अपनी प्रतिभा का माध्यम बनाते हैं। '**अपने अपने गिरेबान**' कहानी में उच्चवर्गीय समाज का पारिवारिक एवं सामाजिक व्यवहार कैसा होता है। समाज में शोषित और अपने घर की महिलाओं के प्रति यह लोग किस तरह का रवैया अपनाते है। इस यथार्थ को समाज के सामने लाने का प्रयास यहाँ पर लेखिका ने किया है।

'**वाइफ स्वैपी**' जैसी कहानी में आज के आधुनिक मनुष्य के सामाजिक मूल्य पर बात की जाती है, जिसके सन्दर्भ में मीना जाधव ने कहा है कि,"**आधुनिकता के नाम पर 'बाइफ स्वैपी' जैसा खेल खेलते हैं और घर आकर पति-पत्नी दोनो ही एक दूसरे के प्रति एकनिष्ट होने की कसमें खाते हैं ताकि घर की शांति बनी रहे।**"[1] आधुनिकता के नाम पर आज व्यक्ति पारिवारिक पति-पत्नी के रिश्ते को भी भूल गया है। प्रत्येक दिन कुछ नया पाने की चाहत ने मनुष्य को अंधा बना दिया है।

कहानी '**जगदम्बा बाबू गांव आ रहें है**' सन् 1989 में नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली से प्रकाशित कहानी संग्रह में सम्मलित कहानियाँ '**स्टेपनी**', '**मुआवजा**', '**सौदा**', '**प्रमोशन**', '**जिनावर**', '**जगदम्बा बाबू गाँव आ रहें हैं**' आदि प्रमुख हैं । इन कहानियों में उन्होंने नगरीय जीवन की नौकरीपेशा नारी के यथार्थ को सामने लाने का प्रयास किया है। यहाँ पर एक ऐसी स्त्री की शंकालू प्रवृति को चित्रित किया है जो एक स्त्री होते हुए भी अपने घर में काम करने वाली 'बाइयों' को शंकाभरी नजरों से देखती है। नौकरीपेशा स्त्रियों की शंकालू मानसिकता का चित्रण यहाँ देखने को मिलता है।

समाज में व्याप्त पितृसतात्मक व्यवस्था के लोगों के यथार्थ का इनकी कहानियों में देखने को मिलता है। '**मुआवजा**' कहानी की पात्र 'शैलु' हो या '**प्रमोशन**' कहानी की पात्र 'ललिता' दोनोंनौकरी पेशा हैं। शैलु का पति उसके मरने के बाद शासन द्वारा मिले मुआवजे पर हक जताने

[1] जाधव, मीना. डॉ. इरेश स्वामी. (शोध प्रबंध). चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001, पृष्ठ 28

लगता है। लेकिन जीते जी शैलु उसके पास भी नहीं रही। ललिता जो अपनी मेहनत से पदोन्नती पाती है लेकिन उसके पति सुभाष की धारणा हमेशा यही रहती है कि शायद ललिता का प्रमोशन उसकी देह के आधार पर हो गया होगा। सुभाष कहता है कि देखिए," **कोठारी तुम पर इतने मेहरवान क्यों हैं। इस कंपनी में नौकरी करते हुए तुम्हें तीन साल भी पूरे नहीं हुए। तीन साल मे इतना वड़ा प्रमोशन विभाग में तुम्हारी बनिस्वत अनेक वरिष्ठ अनुभवी योग्य व्यक्ति पड़े हुए है।**"[1] पुरूष समाज के द्वारा एक स्त्री की प्रतिभा को उसके शरीर के आधार पर देखना पुरूषों की संकुचित एवं रूग्ण मानसिकता का परिचय यहॉ पर देखने को मिलता है।

'**सौदा**', '**स्टेपनी**', '**अढ़ाई गज की ओढनी**' आदि कहानियों में गांव की भोली-भाली लड़कियों को काम का लालच देकर देह व्यापार मे धकेलने वाले दलालों की बात की गई है। वहीं 'अढाई गज की ओढनी' में शहरी जीवन में टी.वी. सिनेमा आदि के जो प्रभाव बच्चों पर पड़ रहे हैं,उसको यथार्थतःअंकित करने में लेखिका सफल रही हैं। सबसे अलग एक विशेषता यह है कि उनकी कहानियों में सिर्फ मानवीय सम्बन्धों पर ही बात नहीं की गई है बल्कि उन्होंनें पशु-पक्षिओं के प्रति भी अपनी सहानुभूति दिखाई है। प्रकृति के साथ मानवीय संबंध स्थापित करते हुए उन्होंने '**जिनावर**' कहानी के माध्यम से पशु-पक्षियों एवं मानव का रिश्ता अटूट होने की स्थापना की है।

राजनैतिक लोगों के खोखलेपन और विकलांगों के प्रति झूठी दिखावटी सहानुभूति दिखाने वाले लोगों के यथार्थ को भी लेखिका ने समाज के सामने लाने का प्रयास किया है। '**चेहरे**', 'भूख', '**मुआवजा**', '**जगदम्बा बाबू गांव आ रहे है**' आदि प्रमुख कहानियाँ जिनके माध्यम से लेखिका ने समाज में व्याप्त पितृसतात्मक व्यवस्था का विरोध किया है। '**जगदम्बा बाबू गांव आ रहे हैं**' कहानी में राजनैतिक स्वार्थों का चित्रण किया है जिसके चलते विकलांगों के प्रति झूठी सहानुभूति जताई जाती है। लेखिका ने अपने रचनाओं में चित्रित पात्रों के सन्दर्भ में कहा है कि, "**मुझे लगता था कि ये लोग मेरे ही गांव के पियारे और चौधरी है जो कहीं विस्थापित होकर रोजी-रोटी**

[1] वनजा, के. चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स,2016 पृष्ठ 151

**की तलाश में मुंबई पहुंचे हैं जो यहाँ फैक्टरी मजदूरों तिपहिया चालको टैक्सी ड्राइवरों दिहाड़ी पर बोझा ढोने वाले और दूधवाले भैया की शक्ल में नजर आते हैं।**"[1] लेखिका अपनी रचनाओं मे गांव कस्बों के लोगों की छवि शहरी क्षेत्र बम्बई के लोगों में देखती हैं। चित्रा मुद्गल की कहानियों का उद्देश्य घर से लेकर समाज और सत्ता तक लोकतांत्रिक परिवेश का सृजन करना है। इनकी कहानियों में सिर्फ परिवार का विघटन ही नहीं हैं बल्कि परिवार के संतुलन की साधना भी है। स्त्री वर्ग तथा मजदूर वर्ग में कुंण्ठा ग्रस्त व्यक्तियों के जीवन पर भी प्रकाश डाला गया है।

राजनैतिक स्वार्थवृति पूँजीवादी समाज का स्त्रियों एवं मजदूरों के प्रति रवैया चाहे वह स्त्री एक भिखरिन हो नौकरी पेशा या फिर देह व्यापार करने पर मजबूर व बाइफ स्वैपी जैसे असमाजिक कार्यों मे लिप्त होने पर मजबूर। भारतीय समाज के छोटे से छोटे मानव का यथार्थ इनकी कहानियों में देखने को मिलता है। चित्रा मुद्गल का मानना है कि परिवर्तन जो प्रकृति का नियम है लेकिन परिवर्तन इतना हो कि जिससें मानवीय मूल्यों का विघटन न हो बल्कि सामाजिक मूल्यों का अस्तित्व बना रहे।

आधुनिकता के चलते आज मनुष्य एक रोबोट हो गया है। आधुनिक जीवन के बदलते परिवेश के सन्दर्भ में चित्रा मुद्गल कहती हैं कि "**प्रतिस्पर्धी समय में अभिभावक बच्चों के बुद्धि विकास और सुनहरे भविष्य के नाम पर उन्हें ऐसी पुस्तकें खरीदकर देना पसंद करते हैं जो उन्हें कैरियर ओरिएंटेड बनाए जो उन्हें मनुष्य कम रोबोट अधिक बनाता है।**"[2] चित्रा मुद्गल ने अपनी कहानियों में आधुनिक मानव सभ्यता की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक , सांस्कृतिक पक्षों की प्रवृत्तियों का चित्रण तथा व्यापक विश्लेषण अपने रचनात्मक कौशल भी किया है। कहानियों के अलावा उपन्यास लेखन में भी लेखिका अपने व्यापक अनुभव और संवेदना को व्यक्त करने में सफल दिखाई देती हैं। जनता के मानसपटल पर आकर्षक और चका-चौंध प्रस्तुत करने वाले विज्ञापन जगत में किस तरह एक स्त्री को माध्यम बनाकर उसका प्रयोग किया जाता है। इसका व्यापक चित्र चित्रा

---

[1]मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 37

[2]मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 16

मुद्गल ने अपने उपन्यास '**एकजमीन अपनी**' में प्रस्तुत किए है। चित्रा मुद्गल ने इस सन्दर्भ में कहा है कि "**विज्ञापन जगत बड़े कौशल से आधुनिकता बोध की आड़ में आधुनिक जीवन शैली के प्रलांभनों को परोस उसे शार्टकट के रास्ते सिखा देह की सजा से मुक्ति देने की बजाय उसे पुनः देह की परिभाषा में ही कैद कर रहा है**।"[1] इस उपन्यास में दो स्त्री पात्रों अंकिता और नीता के माध्यम से की उपन्यास की कथा बुनी जाती है।

विज्ञापन कंपनियों से जुड़कर काम करने वाली अंकिता अपनी सामाजिक मर्यादाओं को ध्यान में रखकर ही काम करती है। लेकिन नीता अपनी देह को उसी के आगे परोस देती है, जो उसकी सहायता करता है। अंकिता की प्रतिभा को समझ भोजराज जैसे व्यक्ति उसकी मदद करते हैं। नीता छद्मरूपी व्यक्तियों की बातो मे आकर स्वयं को नष्ट कर लेती है। उपन्यास मे प्रतिभा और प्रतिष्ठा को अलग-अलग प्रकार से देखा गया है। एक अपनी मेहनत से प्रतिष्ठा पाती है और दूसरी अपने शरीर का सहारा लेती है और अन्त मे अंकिता अपनी प्रतिभा के आधार पर अपने अंदर की स्त्री का परिचय देकर पुरूषत्तात्मक समाज को चुनौती देती है।

उपन्यास में सुधांशु जो अंकिता का पहला पति है लेकिन वह अंकिता के ऊपर अपना पूरा हक़ जमाना चाहता है। अंकिता को जब यह सब स्वीकार नहीं होता तो वह जबाब देते हुए कहती है कि, "**धर्म शाला कि तख्ती आज से मेरे घर के दरवाजे पर नहीं टंगेगी...........मैं सिर्फ गृहणी ही नहीं हूँ एक स्त्री भी हूँ...........सुबह से रात के बीच कोई एक क्षण ऐसा नहीं हो सकता जिसमें मैं नितांत अपने लिए जी सकूँ कागज कलम बैठ सकूँ जो पढ़ना चाहती हूँ पढ़ सकूँ............लिखना चाहती हूँ लिख सकूँ**।"[2] स्त्री संबंधी सभी बिंदुओं का व्यापक विश्लेषण इस उपन्यास में देखने को मिलता है। इसलिए कहा जा सकता है कि यह एक स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व एवं उसकी अपनी जमीन की तलाश का दस्तावेज है।

---

[1]मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 39

[2] मुद्गल, चित्रा. एक जमीन अपनी. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2001, पृष्ठ 16

'**एक जमीन अपनी**' विज्ञापन जगत की सचाई का यथार्थ हैं तो '**आवां**'उपन्यास स्त्रीविमर्श और निम्नवर्गीय मजदूर जीवन का सशक्त और जीवंत दस्तावेज़ है। यह उपन्यास स्त्री एवं निम्नवर्गीय मजदूरों की दारूणदशा के यथार्थ का चित्रण करता है। पूँजीपति लोग दिन-प्रतिदिन मजदूरों का शोषण कर रहे हैं। औद्योगिकीकरण के कारण पूँजी कुछ खास लोगों के यहाँ ही एकत्रित हो गई। जिन लोगों के पास पूँजी होती है वहाँ अन्याय होने के ज्यादा अवसर हैं। मजदूरों व कर्मचारियों को अपने अधिकारों की लड़ाई इन पूँजीपति लोगों से करनी पडती है। '**आवां**' उपन्यास में लेखिका की मार्क्सवादी विचारधारा देखने को मिलती है। "**मार्क्सवाद श्रमिकों और गरीबों के हक़ की लड़ाई लड़ने वाला दर्शन है। मार्क्सवाद मजदूरों पर होने वाले अन्याय, अत्याचारों एवं शोषण के चंगुल से बाहर निकालकर उन्हें उनके हक़ और न्याय दिलाने की बात करता है**।"[1] संगठित होकर पूँजी के समान बँटवारे के लिए लड़ना होगा। यह विचार '**आवां**' उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने समाज के सामने प्रस्तुत किया है। समानता की भावना से ओत-प्रोत होकर '**आवां**' उपन्यास सच में उन मजदूरों की कथा है, जो संगठन बनाकर पूँजीपति मिल मालिकों से अपने हक की लड़ाई लडते हैं।

'**आवां**' उपन्यास लेखिका चित्रा मुद्गल के जीवन के स्वयं का अनुभव और देखा हुआ यथार्थ दिखाई देता है जिसके सन्दर्भ में लेखिका स्वयं कहती हैं कि,इस ऐतिहासिकता का प्रमाण क्यों में लेखिका द्वारा प्रस्तुत उनके घर से दिखनेवाली बस्तियों की जिंदगी। "**ट्रेड यूनियन के दफ्तर 'जागरण' में मीराबाई और डॉ. दत्ता सामंत से मिलकर उन्होंने काम किया। इंडियन लिंकचेन के तालाबंदी के सिलसिले में जो भी घटनांए घटित हुई उनमें मीराबाई की दारूण हत्या इस उपन्यास को और भी प्रमाणित करती है**।"[2] लेखिका ने अपने आस-पास व स्वयं के

---

[1]लक्ष्मण, संतोष कुमार, डॉ. यशवंतकर. मार्क्सवाद और प्रगतिवादी काव्य. कानपुर : विकास प्रकाशन, 2011, पृष्ठ 7

[2]वनजा, के. चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016, पृष्ठ 41

जीवन की उन समस्त घटनाओं को बड़े ही स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत किया है,जिनको देखकर उनके अन्दर की मानवीयता एवं सामाजिक मूल्यों के प्रति कारूणिक संवेदना उनकी रचनाधर्मिता द्वारा अभिव्यक्त होकर  साहित्य में व्यक्त होती दिखाई देती है।

चित्रा मुद्गल आवां उपन्यास की पात्र नमिता के माध्यम से 'श्रमजीवा' संस्था का संचालन समाजवाद एवं मानवीय मूल्यों की सराहना करती हैं। 'श्रमजीवा' संस्था तथा शाहबेन के जरिये समकालीन संदर्भ में गांधीवादी चिंतन की प्रासंगिकता पर विचार करने के साथ स्त्रियों एवं दलितों के उद्धार के लिए गांधी की सजगता भी उपन्यास में अभिव्यक्त की गई है। उपन्यास में पवार जैसे व्यक्तियों के माध्यम से लेखिका स्वार्थ और खोखलेपन पर आधारित राजनीति का पर्दाफाश करती हैं। पवार दलित होने का नाटक करता है और नमिता से शादी करना चाहता है। शादी वह वोट बटोरने के लिए करना चाहता है ताकि सवर्ण और दलितो के वोट उसे मिल सके। राजनीति का यह षड़यत्र समाज एवं देश दोनों के लिए हानिकारक सिद्ध होता है।

साहित्यकार के रूप में लेखिका एक समाज सेविका पत्नी एवं एक ममतामयी माँ के रूप मे सफलता पूर्वक अपना कर्तव्य निभाते हुए समाज के लोगों को चेतना संपन्न बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करती हैं। '**आवां**' उपन्यास मजदूरों के शोषण एवं उन पर हो रहे अत्याचारों की बात करता हैतो दूसरी तरफ स्त्रियों के ऊपर हो रहे यौन शोषण की भी बात करता है। नमिता, किशोरीबाई, स्मिता आदि पर हुए शोषण को भी यथातथ्य सहित प्रस्तुत करने में लेखिका सफल हुई हैं। भारतीय समाज में स्त्रियों की क्या दशा है? चाहे वह राजनीति हो या समाज स्त्री का शोषण ही हो रहा है। '**आवां**' उपन्यास में व्याप्त संवेदनाएँ लेखिका की रचनाधर्मिता मे चार चाँद लगा देती हैंऔर बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्तित्व को और भी बड़ा बना देती है। स्त्रियों की शिक्षा रोजगार व उनके संघर्षो की लड़ाई की बात यहाँ पर की जाती है।

‘**गिलिगडु**' उपन्यास वृद्ध विमर्श का व्यापक चित्रण करता एवं सहानुभूति पूर्ण उपन्यास है। यह उपन्यास ‘एक जमीन अपनी’,‘आवां’ से अलग उपन्यास है, जिसमें अपने ही परिवार से शारीरिक मानसिक रूप से कमजोर वृद्धों को अपने ही घर से मानसिक और शारीरिक आधार पर निष्कासित कर दिया जाता है। आधुनिकता और भूमण्डलीकरण के इस दौर में आज मनुष्य ‘उपयोग करो फेंक दो’ की प्रवृत्ति अपना रहा है। उपन्यास की सम्पूर्ण कथा में रिटायर्ड सिविल इंजीनियर जसवंत सिंह और रिटायर्ड कर्नल विष्णु नारायण स्वामी के माध्यम से लेखिका ने वृद्ध जीवन पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। अपने जीवन के जिन अंतिम दिनों में प्यार और सहानुभूति की जरूरत होती है। उन्हीं अंतिम दिनों में उनको अपनी ही संतान स्वीकारने में समर्थ नहीं होती। जीवन की सारी खुशियाँ जिन बच्चों के पालन पोषण में व्यक्ति लगा देता है उन्हीं माता-पिता को अपने बुढ़ापे के दिनों में असहाय और बेसहारा लोगों जैसा जीवन यापन करना पड़ता है। अपनी पत्नी के मृत्यु के बाद रिटायर्ड कर्नल साहब  दिल्ली बड़ी ही उत्सुकता के साथ जाते हैं और सोचते हैं कि बहु और बेटे के पास कुछ दिन अच्छे से रहेगें। पिता के दिल्ली आने परपिता जसवंत सिंह को कुत्ते के साथ रहना पड़ता है। बेटे नरेंद्र और बहू ने घर की जिम्मेदारी सौपकर उन्हें घर के कामों में शामिल तो किया लेकिन कुछ दिन बाद वह अपने आप को सिर्फ टामी तक ही सीमित पाते हैं। अपने पोते मलय-निलय से भी बात नहीं कर पाते। दिल्ली में ही कर्नल साहब से परिचय हुआ दिल्ली उन्होंनें ही घुमाया सिनेमा ले गए अपने परिवार की पोतिया गिलिगडु से भी परिचय कराया। जसवंत सिंह का कर्नल साहब को अनेक प्रकार से खुश रखने का प्रयास रहता है। लेकिन अपने बहु बेटे का प्यार जसवंत सिंह को नहीं मिलता।

जीवन के अंतिम दिनों की इस अवस्था में वृद्ध लोगों को अपनों की जरुरत होती है लेकिन आज की संतान उन्हें अकेला छोड़ देती है। समाज के ऐसे लोगों के प्रति चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास में संवेदना एवं सहानुभूति प्रकट की है। आज माता पिता ने अपने बच्चों को जो नहीं दिया वह बच्चों को याद रहेगा और जो दिया है उसकों याद करने में बच्चें समर्थ नहीं है। क्यों नहीं दिया यह सोचने के लिए संतान तैयार नहीं ?

आधुनिक युग भूमंडलीकरण और बाजारीकरण का युग है। आज लोग विदेशी परम्परा खान-पान को अपना कर अपनी मूल संस्कृति एवं रीतिरिवाजों को दरकिनार करते जा रहें हैं। सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों के विघटन की व्याकुलता ही इस उपन्यास को सामाजिक सरोकारों से जोड़ती है। राजनैतिक लोग राम खिलावन जैसे व्यक्ति सुनगुनियां के माध्यम से दलित और निम्नवर्गीय लोगों के वोट बटोरना चाहते हैं। राजनीतिक लोगों का यह षड़यंत्र उनको सिर्फ गरीब लोगों के वोट तक ही सीमित रखता है। जनता के कष्टों–दुखों से उनको क्या मतलब जनता उनके लिए सिर्फ वोट बैंक है और वोट बैंक रूप में ही उनका प्रयोग किया जाता है। उपन्यास मे सिर्फ वृद्ध लोगों के प्रति संवेदना व्यक्त नहीं है बल्कि समाज में दबे,कुचले,बेसहारा, अभावग्रस्त व सुनगुनिया जैसे मध्यम,निम्नवर्गीय एवं विधवा नारी जीवन की अनेक समस्याओं का चित्रण भी देखने को मिलता है। उपन्यास में स्त्री कलाकारों के जीवन पर भी लेखिका ने प्रकाश डाला है। स्त्री की प्रमुख समस्या पर बात करते हुए इस उपन्यास में दिखाया गया है कि एक स्त्री की शादी हो जाने के बाद उसको किस तरह कला जगत को छोड़ना पड़ता है। अपनी अकांक्षाओं, सपनों को चूर-चूर कर सिर्फ घर की चारदिवारी में ही कैद रहना पड़ता है और साथ में ऐसे गुरुओं पर भी व्यंग्य किया है जो कला के नाम पर स्त्री का शोषण कर रहे होते हैं।

चित्रा मुद्गल का साहित्य सभी प्रकार से मानवीय संवेदनाओं को व्यक्त करता है। भारतीय समाज मे चाहे वह स्त्री हो या मजदूर या फिर वृद्ध उन्होंने सभी को मानवीयता की दृष्टि से देखकर अपनी लेखनी का विषय बनाया है। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' में किन्नरों के दुःख दर्द को व्यक्त करता यह चित्रा जी का अलग प्रकार का उपन्यास है। कहानी व उपन्यास के अतिरिक्त लेखिका चित्रा मुद्गल ने बाल उपन्यास जैसे '**असफल दापंत्य की कहानियाँ**', '**टूटते परिवारों की कहानियाँ**', '**दूसरी औरत की कहानियाँ**' आदि का संपादन किया है। इन कहानियों के माध्यम से परिवारिक संबंधो में शिथिलता व कुण्ठित मानसिकता का चित्रण किया है, जिसके चलते पति-पत्नी और परिवार के संबंध टूट जाते हैं और इन्हीं टूटते रिश्तों में दूसरी औरत का आना स्वाभाविक है।

बाल उपन्यास '**माधवी कन्नगी**' के माध्यम से इसके प्रमुख नायक और नायिका 'माधवी','कन्नगी' व 'कोलवन' के त्रिकोणीय प्रेम को दर्शाया गया है। उपन्यास के पात्रों के माध्यम से इस उपन्यास में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में वर्तमान सामाजिक समस्याओं की प्रतिछाया अंकित की गई है। उपन्यास में चोल राज्य की राजधानी कावेरी पट्टणम के प्रसिद्ध व्यापारी मानाइहन की वेटी कन्नगी की शादी इसी नगर के व्यापारी चोटिपार मासातुवान के पुत्र कोलवन के साथ होती है। कोलवन उसी नगर की नर्तकी माधवी के सुन्दर रूप और सुन्दरता और उसकी नृत्य कला पर मोहित हो जाता है और कन्नगी के जीवन सर दूर जाने लगता है। उसी बात पर कन्नगी चिन्ता व्यक्त करते हुए कहती है, "**हे सखी मेरे आँसुओं और आहों से तो ईश्वर का भी मन नहीं पिघलता। शायद वह तुम्हारी ही प्रार्थना सुन ले। जीवन में ईश्वर के सिवा अब आसरा ही किसका है**।"[1]

उपन्यास में भारतीय समाज और स्त्री को चित्रित करते हुए उसको एक सच्ची एवं संस्कार से परिपूर्ण बताने का प्रयास किया गया है। कन्नगी अंत तक अपने आचरण सत्य को नहीं छोड़ती। जीवन में बहुत सी समस्याओं के बाद भी जब कोलवन को माधवी द्वारा प्रताड़ित घायल कर दिया जाता है इसके पश्चात्य माधवी कोलवन को शरण देकर सेवा द्वारा नवजीवन देती है। कन्नगी के सतीत्व को कोलवन पहचान लेता है। स्त्री की छमाशीलता व उसके सच्चे अर्थो में कन्नगी कोलवन से कहती है, "**जो वीत गया। उसे भूल जाइए। मेरे मन मे आपके लिए मलाल नहीं है। क्षमा मांगकर मुझे लज्जित न करें स्वामी**।"[2] 'माधवी कन्नगी'बाल उपन्यास के माध्यम से एक निष्ट प्रेम और पति-पत्नी के रिश्ते और एक स्त्री के व्यक्तित्व को सामने लाने का प्रयास भी किया है। चित्रा मुद्गल ने समाज के प्रत्येक वर्ग के प्रति अपनी लेखनी चलाई है।

समाज में स्त्री, पुरूष,वृद्धों से लेकर बच्चों के मनोरंजन व उनकी समझ विकसित करने के लिए बाल उपन्यास संकलन भी प्रस्तुत किए हैं। बच्चों के लिए '**जंगल का राजा**', '**देश देश की**

1 मुद्गल, चित्रा. माधवी कन्नगी. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 1993, पृष्ठ 12

2 वही, पृष्ठ 34

**लोक कथाएँ**', '**नीति कथाएँ**' जिनमें बच्चों के मनोरंजन एवं उनकी भावी सुन्दर भविष्य की कल्पना की है। चित्रा मुद्गल द्वारा लिखित व संपादित कहानी संग्रह, उपन्यास, बाल कथा संकलन, नाटक, बाल उपन्यास, संपादित कहानियों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वह किस प्रकार की रचनाकार हैं। कुछ लोग उन्हें सिर्फ स्त्रीवादी लेखिका की श्रेणी में गिनते हैं,लेकिन चित्रा मुद्गल साहित्य की कसौटी पर एक सफल साहित्यकार, समाज सेविका तथा सफल पत्नी एवं माँ के रूप में अपना कर्तव्य सफलतापूर्वक निभाती हैं। इसी के साथ वह सामाजिक चेतना को संपन्न बनाने का महत्वपूर्ण कार्य कर रहीं हैं।

## चित्रा मुद्गल : प्रस्तुत रचना प्रक्रिया के सूत्र

लेखिका चित्रा मुद्गल ने अपने समकालीन समय एवं समाज को साथ में लेकर साहित्य लेखन किया है। अपने रचनाकर्म के माध्यम से लेखिका ने निम्न वर्ग, दलित, मजदूर, कामकाजी स्त्री,और विज्ञापन जगत की सच्चाई को साथ लेते हुए सामाजिक भेदभाव के शोषण को चित्रित करते हुए समाज के सामने लाने का प्रयास किया है। समकालीन एवं आधुनिक समाज में व्याप्त पुरातन रूढ़ियों का उन्होंने विरोध किया है। पित्तृसत्तात्मक व्यवस्था की मानसिकता के दुष्प्रभाव को कारण बताते हुए लेखिका ने कहा है कि समाज में आज जिनते भी भेदभाव देखने को मिलते है उन सबका कारण समाज की पुरातन मानसिकता है। सामाजिक और वर्गीय भेदभाव की यह मानसिकता सामाजिक सरोकारों को आत्मसात करने में समर्थ दिखाई नहीं देती।

चित्रा मुद्गल के रचनात्मक साहित्य लेखन के आधार पर कहा जा सकता है कि लेखिका ने हमेशा समाज के स्त्री, दलित, शोषित और वंचित वर्गों को अपनी रचना प्रक्रिया में शामिल किया है, जिन्हें समाज व परिवार द्वारा बहिष्कृत करके जबरन हाशिये पर धकेल दिया गया है। प्रस्तुत रचना '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' के सूत्र समाज के वंचित शोषित वर्गों की आवाज बनकर

समाज के सामने आते हैं। इस उपन्यास में लेखिका ने समाज के उस वर्ग का चित्रण किया है जिसकी पहचान गली की आमतौर की भाषा हिजड़े के रूप में होती रही है।

हिन्दी साहित्य में अभी तक कुछ ही उपन्यासों के माध्यम से इस किन्नर समुदाय की पीड़ा व दुख-दर्द की व्यथा को सामने लाने का प्रयास किया गया है। जैसे **प्रदीप सौरभ कृत 'तीसरी ताली', निर्मला भूराडिया कृत 'गुलाम मंडी', नीरजा माधव कृत 'यमदीप', महेंद्र भीष्म कृत 'मै पायल हूँ'** आदि उपन्यासों में किन्नरों के यथार्थ का चित्रण करने का कुछ प्रयास किया गया है। 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी' लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी उर्फ राजू की आत्मकथा है। यह आत्मकथा किन्नर समुदाय को एक नई दिशा प्रदान करती है। लक्ष्मी कहती है '**मैं सोई मुद्दत के बाद ऐसी नीद जिससे रश्क किया जा सके " इसी दिशा में मैं अपनी पहचान और हैसियत बनाऊँगी**।"[1] घर से निकलकर समाज के सामने एक उदाहरण के रूप में दिखाई देती हैं। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' एक ऐसा ही उपन्यास है, जिसकी रचना प्रक्रिया के सूत्र इसी किन्नर समाज के अनकहे, अनछुए सत्य के साथ मिलकर ही बनते हैं।

'**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास की रचना प्रक्रिया ऐसी विशिष्ट कथ्य शैली का निर्माण करती है जिसमें सामाजिक मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनशीलता उपन्यास को और अधिक रोचक बना देती है। समाज सरंचना व उसकी रूढ़िवादी मानसिकता के चलते किसी मनुष्य को समाज व परिवार से बहिष्कृत कर दिया जाता है। पुरातन मूल्यों पर आधारित यह समाज, जिसमें किसी व्यक्ति को सिर्फ शारीरिक लिंग दोष के कारण यह पीड़ा भोगनी पड़ती है। भारतीय संविधान में किसी भी व्यक्ति से उसकी जाति, धर्म, लिंग के आधार पर कोई भेदभाव न किए जाने की बात कही गई है। लेकिन समाज की वर्तमान स्थिति पर नजर डाले तो परिस्थिति इसके उलट है। वास्तव में संवैधानिक अधिकार प्राप्त हो जाने के बाद भी समाज का रवैया आज भी इनके प्रति बदला नहीं है।

---

[1] त्रिपाठी, लक्ष्मी नारायण. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी.नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2015, पृष्ठ कवर पेज

आज भी गली की गली के रूप में पहचाने जाने वाले लोगों के दर्द, संवेदना, उनकी पीड़ा, को ही समाज ने उनकी नियति बना रखा है।

उपन्यास में विनोद नामक पात्र के माध्यम से किन्नर समुदाय के वह तमाम प्रश्न पाठकों व समाज के सामने लेखिका ने लाने का प्रयास किया है, जिसको समझने में यह सभ्य समाज समर्थ नहीं है। उपन्यास की रचना प्रक्रिया कथा का ताना-बाना ऐसे बुना गया है, जिसमें माता-पिता के प्रति असंतोष होते हुए भी एक माँ के प्यार और व्याप्त सहानुभूति माँ-बेटे में घनिष्ट संबंधो का निर्माण करती है। " **जिस नरक में तूने और पप्पा ने धकेला है मुझे, वह एक अंधा कुआं जिसमें सिर्फ साँप-बिच्छू रहते हैं। साँप-बिच्छू बनकर वह पैदा नहीं हुए होंगे। बस इस कुएं ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया**।"[1] मानवीय मूल्यों के प्रति चिंता ने इस उपन्यास को संपूर्णता में सामाजिक,राजनैतिक, सांस्कृतिक सरोकारों को आत्मसात करने की शक्ति प्रदान की है। आधुनिक और नयी सोच का सूत्रपात इस उपन्यास में किया गया है। विनोद किन्नर होने की पीड़ा होते हुए भी वह सभ्य समाज द्वारा निर्मित सामाजिक बंधनों की जड़वादी मानसिकता को स्वीकार नहीं करता। वह पुरातन मूल्यों को तोड़ने की बात करता है। समाज ने किन्नरों के लिए जिन सामाजिक मूल्यों एवं आदर्शो को थोप रखा है उन सभी का विरोध इस उपन्यास का पात्र विनोद करता है और किन्नर समुदाय के लोगों को भो जागृत करता है। उपन्यास का पात्र विनोद स्वाभिमानी है, साथ ही साथ वह आत्मनिर्भर भी है। बेरोजगारी जैसी गंभीर समस्या पर भी इस उपन्यास में बात होती है। विनोद आत्मनिर्भर और शिक्षित बनना चाहता है और यही बात सम्पूर्ण किन्नर समुदाय के सामने रखता है।

इस उपन्यास के माध्यम से यह भी बताया गया है कि राजनैतिक लोग अपने स्वार्थ का माध्यम बनाते है और वोट की राजनीति करते है। इस आधार पर उन्हें सिर्फ समकालीन समस्याओं का सुलगता हुआ मुद्दा चाहिए होता है। वह माध्यम विनोद को बनाया जाता है। **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा'** उपन्यास के माध्यम से लेखिका कहना चाहती हैं कि शेष समाज चूँकि इनसे

---

1 मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2016, पृष्ट 11

कटा रहता है या कहें की खुद इन्हें वह मजबूर कर देता है। मुख्यधारा के समाज से अलग रहने के लिए। समाज में आज भी अनेक किन्नरों के प्रति समाज में अनेक प्रचलित पुरातन मान्यताएँ हैं। यदि हम किन्नरों से बातचीत करके उनकी समस्याओं से परिचित नहीं होंगे तो इनके प्रति नकारात्मक प्रचलित पूर्वाग्रह भी दूर नहीं होंगे। मुख्यधारा के समाज को उनसे बातचीत करना चाहिए इससे समाज के प्रति इनका रवैया बदलेगा और समाज के प्रति किन्नरों की मानसिकता भी बदलेगी। विनोद कहता है, "**कोसता तो मैं उन लोगों को भी हूँ बा, जिन्होंने मुझे हाशिये के इस नरक में वित्ताभर जगह टिकने के लिए मुहैया की है लेकिन इस सच से भी मुंह कैसे मोड़ लू और मोड़ भी नहीं पाता कि इस दुर्गति के पीछे उन्हीं का सच है।**"[1] उपन्यास में वह समस्त प्रश्नों का व्यापक चित्रण दिखाई देता है, जिसके संबंध में मानवीय सभ्यता हमेशा प्रश्न करती रहेगी।

एक लिंगदोषी बच्चें को बचपन से ही प्रेम और सहानुभूति के बदले उपेक्षा व तिरस्कार ही मिलता रहता है और इन लिंग दोषी किन्नरों के प्रति सरकार का भी विशेष ध्यान नहीं रहता। उपन्यास में विनोद किन्नरों के हित में कार्य करने के लिए सरकार से अपील करता है किन्नरों की अलग पहचान होनी चाहिए। उनको स्वतंत्र लिंग चुनने का अधिकार मिलना चाहिए। विनोद किन्नरों के मौलिक अधिकारों की बात भी करता है।

सरकार द्वारा आज भी किन्नरों को सार्वजनिक सेवाओं में जाने के लिए किसी प्रकार का विशेष प्रावधान नहीं किया गया है। उपन्यास में इस बात पर भी ध्यान दिया गया है कि किन्नरों को अभी तक कोई स्वतंत्र पहचान नहीं दी गयी है। किन्नरों को अभी न स्त्रीलिंग के रूप में मान्यता प्राप्त है न पुरुषलिंग के रूप में। सरकारी फार्म, शिक्षण संस्थाओं आदि में उनकी पहचान 'O' अर्थात 'अन्य' के रूप में ही दर्ज है। यह 'अन्य' वाली पहचान किन्नरों को समाज से अलग ही करती है। 'समानता के अधिकारों' के अनुसार किसी भी व्यक्ति से जाति ,धर्म,लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का कोई भी भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। विनोद शिक्षित है, आत्मनिर्भर है इसलिए वह सरकार

---

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन,2016, पृष्ठ 50

द्वारा किए गए लिंग निर्धारण को नहीं स्वीकारता है। वह 'अन्य (O)' के रूप में अपना आधार कार्ड बनवाने से इनकार करता हुआ कहता है।

लोकतन्त्रवादी व्यवस्था के इस देश में किन्नरों की अस्मिता का यह प्रश्न सिर्फ भारत का ही नहीं सम्पूर्ण विश्व की समस्या के रूप में मानवीय सभ्यता से प्रश्न करता है। शारीरिक दोष के रूप में जन्म लिया जिसके लिए किन्नर जिम्मेदार नहीं हैं बल्कि प्रकृति प्रदत्त दोष को भोगने को वह अभिशप्त हैं। माना कि किन्नर समाज उत्पादन में योगदान नहीं दे सकते लेकिन प्रेम, वात्सल्य से क्यों दूर रहें। वह भी आम इंसान की तरह प्रेम सहानुभूति के हकदार हैं। उपन्यास में इस बात का विरोध किया गया है कि जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि किसी व्यक्ति को सिर्फ लिंग दोष के कारण ही परिवार एवं समाज से बाहर निकाल दिया जाता है। किन्नरों के सन्दर्भ में उपन्यास में कहा गया है कि अन्य सामान्य लोगों की तरह  क्या किन्नरों के पास मस्तिष्क नहीं है, दिल नहीं है, धड़कन नहीं है, आँख नहीं है। सब अन्य लोगों की तरह ही है । सिर्फ यौन सुख लेने-देने से वंचित हैं।  इसका मतलब यह नहीं है कि किन्नरों के समाज एवं परिवार के वात्सल्य सुख से बंचित रखा जाए।

किन्नरों की दयनीय स्थिति को उपन्यास के माध्यम से समाज के सामने लाने का प्रयास किया गया है। इसमें किन्नर वर्ग के दैनिक जीवन के दुःख दर्द को आत्मसात करके मुख्यधारा के सभ्य समाज की मानवीयता को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। ट्रांसजेंडर कम्यूनिटी की आवाज और उसके अधिकारो की लड़ाई को एक अभियान की तरह समाज में पहुँचाने वाला यह उपन्यास चित्रा मुद्गल के शक्तिशाली व्यक्तित्व व इनकी रचनाधर्मिता को उभारने में सफल रहा है। इस उपन्यास की रचना प्रक्रिया किन्नर समाज के संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा और न्यायालय द्वारा दिये गए समानता के अधिकारों की रक्षा करना है। समाज, राज्य, देश  के प्रति एक व्यक्ति का क्या दायित्व है और किस तरह वह अपने दायित्व को निभा रहा है। इन सभी पक्षों पर बात करते हुए सामाजिक मानवीय मूल्यों की स्थापना करना ही इस उपन्यास की रचना प्रक्रिया के सूत्र हैं।

उपन्यास के माध्यम से पाठकों के सामने बड़ी सहजता किन्नर समुदाय की समस्याओं को सम्पूर्ण विश्व की समस्या के रूप में प्रस्तुत करना लेखिका का उद्देश्य है।

भारतीय समाज में वर्षों से चली आ रही उस मानसिकता को लोग गले लगाए हुए हैं, जिसके कारण मानवीय मूल्यों का हनन होता है। इसका विरोध लेखिका ने किया है, "**जरूरत है सोच बदलने की संवेदनशील बनने की। सोच बदलेगी तभी जब अभिभावक अपने लिंग दोषी बच्चों को कलंक मानकर किन्नरों के हवाले नहीं करेंगे, उन्हें घूरे में नहीं फेकेगे व ट्रांसजेंडर के साँचे में नहीं धकेलेंगे। यह पहचान जब उन्हें किन्नरों के रूप में नहीं जीने दे रही समाज में तो सरकारी मान्यता मिल जाने के बाद भी जीने देगी** ?"[1] पुरानी मान्यताओं के चलते यह हमारा सभ्य समाज किन्नर बच्चे के जन्म लेते ही उन्हें दूसरों के हाथों कैसे सौंप देता है। भारतीय लोकतन्त्र जैसे देश में भ्रूण हत्या जैसे मामलों पर दंड का प्रावधान है, तो ऐसे माता-पिता को सजा क्यों नहीं दी जाती, जो किन्नर बच्चों को दूसरों के हाथों में सौंप देते हैं। इस उपन्यास की रचना प्रक्रिया के माध्यम से कुछ ऐसे प्रश्न बनते हैं । लेकिन उनके व्यापक उत्तर भी इसी उपन्यास में व्याप्त मिलते हैं। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास को मानवीय संवेदना, मानवीय मूल्यों से निहित सामाजिक समरसता का दस्तावेज़ कहा जा सकता है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। यह परिभाषा समकालीन साहित्य लेखन संदर्भों में अपना उचित स्थान रखती है। इसी प्रकार चित्रा मुद्गल ने अपनी इस रचना में समकालीनता का समावेश करके उसे सामाजिक समरसता और अनेकता में एकता वाले संदर्भों को सिद्ध करने का प्रयास किया है।

## व्यक्तित्व के प्रमुख बिंदु

रचनाकार के व्यक्तित्व व रचनाधर्मिता का विश्लेषण एवं मूल्याकन जब भी किया जाता है तब तब उसके समकालीन परिवेश की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों को

---
[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2016, पृष्ट 112

देखना जरुरी होता है। साहित्यकार का अपने समकालीन समाज से क्या सामंजस्य रहा है, उसका साहित्य समाज के लिए उपयोगी है कि सिर्फ मनोरंजन के लिए लिखा गया है। साहित्यकार का रचना कर्म उसके समकालीन सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों को साथ में लेकर चलता है। इसका मूल्यांकन तो उसके साहित्यिक कार्य व उसकी रचनाधर्मिता का विश्लेषण करके ही किया जा सकता है। वास्तव में साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य में समाज का प्रतिबिम्ब दिखाना ही साहित्य कर्म की विशेषता को पूर्ण करता है। चित्रा मुद्गल ने इन सभी समकालीन व युगीन परिस्थितियों को ध्यान में रखकर अपने साहित्यिक कर्म की शुरुवात की है। उनकी रचनाएँ ही उनके व्यक्तित्व का परिचय देती हैं। मुद्गल जी ने साहित्य घर में बैठकर नहीं लिखा बल्कि उनकी कहानी, उपन्यास, नाटक आदि में उन्होंने अपने घर एवं समाज में व्याप्त विषमता (जो आज स्त्री-पुरुष, गरीब–अमीर के भेदभाव को जगह दे रही है) का विरोध किया है। समाज की इस व्याप्त विषमता को अपनी रचनाओं में इन्होंने बड़े ही सहज रूप से चित्रित किया है।

**“10 दिसंबर सन् 1944 को चेन्नई में जन्मी चित्रा मुद्गल का पैत्रिक गाँव उस बेसवाडे के निहाली खेड़ा गाँव (जिला उन्नाव ) में है, जिसने हिन्दी साहित्य को जायसी, निराला, महावीर प्रसाद द्विवेदी, शिवमंगल सिंह सुमन जैसे अजेय साहित्यकार ही नहीं बल्कि चंदशेखर आजाद जैसे वीर स्वतंत्रता संग्रामी सेनानी भी दिए हैं।”**[1] चित्रा मुद्गल का जन्म तो शहर में हुआ लेकिन इनकी प्रारंभिक शिक्षा गाँव से ही शुरू हुई। सामंती परिवेश में पली बड़ी चित्रा मुद्गल ने अपने ही घर परिवार एवं समाज में जी विषमता देखी और इसी व्यवस्था में 'स्त्री' की जो दयनीय स्थिति देखी इसका उन्होंने विरोध किया। चित्रा मुद्गल ने अपने साहित्य में स्त्री की समस्याओं के अतिरिक्त समाज के निम्नवर्गीय जीवन के यथार्थ को भी आत्मसात किया है। चित्रा मुद्गल की रचनाओं में गाँधीवाद, मार्क्सवाद और लोहिया के समाजवाद के विचार देखने को मिलते हैं।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (हर नई विचार धारा से सर्जना पुष्पित–पल्लवित होती है). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन,2017, पृष्ट 11

“**मार्क्सवाद मजदूरों पर होने वाले अन्याय, अत्याचार एवं शोषण के चुंगुल से बाहर निकालकर उन्हें हक़ और न्याय दिलाने की बात करता है** ।”[1] इनकी कहानियों एवं उपन्यास में देखे तो '**आवां**', ‘**एक जमीन अपनी**’, ‘**गिलिगडु**’ उपन्यास इसी विचारधारा के आदर्श और सिध्दांत दिखाई देते हैं । यहाँ पर समाज के शोषित और दमित वर्ग एक स्त्री चाहे वह सवर्ण हो या दलित, नौकरी-पेशा वर्ग से हो या झाड़ू पोछा करने वाली, शहरी हो या गाँव की, सभी इनके कहानियों के पात्र हैं । एक मजदूरी करने वाला वर्ग है, तो दूसरा पूँजिपति वर्ग है ।

चित्रा मुद्गल का साहित्य उनके जीवन के भिन्न–भिन्न पहलूओं से निकल कर व्यक्त होता है । जिन्हें लेखिका ने स्वयं देखा और अनुभव किया और अपनी संवेदना को साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया । स्त्री के प्रति संवेदना और सहानभूति उनके साहित्य की प्रमुख विशेषता है । “**इतना ही नहीं, वे गरीब, पीड़ित तथा शोषित महिलाओं के हितों की रक्षा करने वाली संस्था ‘जागरण की सन्1965 से सन् 1972 तक सचिव रहीं । इन्होंने उनके उत्थान के लिए निरंतर कार्य किया । जागरण के साथ-साथ वे प्रतिष्ठित और प्रतिबध्द निरंतर मजदूर यूनियन ‘कामगार अघाड़ी’ की सक्रिय सदस्य भी रहीं** ।”[2] 60 के दशक में अंतर्जातीय प्रेम विवाह करना अपने परिवार एवं समाज की नजरों में एक अपराध था । जिसके चलते उनको परिवार से अलग किराए के दस-बाई-दस के छोटे से मकान में रहना पड़ा । समाज में व्याप्त इस विषमता को लेखिका को भी सहना पड़ा । जीवन के इन्हीं महत्वपूर्ण पहलूओं को लेखिका ने समाज के उन लोगों के साथ जोड़कर देखा जो दलितों, स्त्रियों और मजदूरों को समानता का दर्जा नहीं दे रहें हैं । जीवन के इन्हीं पहलूओं को स्वयं के यथार्थ से जोड़कर देखा अनुभव किया तथा अपनी रचना में व्यक्त किया, जिसका प्रमाण उनकी रचनाएँ हैं ।

---

[1] डॉ. कुमार यशवंत संतोष, मार्क्सवाद और प्रगतिवादी काव्य. कानपुर : विकास प्रकाशन, 2011, पृष्ठ 7

[2] के., वनजा. चित्रा मुद्गल : एक मूल्याकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016, पृष्ठ 285

**" लेखिका सन् 1978 से सन् 1999 में फिल्म सेंसर बोर्ड की मानक सदस्य रहीं ।"**[1] फिल्म जगत और विज्ञापन आदि के सन्दर्भ में उनके अनुभव और यथार्थ का बीज यहीं से उगता हुआ दिखाई देता है । लेखिका मुद्गल ने अपने जीवन में अनेक पहलूओं को रचनाओं में व्यक्त किया है । उनका '**गिलिगडु**' जिसमें शारीरिक और मानसिक रूप से कमजोर लोग बुजुर्गों की व्यथा कथा को व्यक्त करता उपन्यास है । लेखिका की एन.सी.आर.टी. की यात्रा जिसमें रमेश दवे और बंगलोर मिस्टर राव आदि के साथ की यात्रा बस कुछ दिन याद बन कर ही रह जाती है । लेखिका की जब बहुत दिनों तक राय साहब से मुलाकात नहीं होती । लेखिका ने '**गिलिगडु**' उपन्यास के सन्दर्भ में कहा है कि , " **राव साहब के घर फ़ोन किया तो काफी देर तक किसी ने नहीं उठाया । फिर कई प्रयत्नों के बाद किसी ने उठाया और बताया की, मैडम, राव साहब तो दो दिन पहले ही गुजर गए । इस बात ने मुझे बहुत कचोटा**.........."[2] यहाँ पर '**गिलिगडु**' उपन्यास के सन्दर्भ में देखे तो राव साहब के प्रति लेखिका की जो संवेदना थी कर्नल साहब के रूप में वह '**गिलिगडु**' उपन्यास में व्यक्त हुई है । किसी भी रचनाकार के लिए अपने जीवन के अनेक पहलू, घटनाएँ व्यक्त कर पाना बहुत ही कठिन कार्य होता है । लेकिन चित्रा मुद्गल ने इस कार्यो को बड़े ही स्वाभाविक ढंग से पूर्ण किया है । अपने संघर्षमय जीवन को जिस प्रकार उन्होंने जिया इसी जीवन संघर्ष को लेकर सामाजिक पुरातन रूढ़िवादी परंपरा का विरोध किया । यहीं प्रेरणा और संघर्ष उनके पात्रों के जीवन में देखने को मिलती है । उनके पात्र जीवन में संघर्ष करते ही नजर आते हैं । चित्रा मुद्गल का कथा साहित्य मनुष्य जीवन की संघर्ष की कथा है । जो सत्य चित्रा मुद्गल के जीवन का सत्य था उसी सत्य के यथार्थ को लेकर वह हमेशा अपनी रचनात्मक प्रक्रिया में व्यक्त करती रहीं हैं ।

चित्रा मुद्गल ने लेखन के अतिरिक्त समाज सेवा में भी अपनी रुचि दिखाई है । इसका प्रमाण उनकी कृतियों में देखा जा सकता है । समकालीन समय सापेक्ष उनकी रचनाएँ पूरे जनांचल को साथ

---

[1] वनजा, के चित्रा मुद्गल : एक मूल्याकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016, पृष्ठ 185

[2] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (सबसे बड़ी कसोटी मेरे पाठक ). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 118

लिए हुए आगे बढ़ती हैं। चित्रा जी की उपलब्धियाँ उनके जीवन की दशा और दिशा को दिखाती हैं। जीवन के इन सभी पहलुओं की उपलब्धियाँ ही उनके व्यक्तित्व को प्रमाणित करने का कार्य करती हैं।

- सन् 1965 से 1972 तक वंचित ,शोषित महिलाओं के हितों के लिए काम करने वाली संस्था 'जागरण' की सचिव रहीं।
- सन् 1979 से 1983 तक लेखिका ने महिलाओं के अधिकारों और स्वावलम्बन की प्रेरणा देने वाली संस्था 'स्वाधार' की सक्रिय कार्यकर्ता रहीं।
- सन् 1986 से 1990 तक 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद' की 'वूमेन स्टडीज यूनिट' की कुछ महत्वपूर्ण पुस्तक योजनाओं जैसे दहेज दावानल, बेगम हजरत महल,स्त्री समताआदि में बतौर निर्देशक कार्य किया।
- आकाशवाणी की 'सर्वभाषा राष्ट्रीय नाट्य स्पर्धा' में सन् 1995 में जूरी सदस्य के तौर पर कार्य किया।
- सन् 2002 से 2008 तक आई. सी. सी. आर. के अंतर्गत 'मौलाना आजाद निबंध प्रतियोगता' की जूरी सदस्य के तौर कार्य किया।
- डाक विभाग में सन् 2006 से 2009 में 'हिन्दी सलाहकार समिति' की सदस्य मनोनीत।

यदि लेखन अपने समय के समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और आर्थिक सरोकारों को लेकर नहीं चलता तो वह लेखन व्यर्थ, निराधार और अर्थहीन माना जाता है। लेखिका अपने जीवन में ऐसे अनके जगह पर कार्यरत रही हैं, जिनके माध्यम से उन्हें कुछ न कुछ सीख और प्रेरणा मिलती ही रही है। " **'समन्वय', 'स्त्री शक्ति' तथा 'उत्तरप्रदेशीय महिला मंच', 'सूर्या' संस्थान', 'समता महिला मंच' एवं अभिव्यक्ति सेसम्बंधित** "[1] में काम किया है। सम्पूर्ण कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने अपने समय की सामाजिक, पारिवारिक, नारी समस्या

---

[1] वनजा. के., चित्रा मुद्गल : एक मूल्याकन. नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016, पृष्ठ 185

और आर्थिक पक्षों को सुलझाने का काम किया है । उनका साहित्य सामान्य लोगों के दुःख–सुख और उनकी समस्याओं को व्यक्त करता है, साथ में सरकारी व्यवस्थाओं और नीतियों का दुरूपयोग करके शासन  व्यवस्था के लोग भोली-भाली जनता का शोषण करते किस तरह करते हैं, इस सभी बिन्दुओं को उन्होंने अपनी कहानियाँ ‘**बंद**’, ‘**चेहरे**’, ‘**जगदम्बा बाबू गाँव आ रहे हैं**’ आदि में बहुत ही मार्मिक तरीके से व्यक्त करने में सफलता प्राप्त की है ।

‘जागरण और स्वाधार’ जैसी समाज सेवी संघटनों से उन्हें अपने अनुभव को व्यक्त करने एवं संवेदना का साहस मिला । चित्रा मुद्गल की कहानियों में अधिकतर पात्र इनके स्वाधार जैसी संस्था से ही आये है । जैसे  ‘**भूख**’ की ‘लक्ष्मा’, ‘**मामला आगे बढ़ेगा**’ का ‘मोट्या’,  ‘**त्रिशंकु**’ का ‘बंडू’,'**जिनावर**' का ‘रामखिलावन’, ‘केंचुल’ की ‘कमलाबाई’ आदि पात्र हैं। “**उन्होंने स्वयं कहा है कि जागरण के लिए कार्य करते हुए वह अविश्वसनीय से लागते  अपने इर्द- गिर्द फैले झोपड़पट्टी के नरकद्रश्य जन-जीवन के संपर्क में आयी । वह उन घरों के संपर्क में आयी जो दिहाड़ी भीख, पाकेटमारी, चोरी, देह व्यापार, दारू, साग सब्जी, ड्राईवरी, फेरी, सिनेमा, टिकटों की ब्लैक पर आश्रित अपनी किसी भी एक जून की भूख-प्यास का जुगाड़ करते** हैं ।”[1]

लेखिका चित्रा मुद्गल एक सच्ची समाज सेविका हैं । जिन्होंने समाज सेवी संस्थओं में सिर्फ काम ही नहीं किया, बल्कि संस्था से जुड़कर उन्होंने व्यापक अनुभव लिया और उसे साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त भी किया । सच्चे अर्थो में कहा जाए तो लेखिका ने राजनीति में छल–कपट, अवसरवादिता, भ्रष्टाचार, जातिवाद आदि को चित्रित किया है । राजनैतिक, सामाजिक क्षेत्र में देखे तो ग्रामीण या शहरी क्षेत्र 'स्त्री' एवं निम्न वर्ग के लोगों का शोषण शोषण होता ही रहता है । सामाजिक शोषण में 'स्त्री' को ही सबसे ज्यादा बहिष्कार तिरिस्कार से गुजरना पड़ता है । समाज के वंचित शोषित

---

1 जाधव, मीना, इरेश स्वांमी. चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001, पृष्ठ 350

वर्गों के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करने वाली चित्रा मुद्गल कों अधिकतर स्त्री विमर्श से ही जोड़कर देखते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि उन्होंने सिर्फ एक स्त्री को की अपनी रचना धर्मिता का माध्यम नहीं बनाया अपितु उन्होंने समाज के विभिन्न पहलूओं का विश्लेषण करके समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करने का कार्य किया है । जब हम उनके रचनात्मक कर्म पर बात करते है तो उनकी कहानियाँ, उपन्यास, बाल उपन्यास, बाल कहानी संग्रह, नाटक, संपादित कहानियाँ आदि में स्त्री विमर्श कुछ ज्यादा देखने को मिलता है। लेकिन  इनके साहित्य में आम आदमी, मजदूरों एवं शासन व्यवस्था के अनछुए पहलू भी नजर आते हैं । 'समाज' और 'शासन व्यवस्था' इन पक्षों पर बात करने से कई साहित्यकार दूर भागते हैं । ऐसा साहित्य व्यर्थ और निराधार माना जाता है, जिसमें समकालीन परिप्रेक्ष्य के सामाजिक, आर्थिक, राराजनैतिक, सांस्कृतिक सरोकारों को शामिल नहीं किया जाता।

वास्तव में लेखिका 'चित्रा मुद्गल' अपने रचनात्मक कर्म में साहित्य को समाज का दीपक मान कर चलती हैं। वे कहती हैं कि हिन्दी साहित्य के अनेक साहित्यकार उनके बारे में कहते हैं कि, "**क्या बात करती हों लेखक का काम है लिखना, उनके घरों की साकले खटखटाकर, उनकी गरीबी-गुरबत में हिस्सा बनना या साझेदारी उनका काम नहीं है** ।"[1] चित्रा मुद्गल के साहित्य में कही भी बाहरी दुनिया की अनसुने अनदेखे पहलूओं पर बात नहीं की गयी है, बल्कि उन्होंने आधुनिकता के चलते समाज में जो परिवर्तन देखा उसका चित्रण है। वास्तव में परिवर्तन तो समाज का नियम है लेकिन, परिवर्तन इतना हो कि उससे सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों का विघटन न हो। पारिवारिक रिश्ते की अहिमयत न बदले क्योंकि आधुनिकता के चलते दूरदर्शन, सिनेमा आदि के पड़ते प्रभाव से आज व्यक्ति अपनी संस्कृति एवं पुराने आदर्शवाद को छोड़कर एक मशीन और रोबोट बनता जा रहा है। आदर्शवादिता और सामाजिकता के इन्हीं मूल्यों के प्रति चिंता चित्रा मुद्गल को एक प्रतिभा संपन्न लेखिका होने का गौरव प्रदान करती हैं।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (जरुरी था स्त्री–विषय रूढीयों की विरासत का विसर्जन). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 208

आधुनिक समय में मनुष्य की इस कुण्ठाग्रस्त और अभावग्रस्त जीवन की मानसिकता का चित्रण इनकी कहानियों में किया गया है। लेखिका ने पूँजिपति लोगों और इल्क्ट्रोनिक माध्यमों के दुष्प्रभाव को चित्रित करते हुए **'अढ़ाई गज की ओढ़नी'** और **'वाइफ स्वेपी'** जैसी कहानियों के पात्र प्रिया, सिराज के माध्यम से पुरानी आदर्शवादी संस्कृतिक और आज की आधुनिक परम्परा में बहुत ही भिन्नता दिखाई है।**'अढ़ाई गज की ओढ़नी'** नामक कहानी में अहलुवालिया जैसे पूँजिपति लोग आपनी-अपनी गाडियों की चाबियाँ डालकर अपनी-अपनी पत्नियों की अदला-बदली करते हैं। प्रत्येक दिन कुछ नया पाने की चाहत में आज मनुष्य अपने पारिवारिक आदर्श को भी भूलता जा रहा है। लेखिका चित्रा मुद्गल की कहानियों में नारी विमर्श पर बात करे तो देखने को मिलता है कि आधुनिक महिला लेखन में चित्रा मुद्गल का महत्वपूर्ण स्थान है। लेखिका अपने साहित्य लेखन के सन्दर्भ में कहती हैं कि, मेरा प्रेरणा स्रोत **"स्कूल के दिनों में पढ़ी गई कहानियों–उपन्यासों जैसे 'ठाकुर का कुआँ','गोदान', गोर्की की 'माँ' के चरित्र मेरे अवचेतन में धँसते जाते थे। मुझे बेचैन कर देते और उसी बैचेनियत ने मेरी दृष्टि को समाजोन्मुख बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।"**[1] कहानियों के माध्यम से तो उन्होंने समाज के अनछुए पहलूओं को उठाया ही है लेकिन उनका उपन्यास लेखन भी सामाजिक और मनवीयता से अछूता नहीं रहा **'एक जमीन अपनी'**, **'आवां'**, **'गिलिगडु'**, **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा'** में अपने रचनात्मक कौशल के कारण समकालीन महिला साहित्यकारों में चित्रा मुद्गल का अपना प्रमुख स्थान है। आधुनिक महिला साहित्यकारों ने स्त्री-विमर्श नारी के शोषण दमन, उसकी समाज में दोयम अवस्था का चिंतन किया है। स्त्री-विमर्श की कुछ महिला साहित्यकारों का मानना है कि एक स्त्री के दुःख दर्द को सिर्फ स्त्री ही व्यक्त कर सकती है। लेकिन चित्रा मुद्गल का मानना है कि, " **यह है पुरुष के स्त्री–विमर्श का मेरा**

[1] दूल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (जरुरी था स्त्री–विषय रूढीयों की विरासत का विसर्जन). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 196

**आकलन। दरअसल मैं इस संदर्भ में पुरुष और स्त्री को दो अलग–अलग विरोधी प्रतिद्वंदी के रूप में नहीं देखती................यह अर्धनारीश्वर का वैचारिक दर्शन मुझे ठीक लगता है।**"[1]

आज समकालीन महिला साहित्यकारों में **कृष्णा सोबती**, **मृदुला गर्ग**, **मन्नू भंडारी**, **ममता कालिया**, **प्रभा खेतान** आदि महिला साहित्यकारों ने स्त्री विमर्श को आगे बढ़ाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। समकालीन महिला साहित्यकार पैतृक मूल्यों को चुनौती देती हुई अपने अस्तित्व को मानवीयता प्रदान करने के साथ समाज में स्त्री के साथ हो रहे शोषण के प्रति विरोध करती हैं। वर्चस्ववादी समाज व्यवस्था का विरोध करने के साथ–साथ समाज के प्रत्येक वर्ग की स्त्री को संघर्ष करने की प्रेरणा, शक्ति और साहस प्रदान करने का कार्य करती हैं। **चितकोबरा**, **कठगुलाब**, **आपका बंटी**, **मित्रों मरजानी**, आदि उपन्यासों में प्राचीन और रूढ़िवादी पुरुषसत्तामक समाज के मूल्यों और पुरुष समाज व्यवस्था में 'स्त्री' को दोयम अवस्था की बात की गई है। पुरुष वर्चस्व वादी समाज व्यवस्था में 'स्त्री' के प्रति जैसा व्यवहार किया जाता है और उसका दमन और शोषण किया जाता है। इन सभी बिन्दुओं का विश्लेषण इन समकालीन उपन्यासों में किया गया है। इन सभी उपन्यासों में लेकिन स्त्री की यौन स्वतंत्रता पर ही जोर दिया गया है, लेकिन चित्रा मुद्गल सिर्फ एक ही पहलू को लेकर नहीं चलती हैं। इसका प्रमाण उनके उपन्यास **'गिलिगडु'**, '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' से मिलता है। यहाँ उन्होंने एक अलग प्रकार के कथ्य एवं शिल्प की रचना की है। जिसके सरोकार मानव समाज के वहिष्कृत कर दिए जाने वाले किन्नर वर्ग और वृद्धों तक जाते हैं। लेखिका की यह संवेदनात्मक अभिव्यक्ति मानव समाज और देश के प्रति यह सोच एक बड़े स्तर की मानी जा सकती है।अपने रचनात्मक साहित्य के माध्यम से उन्होंने एक कल्याणकारी देश और समाज की स्थापना की कल्पना है। लेखिका की यहीं कल्पना उनके साहित्य और रचनात्मक कौशल और व्यक्तित्व की पहचान करने में सफल होती है।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (सरोकार मेरी चेतना से तय होते है). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 50

आधुनिक साहित्य लेखन में में दलित-विमर्श और स्त्री-विमर्श पर बहुत लेखन हो रहा है। साहित्य में इनकी भरमार पड़ी हुई है। इस संदर्भ में लेखिका चित्रा मुद्गल का कहना है कि, "**अगर मैं कहूं कि अब कुछ नए जरुरी मुद्दों पर विमर्श शुरु होंने चाहिए** ।"[1] लेखिका का यह विचार तर्कसंगत है क्योंकि आज समाज की मानसिकता स्त्रियों एवं दलितों के प्रति बदल रही है ऐसे में अब हमे समाज के अनछुए मुद्दों पर बात करने की आवश्यकता है। समाज के जिस वर्ग को लेकर साहित्य बहुत कम लिखा गया है। स्त्री की स्वतंत्रता के संदर्भ में लेखिका के विचार है कि स्त्री की पहचान उसके मस्तिष्क और समग्रता से जुड़ी है। जिस दिन स्त्री को इन सब से मुक्ति मिल जाएगी। और मान लिया जायेगा की स्त्री का भी समाज के विकास में अहम योगदान है, उस दिन स्त्री स्वतंत्र हो जाएगी। चित्रा मुद्गल ने उन लोगों का भी विरोध किया है, जो दलित विमर्श का सहारा लेकर देश में एक दूसरे के प्रति विरोधी एवं संकुचित मानसिकता का सूत्रपात्र कर रहे हैं। '**आवां**' उपन्यास में लेखिका ने पवार जैसे लोगों के माध्यम से स्त्री स्वतंत्रता की विरोधी और खंडित राजनीति का खेल खेलने बाले पवार जैसे व्यक्तियों को चित्रित किया है। पवार की खंडित राजनीति के संदर्भ में स्त्रीवादी चिंतक के. वनजा ने अपनी पुस्तक 'चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन' में पवार के शब्दों को व्यक्त करते हुए कहा है कि, " **जवान साथी के रूप में ब्राहम्णों और दलितों का गठबंधन सुन्दर बुद्धिमति संताने ही नहीं, बल्कि वह राजनीति में भी फलदायी समीकरण सिद्द्य होगा। सवर्ण–अवर्ण दोनों के वोट झोली में आ जाएंगे** ।"[2] व्यक्ति की यह मानसिकता समाज और देश के कल्याण के लिए हानिकारक है, जिसका सहारा लेकर राजनैतिक लोग अपनी वोट की राजनीति करते हैं और समाज और देश की शांति व्यवस्था में बाधा उत्पन्न करते हैं। आज हमें इस प्रकार की संकुचित मानसिकता की आवश्यकता नहीं, बल्कि मानवीयता के समस्त सरोकारों को साथ में लेकर चलने वाले समाजवादी विचारों की आवश्यकता है। किसी भी साहित्यकार का रचनाकर्म देशहित एवं एक

---

[1] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (लेखन मुझे एक वैचारकी विस्तार देता है). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 190

[2] वनजा. के., चित्रा मुद्गल : एक मूल्याकन, नई दिल्ली : सामयिक बुक्स, 2016, पृष्ठ 64

समतावादी समाज की स्थापना करना होना चाहिए। यह विशेषता चित्रा मुद्गल के साहित्य में देखने को मिलती है। उपन्यासों के तत्वों का अनुसरण करते हुए इन्होंने अपनी रचनाधर्मिता में वह समस्त बिन्दु सम्मिलित किये हैं, जो साहित्य की परिभाषा का अनुसरण करके अपने आप को संपूर्ण रूप प्रदान करने का प्रयास करते नजर आते हैं। चित्रा मुद्गल का साहित्य सहानुभूति पर आधारित नहीं है, बल्कि स्वानुभूति के आधार पर लिखा गया साहित्य है। सामंती व्यवस्था का विरोध उनकी रचनाओं में अधिकतर देखने को मिलता है। अपने परिवार की एक घटना को याद करते हुए चित्रा मुद्गल कहती हैं कि, " **ये जरुर था कि घर के प्रति, एक बच्चे के बहुत से असंतोष थे । वो असंतोष मैंने महसूस किए। शहर में मैंने देखा कि मैं मुख्य दरवाजें से आ–जा सकती हूँ और जब गांव में रहती हूँ तो मुझे बताया जाता है कि आप मुख्य दरवाजे से नहीं निकलेगी**।"[1]

भारतीय समाज में व्याप्त इस भेदभाव को महसूस करने का सिलसिला लेखिका का अपने ही परिवार से होता है। वह उसका विरोध भी करती हैं। सामंती परिवार में जन्मी चित्रा मुद्गल ने अंतर्जातीय विवाह करके जातिगत भेदभाव को ख़त्म करने का प्रयास किया है। बचपन का असंतोष ओर भी बड़ा रूप धारण कर लेंता है, जब वह अपना घर छोड़कर दस बाई दस के किराए के मकान में रहती हैं। 'स्वाधार' जैसी संस्था के माध्यम से मुम्बई के बड़े घरों एवं झाड़ू पोछा करने वाली उन बाईओं से और मजदूरों से परिचय होता है, जिनको आज भी अपने अधिकार एवं समानता प्राप्त नहीं है। आज भी इन वर्गों का शोषण एवं दमन हो रहा है। लेखिका की रचनात्मक अभिव्यक्ति यही से प्रारंभ होती है।

अपने व्यापक अनुभव और प्रभावशाली व्यक्तित्व के माध्यम से उन्होंने समाज के छोटे से छोटे व्यक्ति पर लिखा है और सिर्फ व्यक्ति पर ही नहीं उन्होंने पशु–पक्षियों पर भी लिखा है। इस सन्दर्भ में उनकी 'जिनावर' और 'जंगल' नामक कहानी का नाम लिया जा सकता है, जिसके माध्यम

---

[1] मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार (वैचारिकता की आधारभूमि ही लोहिया का देशी समाजवाद). नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 32

से  लेखिका ने मनुष्य और प्रकृति के अटूट संबंध की बात कही है। उनकी कहानियों में आधुनिक मनुष्य की पीड़ा भी दिखाई पड़ती है। चित्रा मुद्गल ने  भिखारिनों से लेकर नौकरीपेशा स्त्री की समस्याओं को सम्मिलित करके अपने प्रभावशाली व्यक्तिव के भिन्न–भिन्न पहलुओं का परिचय कराया है।

## पोस्ट बॉक्स  नं. 203 नाला सोपारा : एक परिचय

**'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' चित्रा मुद्गल का 2016 में प्रकाशित किन्नरों (तीसरे लिंग,) की जिन्दगी पर आधारित उपन्यास है। यह उपन्यास किन्नरों के जीवन-सत्य तथ्यों, मार्मिक स्थलों की पहचान बेहद मार्मिक ढंग से कराता है। चित्रा मुद्गल नें अपनी साहित्यिक यात्रा में सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक सरोकारों से सम्बन्धित ऐसे मानवीय सरोकारों को अपनी लेखनी का माध्यम बनाया है, जिससे हमेशा मानवीय मूल्यों का हनन व मानवता को शर्मसार होना पड़ता है। सामाजिक मर्यादाओं और धार्मिक विडंबनाओं के बीच मानवता का ह्रास होता है। तीसरे जेंडर की लोकतंत्र में उनकी विवशता अस्तित्व एवं अस्मिता सम्बन्धी प्रश्न एवं संवेदना आज बहुत बड़ी समस्या बन गई है। संम्पूर्ण उपन्यास पत्र-शैली में लिखा गया एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें अपनी स्कूली शिक्षा के दौरान ही किन्नरों की मंडली को सौप दिए गए विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली द्वारा अपने जीवन यथार्थ और बचपन की परिवार एवं सहपाठियों की स्मृतियों का वर्णन अपनी 'बा' (माँ) को पत्रों में लिखा है लिखे गए। क्रमवार सत्रह पत्रों में विनोद और उसकी 'बा' विचारों, भावों और संवदेनाओं  के प्रेषक और ग्रहण कर्ता की भूमिका में रहते हैं। पत्रों के माध्यम से विनोद अपनी 'बा' को अपने जीवन के उस दैनिक यथार्थ से अवगत कराता है जो उसका स्वयं का भोगा हुआ पीड़ा दायक सत्य है।

तीसरे जेंडर के जीवन की त्रासदीपूर्ण विडंबनाओं, विसंगतियों और समस्याओं को सामने लाने की कोशिश हिन्दी साहित्य में **निर्मला भूराड़िया कृत 'गुलाम मंडी'**, **महिन्द्र भीष्म कृत**

‘**किन्नर गाथा**’ ,‘**पायल**’, **प्रदीप सौरभ कृत** ‘**तीसरी ताली**’आदि उपन्यासों में की गई है। इन रचनाकारों ने वंचित एवं शोषित वर्ग के प्रति आवाज बुलंद करने का सराहनीय कार्य किया है। **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा'** उपन्यास के माध्यम से चित्रा मुद्गल ने किन्नरों के लिए, शिक्षा, रोजगार जैसे समानता के पक्षों की बात की है। संवैधानिक अधिकारों के प्रति समानता का यह आग्रह एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से जोडने का कार्य करता है। उपन्यास का पात्र शिक्षित होकर आत्मनिर्भर बनना चाहता है। विनोद दूसरों की दान-दक्षिणा में दी गई वस्तुओं को नहीं स्वीकारता। **“ कोशिश में हूँ बा उनसे छिपकर कोई बड़ा काम सीख सकूँ। अधूरी शिक्षा आड़े आ जाती है। गाड़ियाँ मज़बूरी में धोता हूँ। कहीं और भाग नहीं सकता**।”[1]

यह 'विचार' किसी एक पात्र का न रहकर संम्पूर्ण किन्नर समाज का बनाया जा सके, यही लेखिका का विचार है। विनोद आत्मनिर्भर होने के साथ-साथ स्वाभिमानी भी है। किन्नर होते हुए भी वह किन्नरों के समाज के रीति रिवाजों को नहीं स्वीकारता किन्नर समुदाय द्वारा थोपी गयी मान्यताओं को वह नहीं स्वीकारता है। विनोद अपनी ’बा’ से कहता है कि **“ उनके लात, घूसे, थप्पड़ और कानों में गर्म तेल सी टपकती किसी भी संबंध को न बख्सने वाली अश्लील गालियों के बाबजूद न मैं मटक-मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ न सलमें-सितारों बाली साड़िया लपेट लिपिस्टिक लगा कानों में बूँदे लटकाने कों**।”[2]

विनोद भारतीय समाज की पुरातन परम्परा का विरोध करता है और इसके साथ वह किन्नर समाज के रीतिरिवाजों को नहीं मानता। उसमें स्त्री के गुण हैं ही नहीं और यदि हैं भी तो उसे वह कैसे स्वीकार करे। यह भारतीय समाज की पुरातन रूढ़ीवादी परपंरओं के प्रति विद्रोह है। अपने अस्तित्व एवं अस्मिता की लड़ाई लड़ने वाले वर्गों में रूढ़ीवादी मूल्यों विरोधी चित्रा मुद्गल ने हमेशा मानवीयता को अपने साहित्य में समाहित किया है। किन्नर होने की विडंबना ने विनोद से माता-पिता,

---

[1]सिंह, प्रताप विजेंद्र. हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर. कानपुर : अमन प्रकाशन, 2917, पृष्ठ 155

[2]मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामायिक प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 9

परिवार,समाज, उसके सपने,उसका संवदेनात्मक संसार सब कुछ छीन लिया है। घर और समाज से बहिष्कृत विनोद अपने अस्तित्व को बचाने के लिए अपमान और तिरस्कार की जिस पीड़ा से गुजर रहा है, उसकी उस पीड़ा में उसे यह एहसास दिलाया जाना और भी पीड़ा दायक होता है।

विनोद किन्नर होने की पीड़ी से मुक्ति चाहता है। उसका रहन-सहन सब आम व्यक्ति जैसा ही है लेकिन जान बूझकर लोग उसे इस पीड़ा से मुक्त नहीं होने देते। विनोद का सपना है- सामान्य मनुष्य की तरह गरिमापूर्ण जीवन जीने का। वह बार-बार प्रश्न उठाता है। " **इन मासूमों को नहीं समझ मे आाया होगा आखिर घर में पलने वाले अन्य बच्चों की तरह वे माँ के दुध के अधिकार से वंचित क्यों हैं। उन्हीं बच्चों की भाँति वे स्कूल क्यों नहीं जा सकते? अपने सहपाठियों के साथ लड़ झगड़ नहीं सकतें? खेल नहीं सकते। प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकते कक्षा में पढ़नें वाले अन्य विद्यार्थियों के साथ, उन्हें उनकी बनिस्वत अधिक नम्बर लाने है। डॉक्टर, इंजीनियर,अध्यापक बनना है। आत्मनिर्भर होकर घर परिवार की जिम्मेदारी में हाथ बंटाना है। माता-पिता की सेवा करनी है। रक्षाबंधनों मे बहन से राखी बंधवानी है। तीज-त्यौहार उसी उल्लास से मनाना है**।"[1] भारतीय समाज मे व्याप्त सामंतवादी एवं पूँजीपति समाज व्यवस्था, जिसके चलते समाज में यौन केंद्रीयता के शिकार लिंग दोषी तो हैं ही, स्त्रियाँ भी हैं। सामंती पुरूषसत्तात्मक समाज व्यवस्था का खात्मा करना, दलित-विमर्श , स्त्री-विमर्श जैसी विचारधारा समाज की इस पुरातन रूढ़ीवादी समाज व्यवस्था के प्रति विद्रोह करती है और इस व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकना ही इन सभी विमर्शों का लक्ष्य भी है।

उपभोक्तावादी समाज की इस मानसिकता के चलते किन्नरों,स्त्रियों एवं दलितों को समानता के अधिकार प्राप्त नहीं होते। संवैधानिक अधिकारों की बात करें तो देश के किसी भी व्यक्ति से जाति या वर्ग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता लेकिन समाज की मानसिकता में परिवर्तन अभी भी नहीं आया। सन् 2011 तक किन्नरों को कोई भी संवैधानिक अधिकर प्राप्त नहीं था। **"सन् 2014**

---

[1]मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामायिक प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 185

**में सुप्रीम कोर्ट ने इन्हें समानता का अधिकार देने का फैसला दिया। यहाँ यह स्मरण दिलाना उचित होगा कि अक्टूबर 2012 में नेशनल लीगल सर्विसेज अथारिटी ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की थी कि देश में किन्नरों को समान अधिकार और सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए।**"[1]

सरकार द्वारा समस्त समानता के अधिकार प्राप्त होने के बाद भी आज समाज किन्नरों को सम्मानपूर्वक स्थान क्यों नहीं देता है। एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से बाँटने का काम इसी प्रकार की विषमता से होता है, जिसका प्रभाव समाज पर तो पड़ता ही है साथ ही देश की संप्रभुता एवं एकता पर भी इसके प्रभाव देखने को मिलते हैं। आज तीसरे जेंडर की समस्या सम्पूर्ण विश्व की समस्या बन गई है। किन्नर समुदाय समाज के लिए अवांछित है, ऐसा माना जाता है कि ये लोग समाज को आगे बढ़ाने में योगदान नहीं दे सकते। इसलिए इस समुदाय को समाज से बहिष्कृत करके मनोरंजन का माध्यम बनाकर त्रासदी पूर्ण जिन्दगी को उनकी नियति बना दिया है। चित्रा मुद्गल किन्नर समुदाय की इस पीड़ा और अस्तित्व एवं अस्मिता को मानवीयता के अस्तित्व से जोड़कर देखती हैं।

इसी मानवीयता को अपने उपन्यास में बहुत ही मार्मिक तरीके से उन्होंने चित्रित किया है। किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में लेखिका कहती हैं कि जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है, लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि'किन्नर' समुदाय के लोग समझे की **"तुम धड़ का मात्र वही निचला हिस्सा भर हो,मस्तिष्क नहीं हों, दिल नहीं हो, धड़कन नहीं हो, आँख नहीं हो, तुम्हारे हाथ पैर नहीं है। हैं, हैं, हैं, सब वैसा ही है, जैसे औरो के हैं। यौन सुख लेने-देने से वंचित हो तुम, वात्सल्य सुख से नहीं! सोचो। बच्चें तुम पैदा नहीं कर सकते मगर पिता बन नहीं सकते यह किसने नहीं समझने किया तुम्हें।**"[2]

---

[1]परवीन, फरहत. (सं.). आजकल. नई दिल्ली, नवंबर, 2916, पृष्ठ 57

[2]मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, नई दिल्ली : सामायिक प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 50

भारतीय समाज की इस पुरातन मानसिकता का विरोध उपन्यास में किया गया है। मानवीय मूल्यों का प्रतीक यह उपन्यास सामाजिक,राजनैतिक सरोकारों को साथ में लेकर चलता है। घर और परिवार से बहिष्कृत विनोद किस प्रकार से सत्ताधारी लोगों के स्वार्थ का जरिया बना दिया जाता है - यह यथार्थ समाज के सामने प्रस्तुत करने की कोशिश लेखिका करती हैं। किन्नरों की नारकीयपूर्ण जिन्दगी का जिम्मेदार जितना समाज है, उतना ही किन्नरों के पथभ्रष्ट सरदार और स्वयं किन्नरभी हैं। जो किन्नर बच्चों के जन्मते ही इनके माता-पिता से जबरदस्ती ले आते हैं ।

आधुनिक होते हुए भी लोग आज पिछड़ी परम्पराओं और मान्यताओं में विश्वास रखते हैं। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का किस तरह शोषण कर रहा है। इन सभी तथ्यों को बड़े ही संवेदनात्मक तरीके से प्रस्तुत करने में यह उपन्यास सफल रहा है। इस उपन्यास में यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि किस तरह अन्दर से भयभीत एवं कमजोर लोगों को सभ्य समाज के लोग हमेशा से गुलाम बना के रखते हैं। राजनैतिक और पूँजीपति वर्ग के लोगों की इस समुदाय को अपराधिक कार्यो में लिप्त करने में प्रमुख भूमिका रही है। इन असामाजिक तथ्यों के हाथों में आने के बाद अन्दर से भयभीत और कमजोर 'किन्नर' अपनी मुक्ति के रास्ते कभी नहीं तलाश पाते और न ही सत्ताधारी कभी तलाशने देते हैं। अस्तित्व और अस्मिता के इन सभी तथ्यों की पुष्टि उपन्यास में प्रस्तुत पात्रों के माध्यम से की गई है। अपनी अस्मिता की पहचान के लिए इन्हें स्वयं पर आत्मनिर्भर और शिक्षित होना होगा।समाज और परिवार से तिरस्कृत किन्नर यदि समाज से कुछ सहायता माँगते हैं तो यह सभ्य समाज, पूँजिपति वर्ग और राजनैतिक लोग अपनी स्वार्थवृति का माध्यम बनाकर उनका शोषण करते हैं। उपन्यास का पात्र संघर्ष करता और अपने समुदाय के लिए मुक्ति के रास्ते खोजता है। यह संघर्ष सम्पूर्ण किन्नर समुदाय का बन सके यही लेखिका की मनसा है। उपन्यास का पात्र अवसरवादी और प्रतिभाशाली है। वह अपने हाथ से किसी भी अवसर को नहीं जाने देता। विनोद कहता है कि, **“जिंदगी हो या लैब। असफल प्रयोगों की चुनौती अक्सर सफल प्रयोगों की परिणती रचती**

**है। एक प्रयोग अपने लिए ही सही।**"[1] किन्नर समुदाय के लोगो को शिक्षित होने की बात की जाती है। मनुष्य मुसीबतों से हार नहीं मानता वही मनुष्य अपने लक्ष्य को प्राप्त कर पाता है। अक्सर देखा जाता है कि मनुष्य लक्ष्य प्राप्त होने पहले ही असफलता का एहसास करने लगते हैं।

विनोद के अंदर जो भी प्रश्न समाज के प्रति है वह सभी लेखिका चित्रा मुद्गल के अन्दर की संवेदना है, जो सभ्य समाज के लोगों से आज प्रश्न करती हैं। आज किन्नरों को अपने घर परिवार और समाज से बहिष्कृत कर समाज की मुख्य धारा से क्यों अलग कर दिया है ? उपन्यास में व्याप्त संवेदना और प्रश्न मानवीय मूल्यों के विघटन के प्रति चिंता है। '**पोस्टबॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास में किन्नरों की पहचान का प्रश्न है। किन्नरों के आत्मसम्मान, आत्मनिर्भर, स्वाभिमान, शिक्षित होने की बात और ससम्मान उनकी घर वापसी की प्रक्रिया का प्रमाणिक दस्तावेज़ इस उपन्यास को कहा जा सकता है। यह उपन्यास किन्नर समुदाय के आर्थिक,सामाजिक, राजनैतिक पक्षों को लेकर चलता है। इस उपन्यास में स्त्री के अधिकारों की भी बात की गयी है जिसमे एक स्त्री अपने जीते जी समाज और परिवार के कारण अपने लिंग दोषी बच्चें अपनी संतान पर अधिकार नहीं जता पाती है। स्त्री की स्वतंत्रता और उसके अधिकारों पर भी बात की गयी है। समाज इन्ही बिन्दुओं पर अस्मिता मूलक अध्ययन उपन्यास के मानवीय संवेदना के सरोकारों से जोड़ता है। जब भी हम किसी भी समाज का अस्मितामूलक अध्ययन करते है तो समाज के इन पक्षों पर बात करता आवश्यक होता है।

[1]मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, नई दिल्ली : सामायिक प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 163

# द्वितीय अध्याय

## इतिहास एवं मिथक में थर्ड जेंडर (किन्नरों के संदर्भ में)

इतिहास एक ऐसा प्रमाणिक दस्तावेज है जिसमे आदिम समाज की सभी प्रसिद्ध एवं अप्रसिद्ध घटनाओं के संदर्भ में ज्ञात तथ्यों एवं घटनाओं के व्यापक चित्र कालक्रमानुसार सार्थक और सुसंबद्ध प्रस्तुत होते हैं। डॉ.नगेन्द्र ने इतिहास को परिभाषित करते हुए कहा है कि-"**शाब्दिक दृष्टि से इतिहास का अर्थ ऐसा ही था। इससे दो बाते स्पष्ट है,एक तो यह कि इतिहास का संबंध अतीत से है, दूसरा यह कि उसके अंतर्गत केवल वास्तविक या यथार्थपूर्ण घटनाओं का ही समावेश किया जाता है** ।"[1] मानव समाज जब-जब अपने प्राचीन समाज से हटकर एक नये और आधुनिक समाज की ओर अग्रसर होता है, तो उसे अपनी प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, समाज, परंपरा ,रीति-रिवाज, रहन-सहन की जानकारी रखना आवश्यक होता है।

इतिहास मे उन सभी घटनाओं व तथ्यों का चित्रण किया जाता है, जिनका संबंध अतीत में घटित उन प्रसिद्ध घटनाओं से होता है, जिसको आधार बनाकर मनुष्य आधुनिक समाज की कल्पना करता है। इतिहासकार प्राचीन मानव संस्कृति व सभ्यता के प्रसिद्ध एवं अप्रसिद्ध तथ्यों तथा घटनाओं की जानकारी एकत्रित करके प्रस्तुत करता है। इतिहासकार इन सभी तथ्यों एवं घटनाओं को व्यवस्थित और सार्थक स्वरूप प्रदान करता है। इसमें इतिहासकार की कला का परिचय देखने को मिलता है। जिनमें प्रमाणिकता का अभाव रहता है। इतिहासकार अपने कला कौशल से उन सभी घटनाओं एवं पात्रों में प्रमाणिकता और सत्यता का रंग भर देता है। इतिहास एक ऐसा प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक दस्तावेज माना गया है, जिसके आधार पर वर्तमान समाज अपनी प्राचीन संस्कृति, परंपरा, राजनैतिक व्यवस्था, प्राचीन धरोहरों से परिचित होता है।

---

[1] नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, नई दिल्ली : मयूर पेपर बैक्स, 2008, पृष्ठ 19

इतिहास का संबंध केवल अतीत से नहीं होता, बल्कि 'इतिहास' मनुष्य को उसके अतीत से वर्तमान तक की यात्रा कराता है। इतिहास लेखन के दो आधार माने जाते हैं - भारतीय और पाश्चात्य। दोनों के दृष्टिकोण अलग अलग दिखाई पड़ते हैं। भारतीय इतिहासकार किसी तथ्य या घटना को शुद्ध चारित्रिक और आध्यात्मिकता के साथ जोड़कर प्रस्तुत है। भारतीय इतिहास हमेशा से ही सांस्कृतिकता पर आधारित रहा है, जिसमें परपंरावादी मूल्यों को अधिक महत्व दिया गया है। भारतीय संस्कृति की अपेक्षा पाश्चात्य विचारक इतिहास के तथ्यों या घटनाओं का निर्धारण शोध वैज्ञानिकता के आधार पर तर्कसंगत तरीके से करते हैं । पाश्चात्य विचारकों ने इतिहास के केवल आन्तरिक परिवर्तन पर जोर नहीं दिया बल्कि प्रकृति के वाह्य परिवर्तन की बात भी कही हैं, जो समय-समय पर प्रकृति में परिवर्तन होता रहता है।पाश्चात्य विचारक जर्मन दार्शनिक कान्त ने इतिहास की नयी व्याख्या करते हुए प्रतिपादित किया है कि "**सृष्टि का वाह्य विकास प्रकृति की आंतरिक विकास प्रक्रिया का प्रतिविम्ब मात्र है। अत: इतिहास को भी इसी रूप में ग्रहण किया जाना** चाहिए।"[1]

आदिम मनुष्य ने प्राकृतिक तत्वों पर विजय पाने का हर सम्भव प्रयास किया। चूँकि प्रकृति की शक्तियाँ मनुष्य की बुद्धि से परे थी। उसको प्राकृतिक शक्तियों से भय था की कहीं यह हमारे लिए हानिकारक सिद्ध न हो अथवा अग्नि, वायु, जल, सूर्य, चन्द्रमा, सागर आदि के प्रति भय मिश्रित श्रद्धा प्रकट की। यहीं से मिथकों का प्रथम सोपान दिखाई देता है। मिथक के माध्यम से मनुष्य ने प्रकृति पर अपने अनुभव आरोपित किए है। मिथकों में मानव ने अपनी प्रकृति की ज्ञात-अज्ञात घटनाओं, लोकोत्तर शक्तियों, कल्पना और यथार्थ को शामिल करके एक अवधारणा का विकास किया है। मनुष्य ने मिथकों के सहारे अपने आप को विजय एवं शक्तिशाली घोषित कर दिया। जहाँ पर वह असहाय था, वहाँ पर सर्वशक्तिमान बनने की चेष्टा वह मिथक के सहारे करता रहा।

[1] नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास. नई दिल्ली :मयूर पेपर बैक्स , 2008, पृष्ठ 22

मिथक कल्पना, अनुभव पर आधारित आलौकिक और तर्क से परे है। मानव द्वारा मिथक को दैवीय शक्तियों का संसार बना दिया गया है। फिर भी मिथक सांसारिक सत्य और प्रकृति के यथार्थ का बोध कराने में समर्थ है ,क्योंकि मिथक का रचना संसार मनुष्य द्वारा ही रचा और गढ़ा गया संसार है। मिथक को किसी भी घटना या तथ्य का तर्क नहीं कहा जा सकता। मिथकों की रचना इतिहास के प्रारंभिक दौर की है, जब मनुष्य के पास ज्ञान-विज्ञान के पर्याप्त साधनों का अभाव था। इसलिए मनुष्य ने साहित्यक माध्यम से सभी पुराकथाएँ, लोककथा, किवदंती में रचनात्मक संसार की रचना की है। मिथक के संदर्भ में मार्क्स का कथन है, "**सभी पुराकथाएॅ कल्पना में और कल्पना के सहारे प्रकृति की शक्तियों को जीतने और उन्हें रूप देने की कोशिश करती हैं। इस तरह प्रकृति की उन शक्तियों पर वास्ततिक विजय के साथ ही मिथको का संसार लुप्त होने लगता है**।"[1]

आधुनिक युग वैज्ञानिकता का युग है। विज्ञान नई-नई खोज करके यथार्थ को मानव के सामने प्रस्तुत कर रहा है। आज मनुष्य सौरमण्डल में अनेक ग्रहों पर कदम रखकर उन पर शोध विश्लेषण करके अपनी जिज्ञासाओं की संतुष्टि करने में जूटा हुआ है। यही कारण है कि मनुष्य सत्य की ओर अग्रसर होता जा रहा है और मिथकों में व्याप्त कल्पना और संभावना को पीछे छोड़ता जा रहा है। इतिहास और मिथक में मानव समाज के सभी रीति-रिवाजों प्राचीन मान्यताओं के सभी चित्र देखने को मिलते हैं।

मिथक और इतिहास के सहारे ही मनुष्य अपनी संस्कृति व परंपरा के संचालन के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। प्रत्येक जाति, समुदाय, वर्ग का अपना इतिहास होता है और उसको जानने के लिए मनुष्य जिज्ञासू रहता है। भारतीय मिथक और इतिहास अपनी संस्कृति, परंपरा, आदर्श सिद्धांतों से भरा पड़ा हुआ है। मिथकों के द्वारा प्रत्येक समूहों के यथार्थ को धरातल पर एक सूत्र में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता रहा है। फिर भी यह सत्य कथा और मिथ्य कथा दोनों पर आधारित है।

---

[1] गर्ग पुष्पा, आधुनिक कविता और मिथक. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन ,पृष्ठ 23

इतिहास की रचना में वैज्ञानिक ढ़ग से तथ्यों की जाँच अथवा उसके महत्व को समझ कर उसका सजीव चित्रण किया गया है।

इतिहास और मिथक के सहारे इस अध्याय में किन्नर समुदाय के अस्तित्व एवं अस्मिता की पहचान पर बात की गई है। समाज के इतिहास एवं मिथक में किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में बहुत सी प्रचलित मान्यताएँ देखने को मिलती है। इन्ही प्रचलित मान्यताओं के आधार पर किन्नरों के मिथक और वर्तमान सन्दर्भ में देखे तो देवताओं के यहाँ नाचने वाले किन्नरों को समाज ने बहिष्कृत कर दिया है। इन सभी बिन्दुओं का व्यापक विश्लेषण यहाँ पर किया गया है।

## किन्नरों का इतिहास और ऐतिहासिक मान्यताएँ

किन्नर (थर्ड जेंडर) समुदाय के ऐतिहासिक संदर्भो में बात करने से पहले इतिहास के सन्दर्भ में जान लेना आवश्यक है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का अपना एक इतिहास होता है। भारत एक विशाल देश है। इसका अपना एक विशिष्ट भू-भाग है। इसे किसी एक सरल परिभाषा में, या एक सरल सूत्र में बाँधना संभव नहीं है। यहाँ पर इतिहास को समझने के लिए उसको व्यापक रूप में प्रस्तुत करने का एक प्रयास किया गया है। इतिहास के अध्ययन में विभिन्न विद्वान भिन्न-भिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों का प्रयोग करते हैं। यह दृष्टिकोण भी समय-समय पर बदलते रहे हैं। परिवर्तित होते हुए सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक सरोकारों को विभिन्न दृष्टीकोणों में कालक्रमानुसार प्रस्तुत करना ही इतिहास की विशेषता होती है।

इतिहास के इसी परिवर्तन और दृष्टिकोण के सन्दर्भ में डॉ. नगेन्द्र कहते हैं कि, **"भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों के इन्हीं तथ्यों के आधार पर इतिहास दर्शन की स्थापना हुई है, जिसमें इतिहास के संबंध में प्रयुक्त व प्रचलित विभिन्न दृष्टिकोणों, धारणाओं व विचारों का अध्ययन किया**

**जाता है ।"**[1] प्रकृति की प्रत्येक वस्तु के संदर्भ में मनुष्य ने अपनी धारणा और विचारधारा को आरोपित किया है । मनुष्य प्रारम्भ से ही चिंतनशील प्राणी रहा है । आज उत्तरआधुनिकता की ओर अग्रसर मनुष्य उन समस्त तथ्यों को ज्ञात करना चाहता है, जो मानव जीवन के लिए आवश्यक है । इतिहास मानव सभ्यता के आदिम समाज और उसकी परंपरा व आदर्शों को प्रस्तुत करने में सफल माध्यम माना जाता है ।

आदिम समाज के संदर्भ में मिथकों का भी प्रमुख स्थान देखने को मिलता है । इतिहास में तथ्यों को तर्क के आधार पर प्रामाणिक बनाकर प्रस्तुत किया जाता है, तो मिथक में मनुष्य की कल्पना और भय मिश्रित आस्था और सत्य को प्रस्तुत किया जाता है । मिथक की तुलना में इतिहास वैज्ञानिकता और प्रमाणीकरण पर आधारित है । ऐसा माना जाता है कि मिथक और इतिहास दोनों मनुष्य के लिए आवश्यक है क्योंकि मिथक भी कई युगों का सत्य अपने अंदर समाहित करने की शक्ति रखता है और कालसापेक्ष किसी भी युग को वाणी दे सकता है ।

इतिहास की सापेक्षता की बात करें तो कहा जा सकता है कि प्रत्येक देश, समाज, व्यक्ति, जाति विशेष का अपना एक विशिष्ट इतिहास होता है । इतिहास में उसका अस्तित्व, सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक उपलब्धियाँ भी शामिल होती हैं । किसी भी समाज को अपना इतिहास जानना अति आवश्यक होता है क्योंकि प्रकृति में कोई भी घटना, तथ्य एकाएक नहीं घटता बल्कि धीरे-धीरे घटित होता है । किसी भी समाज व जाति के लिए इतिहास के महत्त्व को बताते हुए 'सब्यसाची भट्टाचार्य' कहते है कि **"जिस जाति के पास अपने पूर्व-गौरव की ऐतिहासितक स्मृति होती है । वह अपने गौरव की रक्षा करने की कोशिश करती है ।"**[2] मानव सभ्यता के इन्हीं घटित तथ्यों व घटनाओं को इतिहासकार कालक्रमानुसार व्यवस्थित एवं सारगर्भित करता है । डार्विन ने अपने विकासवादी सिद्धान्त की स्थापना करते हुए कहा है कि, **"सृष्टि का कोई भी अंग या तत्व**

---

[1] नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास .नयी दिल्ली : मयूर पेपर बैक्स, 2008, पृष्ठ 20

[2] भट्टाचार्य सब्यसाची, आधुनिक भारत का इतिहास. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन ,2008, पृष्ठ 14

**एकाएक घटित या रचित न होकर क्रमशः विकसित है ।अतः वैज्ञानिक दृष्टि से इतिहास का अर्थ 'घटना-समूह' का संकलन न होकर विकासक्रम का विवेचन है ।"**[1]

व्यक्ति को समाज की महत्वपूर्ण इकाई कहा जाता है। व्यक्ति और समाज के संदर्भों में कहा जा सकता है कि जिस तरह हम सेना और सैनिक को एक दूसरे से अलग नहीं देख सकते उसी तरह समाज और व्यक्ति को भी एक-दूसरे से अलग करके नहीं देखा जा सकता। व्यक्ति और समाज का संबंध अद्वितीय है। यह एक सिक्के के दो पहलू कहे जा सकते हैं। किसी भी देश के साहित्य, इतिहास और समाज के बीच अटूट सम्बंध होता है। इसलिए किसी भी समाज या व्यक्ति के सन्दर्भ में जानने से पहले उसके इतिहास, साहित्य और समाज का अध्ययन करना तर्क संगत होगा। भारत की सामाजिक संरचना पर बात करें तो समाज के विकासक्रम में सिर्फ स्त्री-पुरुष के आधार पर बात की जाती रही है। इनका अपना साहित्य और इतिहास अधिक मात्रा में मिलता है। समाज के इन दो प्रमुख अंगों के अतिरिक्त समाज का अभिन्न  अंग तृतीय लिंग है, जिन्हें हम अभी किन्नर (थर्ड जेंडर) के रूप में जानते हैं। किन्नरों का वर्णन भी हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति के धार्मिक परम्पराओं, हिन्दू संस्कृति, जैन संस्कृति और बौद्ध संस्कृति में देखने को मिलता है। वैदिक संस्कृति के अनुसार किसी मनुष्य को पुरुष, स्त्री या नपुंसक तीन प्रकृति में से एक देखा जाता रहा है। कामसूत्र में भी इसकी व्याख्या करते हुए कामसूत्रकार वात्स्यायन ने पुरुष-प्रकृति, स्त्री-प्रकृति और तृतीय प्रकृति का उल्लेख किया है। मनु ने मनुस्मृति में इसे जैविक रूप से व्याख्यायित करते हुए कहा कि, **"उच्चकोटी के पुरुष से लड़के का जन्म होता है। स्त्री के प्रभावी होने पर बच्ची का जन्म होता है। यदि दोनों समान हैं तो तीसरे प्रकार के बच्चे का जन्म होगा ।"**[2]

प्राचीन परंपरा, ग्रन्थों, स्मृतियों में इनकी उपस्थिति बराबर दिखाई देती है। महाभारत, रामायण जैसे प्राचीनतम मिथकीय ग्रंथ भी इनकी अस्मिता को स्वीकारते हैं। संस्कृत व्याकरण में तीन प्रकार

---

1 नगेन्द्र,हिंदी साहित्य का इतिहास . नई दिल्ली : मयूर पेपर बैक्स ,2008 , पृष्ठ 22

2 सिंह विजेंद्र प्रताप, विमर्श का तीसरा पक्ष, दिल्ली : अनंग प्रकाशन , 2016, पृष्ठ 7

के लिंगों का प्रमाण आज भी मिलता है। पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग जैसे लिंगों का विभाजन भी किसी लिंग विशेष का वाचक होता है। संस्कृत व्याकरण का साहित्य बहुत ही प्राचीन माना जाता है। इससे यह तथ्य निकाल कर सामने आता है कि इस विशेष वर्ग की उपस्थिति लोक और शास्त्र में अपने संपूर्णता के साथ देखने को मिलती है। भारतीय समाज की वर्चस्ववादी संस्कृति दलित, स्त्री, आदिवासी और किन्नरों जैसी अस्मिताओं के प्रति उदारवादी रवैया अपनाने में समर्थन दिखाई नहीं देती।

'किन्नर' उन्हें कहते हैं जो न सम्पूर्ण स्त्री हैं,और न पुरुष। यह पुरुष जननांग के अनियमितता के फलस्वरूप दोषपूर्ण पैदा होते हैं। अपनी इसी शारीरिक विकलांगता के कारण इन लोगों को त्रासदीपूर्ण जीवन यापन करना पड़ता है। वास्तव में लिंग दोष के रूप में पैदा हुए इन लोगों का क्या दोष है ? समाज व परिवार अंधे, लूले-लंगड़े बच्चों घर में जगह तो दे देता है, लेकिन किन्नरों को नहीं। समाज में व्याप्त विषमता के इस भेदभाव को कब खत्म किया जाएगा और एक व्यक्ति को मानवता की दृष्टि से कब देखा जाएगा ? इन सभी संवेदनाओं को आत्मसात करके ही किन्नरों की ऐतिहासिक मान्यताओं पर बात की गई है।

भारतीय इतिहास में 300 ईसा पूर्व से 500 ई. तक का समय बड़े स्तर पर सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक स्थितियों में बदलाव का समय था। इसी समय नैतिकता एवं मानवता की शिक्षा प्रदान करते हुए जैन व बौद्ध धर्म की विचारधारा लोक से शिष्ट तक प्रसारित हो रही थी। इसी समय नगरवधू एवं वेश्यावृत्ति का भी उल्लेख मिलता है। इतिहासकार मानते हैं कि मुस्लिम शासन के भारत में स्थापित होने के साथ ही राजशाही 'हरम' की व्यवस्था भी प्रारम्भ हुई। इन्हीं 'हरम' के साथ ही मध्यकालीन भारतीय इतिहास में किन्नरों का संबंध देखने को मिलता है। 'हरम' शब्द उर्दू-अरबी शब्द है। इसलिए 'हरम' की प्रथा मुस्लिम शासन की स्थापना के उपरांत ही भारत में प्रारम्भ मानी जाती है। 'हरम' की भांति एक ही शासक द्वारा सैकड़ों स्त्रियों को रखने की प्रथा भारत में अति प्राचीन है। 'हरम' की व्यवस्था की देख-रेख के लिए किन्नरों को रखा जाता था। 'किंपुरुष' को सुरक्षा की

दृष्टि से और ‘किंपुरुषियों’ को हरम में रहने वाली स्त्रियों की सेवा एवं सहायता के लिए रखा जाता था। खिलजी वंश के शासक **अलाउद्दीन खिलजी** के हरम में भी ‘किंपुरुष’ और ‘किंपुरुषियां’ होती थी। किन्तु उन्हें ‘खोजा-कलीब’ एवं ‘खोजा-सरा’ से संबोधित किया जाता था।

गुजरात में किन्नरों की माँ के रूप में प्रसिद्ध ‘बहुचरा देवी’ और **अलाउद्दीन खिलजी** के संबंध में एक प्रसंग मिलता है। जिसका उल्लेख समकालीन हिन्दी उपन्यासकार महेंद्र भीष्म अपने उपन्यास ‘किन्नर कथा’ में भी करते हैं। “**अलाउद्दीन खिलजी की सेना जब बहुचरा देवी के मंदिर को विध्वंस करने पहुँची तब उन तमाम सैनिकों ने मंदिर की मुर्गियाँ खा ली। जब देवी के संज्ञान में यह आया तब उन्होंने इन सारी मुर्गियों को आह्वान कर अपने पास बुलाया। देवी के आह्वान करने से सारी मुर्गियाँ सैनिकों का पेट फाड़ कर देवी के समक्ष उपस्थित हुई। उन सैनिकों के प्राण बच गए जिन्होंने मुर्गियाँ नहीं खाई थी। वे सारे के सारे जीवित सैनिक देवी के अनुयाई बन गए और देवी की प्रसन्नता के लिए उन्होंने स्त्री वेश धारण कर लिया। माँ बहुचरा देवी ने उन्हें हिजड़ा रूप प्रदान कर सभी को अपनी सेवा में लगा लिया**।”[1]

उपन्यास में महेंद्र भीष्म ने इस सेना को मुस्लिम बताया है और माना है कि इसी परंपरा के अनुसार मुस्लिम समुदाय व हिन्दू समुदाय अथवा किसी भी संप्रदाय का किन्नर हो वह बहुचरा देवी की पूजा जरूर करता है। बहुचरा देवी को किन्नरों की ईष्ट देवी माना जाता है। उपर्युक्त तथ्य के प्रमाण संदिग्ध हैं क्योंकि इसके प्रामाणिक आधार नहीं मिलते हैं। लेकिन इतिहास में **अलाउद्दीन खिलजी** और **मालिक काफ़ूर** के संबंध में इतिहासकारों ने काफी चर्चा की है। **मालिक काफ़ूर** मूल रूप से हिन्दू परिवार में जन्मा एक किन्नर था। जिसे परिवार वालों ने त्याग दिया था। **अलाउद्दीन खिलजी** और **मालिक काफ़ूर** के मध्य समलैंगिक संबंध थे। इसके संबंध में यूनिवर्सिटी ऑफ मोटाना की प्रोफेसर वनिता एवं रुथ ने अपनी पुस्तक **‘संसेक्स लव इन इंडिया’में लिखती हैं कि “सुल्तान खिलजी मालिक की सुंदरता पर फिदा है और उसे खंभात कि लड़ाई के बाद बतौर गुलाम**

[1]भीष्म, महेन्द्र. किन्नर कथा, नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन, 2016

**खरीद भी लिया था। इससे पता चलता है कि अलाउद्दीन खिलजी के मालिक काफ़ूर के साथ वाकई समलैंगिक संबंध थे। इसी कारण इसको प्रधान सेनानायक भी नियुक्त किया गया।"**[1] **मालिक काफ़ूर ,अलाउद्दीन खिलजी** का वफादार सेनापति था। **मालिक काफ़ूर** के माध्यम से कई युद्ध लड़े गए और उनमें विजय भी प्राप्त की गई।

सुप्रसिद्ध यात्री फ्रेंकोइस बर्नियर ने इस विषय पर टिप्पणी की थी कि "**महल में बार-बार लगाने वाले मीना बाजार, जहाँ अगवा कर लाई हुई सैकड़ों हिन्दू महिलाओं का क्रय विक्रय हुआ करता था। राज्य द्वारा बड़ी संख्या में नाँचने वाली लड़कियों की व्यवस्था और नपुंसक बनाए गए सैकड़ों लड़को की हर मुँह में उपस्थिति शाहजहाँ की अनंत वासना के समाधान के लिए ही थी।"**[2] भारतीय संस्कृति के प्राचीन समाज में इनकी मौजूदगी के प्रमाण मिलते हैं, लेकिन इनकी एक विशिष्ट पहचान ही देखने को मिलती है। समाज के विकास में सिर्फ यौनसुख को छोडकर इनकी भी समाज में समान भूमिका स्पष्ट होती है लेकिन उन्हें जैविक गड़बड़ी व सामाजिक बुराई के रूप में ही देखा व दिखाया गया और हमेशा बहिष्कार कर हाशिये पर ही डाला जाता रहा है।

जब भी समाज के बारे में बात करते हैं तो समाज में सिर्फ स्त्री और पुरुष की बात की जाती है लेकिन समाज का एक वर्ग किन्नर (थर्ड जेंडर) समुदाय आज भी समाज की मुख्य धारा में सम्मलित दिखाई नहीं देता। किन्नरों का अपना एक इतिहास और साहित्य है। हमारे भारतीय पुराणों और आख्यानों में किन्नर समुदाय को सम्मानजनक रूप में प्रस्तुत किया गया है। देवताओं के यहाँ नाचने बाले और देवताओं की तरह उल्लेख्य किया गया। उनके निवास स्थान दुर्लभ पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले देवयोनी और देवसेवक के रूप मे उल्लेख किया गया लेकिन आज समयानुसार अपराधियों के रूप में चिन्हित क्यों किया जाने लगे ? किन्नरों के सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक पक्षों पर बात करते समय आदिम समाज और मिथकों के समाज में क्या स्थान रहा ? और मिथक और इतिहास की

---

[1] http://www.namanbharat.com//**19872**why-allauddin-khilji-killed-mlik-gafur-here-the-reason/

[2] फ्रेंकोइस, बर्नियर. ट्रेवल्स इन द मुगल एम्पायर. पुनः लिखित विस्मिल. यूनाइटेड किंगडम : प्रेस, 1934

तुलना करके  वर्तमान समाज में स्थापित मान्यताओं एवं मानवीय मूल्यों संबंधी  सभी बिन्दुओं का व्यापक विश्लेषण किया गया है। किन्नरों के सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक पक्षों पर बात करते हैं तो देखते हैं कि किन्नर के प्रति मिथक और इतिहास में चित्रित समाज का रवैया थोडा  सम्मानजनक रहता है। मिथकों में देवताओं की सेवा में नाचने-गाने वाले, महाभारत में **वृहन्नला**, **शिखंडी**, **अरावन्नी** के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। भारत में अंग्रेजों के आगमन के साथ ही किन्नर वर्ग की स्थिति और भी दयनीय दिखाई देती है। समाज में आज किन्नर वर्ग के सम्मान और अधिकारों में कुछ भेद देखने को रहें हैं। किन्नरों के इतिहास और मिथक में जिस तरह सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक स्थितियां मिलती हैं, उनका व्यापक विश्लेषण वर्तमान संदर्भों में प्रस्तुत करने का प्रयास यहाँ पर किया गया है।

**"परतंत्र भारत में सन् 1871 से पहले तक भारत में किन्नरों को ट्रांसजेंडर का अधिकार मिला हुआ था। मगर 1871 में अंग्रेजों ने किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स यानी जरायमपेशा जनजाति की श्रेणी में डाल दिया था। बाद में आजाद भारत का जब नया संविधान बना तो सन् 1951 में किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स से निकाल दिया गया।"**[1] भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को उसके जन्म के साथ समानता का अधिकार प्रदान किया जाता है, किन्तु किन्नरों को अपने अधिकार सन् 2014 में ही प्राप्त हुए हैं। इसका मुख्य कारण समाज था, जिसने इस वर्ग को कभी एक समान समझा ही नहीं। समाज ने उन्हें  मुख्यधारा से अलग दोयम दर्जे पर रखा गया। यह वर्ग मुख्यधारा के समाज से वर्षों तक बहिष्कृत रहा और सुख-सुविधाओं के  साधनों से भी वंचित रहा है। आज समानता के संवैधानिक अधिकार प्राप्त होने के बाद भी समाज इनको हेय दृष्टि से ही देखता है।

वर्तमान समय में समाज का यह वंचित वर्ग भी समाज के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। शिक्षा, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में किन्नर अपनी पहचान बना रहे हैं। वह

---

[1] सिंह, विजेंद्र प्रताप. उद्धृत, जनकृति अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका ( सं ) कुमार गौरव.पृष्ठ 10 ,अंक 18 ,वर्ष 2 ,अगस्त 2016

शिक्षा और रोजगार के माध्यम से आर्थिक रूप से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। लेकिन समाज मे आज भी वर्चस्ववादी सामंती पितृसत्तात्मक पूँजीवादी व्यवस्था के लोग कमजोर और भयभीत लोगों को अपने स्वार्थपूर्ति का माध्यम बनाकर उपयोग कर रहे हैं। एक स्त्री को सिर्फ उपभोग की वस्तु मानने वाला यह समाज किन्नरों को भी उपयोगिता के आधार पर ही देखता है। किन्नर संतान पैदा नहीं कर सकते हैं इसलिए संतान सुख-भोग से वंचित हैं लेकिन स्नेह और प्यार के पात्र भी नहीं हो सकतें क्या ? यह समाज को समझने की जरुरत है। आधुनिक युग चेतना प्रधान युग है। आज प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत है। अस्मिताओं के विस्फोट के इस युग में दलित, स्त्रियाँ, आदिवासी, किन्नर, जिन्हें मुख्य धारा के समाज ने समानता के दृष्टिकोण से नहीं देखा गया। यह सभों लोग अपने अधिकारों की माँग कर रहें है। समाज की यह भेदभाव पूर्ण व्यवस्था कल्याणकारी और साम्यवादी राष्ट्रनिर्माण में समाज की यह अराजकतावादी भेदभावपूर्ण व्यवस्था हमेशा दोषपूर्ण सिद्ध होतो है। इतिहास में मुगलकालीन समय में किन्नरों की ज्यादा दोषपूर्ण उपस्थिती नहीं मिलती लेकिन अँग्रेजी शासन में उन्हें अपराधी प्रवृत्ति का दर्जा दे दिया गया। साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। इसलिए समाज के ऐतिहासिक सरोकारों को आत्मसात करके उसको समकालीनता के साथ विश्लेषण करके प्रस्तुत करना साहित्य का उद्देश्य होना चाहिए । हिन्दी साहित्य में भी किन्नरों की समाज उपस्थिति उनके अस्तित्व एवं महत्व को पूरी समग्रता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया गया। हिन्दी साहित्य की अपेक्षा अँग्रेजी साहित्य में थर्ड जेंडर को लेकर बहुत साहित्य लिखा गया है। हिन्दी साहित्य में कुछ गिने-चुने उपन्यास व कहानियाँ ही किन्नर समुदाय के संदर्भ में लिखे गए हैं। किन्नर समुदाय के दु:ख-दर्द व संवेदना को लेकर लिखे गए उपन्यासों में नीरजा माधव कृत- यमदीप(2002), डॉ.अनुसूय्या त्यागी कृत- मैं भी औरत हूँ (2005), महेंद्र भीष्म कृत- किन्नरकथा (2010), मैं पायल (2016), प्रदीप सौरभ कृत- तीसरी ताली (2010), निर्मला भूराड़िया कृत- गुलाम मंडी (2003), चित्रा मुद्गल कृत- पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा (2016) आदि प्रमुख हैं।

उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में किन्नर समुदाय के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक सरोकारों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

## किन्नर जाति के संदर्भ में मिथकीय प्रयोग

'इतिहास' और 'मिथक' को एक सिक्के के दो पहलू कहा जा सकता है, क्योंकि मानवीय इतिहास के विकास में मिथकों की बहुत वड़ी भूमिका दिखाई देती है। इतिहास की अपेक्षा मिथकों में मनुष्य के द्वारा अपने आदिम मानवीय समाज की संरचना के काल्पनिक चित्र को कालक्रमानुसार प्रस्तुत किया गया है। 'इतिहास' के माध्यम से मनुष्य को सांस्कृतिक विकास को प्रामाणिकता एवं सत्यकथा का बोध होता है। 'मिथक' रचनात्मक धरातल पर व्यक्ति और समाज के जातीय विश्वासों, आस्थाओं और मूल्यों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति का अनिवार्य और सशक्त माध्यम है। मिथक के माध्यम से जिस प्रकार ज्ञात-अज्ञात और असीम प्राकृतिक शक्तियों के संदर्भ में यथार्थ, कल्पना मिश्रित तथ्यों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। उसी तरह 'इतिहास' से भी सत्य, प्रमाणिक व तर्कपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

वास्तव में परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण में नित्य नए उपादानों को देखकर मनुष्य ने जिज्ञासा और लालसा के कारण प्राकृतिक रहस्यमय शक्तियों के बारे में जानने के लिए मिथकों का निर्माण किया है। 'मिथक' शब्द को परिभाषित करते हुए डॉ.रमेश गौतम ने कहा है कि, "**भारतीय संदर्भो में मिथक की अवधारणा लगभग नई है। हिन्दी भाषा और साहित्य में इस भाषा के आविष्कारक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी है। अँग्रेजी के 'मिथ' शब्द के सामान्तर इस शब्द की कल्पना की है। 'मिथ' मूल रूप मे ग्रीक भाषा का शब्द है। यूनानी माइथॉस (mythos) या (muthos) से इसकी व्युत्पति मानी गई है, जिसका अर्थगत संदर्भ है- 'मुॅह से निकला हुआ''आप्तवचन' या 'अतर्क्य कथन'**।"[1] किसी भी विश्वसनीय

---

[1] गौतम रमेश, मिथकीय अवधारणा और यथार्थ . नई दिल्ली : राधारानी प्रकाशन ,1997 ,पृष्ठ 13

व्यक्ति के द्वारा कहा गया कथन। मैक्सम्यूलर ने मिथक को प्रकाश और अंधकार के रूप प्रस्तुत किया है। मिथक को एक ओर सत्य और कल्पना के सबंध में देखा जा सकता है तो दूसरी ओर मानव समाज के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में भी देखा जाता है। मानव समाज का प्राकृतिक शक्तियों के संदर्भ में विकसित होते ज्ञान के कारण उसने अपने प्राकृतिक स्वच्छन्द वातावरण की शक्तियों के बारे में जानने की कोशिश की। इसी कोशिश के क्रम में मनुष्य की बुद्धि जिन शक्तियों को जान सकी, उनको उसने स्वीकार कर लिया और जिन शक्तियों के बारे में वह नहीं सका, उन शक्तियों में उसने दैवीय व अतिमानवीय शक्तियों का आरोपण करके इंद्र, वरुण, सूर्य, चंद्रमा, आकाश को लोककथा, किवदंती , लोक-विचार, पुराकथाओं, के माध्यम से जीतने का प्रयास किया है। ऐसा माना जाता है कि आदिम युग में जागरूक मानव का प्राकृतिक शक्तियों से जब संघात हुआ तो उसके पास उन प्राकृतिक और अमानवीय शक्तियों के क्रियाकलापों और घटनाओं को कल्पना और अनुभव के सहारे परिभाषित करने के सिवाय कोई और साधन नहीं था। उसी का सहारा लेकर मनुष्य ने प्रकृति की व्याख्या की और जो असंभव था, मिथकों के संसार में जाते ही वह सुलभ और सरल हो गया। मिथक आदिम जीवन शैली को समग्रता में प्रस्तुत करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और किसी भी समाज की जीवन शैली, परम्परा, रहन-सहन को अभिव्यक्त करने की शक्ति समाहित किए हुए होता है।

मिथक को मुख्यतः दो रूपों में देखा जा सकता है। एक तो उसका लिखित रूप जैसे लिपिबद्ध साहित्य के रूप में और दूसरा लोक साहित्य रूप। इस सन्दर्भ में वैदिक-पौराणिक साहित्य और लोक साहित्य में अंतर देखने को मिलता है। पुष्पा गर्ग कहती हैं कि,"**प्रथम वैदिक-पौराणिक और द्वितीय परम्परा मौखिक व्यावहारिक और रचनाधर्मी रूप में मिलती है। लोककथा लोक में प्रचलित वह कथा है, जिसकी सामान्य मानस में सहव्याप्ति है जबकि मिथक विकासक्रम में स्वीकृति पाता है**।"[1] लोक कथा और मौखिक परम्परा की अपेक्षा मिथक कालक्रमानुसार अपनी लोकप्रियता बनाए रखने की क्षमता रखता है। लोककथा या प्रचलित मान्यताओं पर आधारित

[1] गर्ग , पुष्पा. आधुनिक कविता और मिथक . संजय प्रकाशन : नई दिल्ली . 2006 , पृष्ठ 36

साहित्य को यदि लिखित रूप प्रदान कर दिया जाये तो वह मिथक का रूप भी धारण कर सकता है। मिथक में प्रकृति के वह गूढ़ रहस्य, लोक प्रचलित अस्थाएँ, लोकविश्वास, भय मिश्रित श्रद्धा उसके आदर्श, नैतिक मूल्यों के विश्वास सभी समाहित रहते है।

मिथक के माध्यम से मनुष्य ने सृष्टि की गतिक्रिया व प्रतिक्रिया को सरलतम परिभाषा में प्रस्तुत करने का भरपूर प्रयास किया है। मिथक किसी भी सभ्यता या संस्कृति का आदर्श, मूल्यों की समझ के लिए एक सशक्त माध्यम है। मिथक ऐसे कई सूत्रों के अनुभव से गूँथा हुआ है, जिसमें सभ्यता, संस्कृति, विज्ञान, धर्म-दर्शन और कलाओं आदि सभी परिपूर्णतः देखने को मिलती हैं। मिथक किसी भी समाज व्यक्ति के अनुभव जन्य यथार्थ को वाणी देने में सक्षम है। "**मिथक अतीत और वर्तमान की व्याख्या करता हुआ दोनों के बीच सेतु की भांति कार्यशील रहता है। यही कारण है कि आधुनिक काल में जब हमारी मूल्य व्यवस्था परिवर्तन के विभिन्न सोपानों से गुजर रही है और एक और अनिश्चित स्वरूप को लिए हुए है तो यहीं से मिथक साहित्य की रचना का महत्वपूर्ण उपादान बन कर सामने आता है**।"[1] मानव समाज अतीत से लेकर वर्तमान तक की यात्रा मिथकों और इतिहास के सहारे ही करता है।

भारतीय समाज को अनेकता में एकता का प्रतीक कहा जाता है लेकिन यह समाज का वास्तविक स्वरुप नहीं है। भारतीय समाज में हमेशा से ही विषमता देखने को मिलती है। जातिभेद, वर्णभेद, पूँजीवाद समाज में इतना हावी रहा है कि समाज के कुछ समुदायों कभी समानता का दर्जा ही नहीं दिया गया। समाज की इस भेद-भाव पूर्ण व्यवस्था का शिकार दलितों, स्त्रियों, आदिवासियों और किन्नरों आदि कमजोर वर्गों को बनाया जाता रहा है। किन्नरों के बारे में इतिहास और मिथक में अनेक मान्यताएँ प्रचलित हैं। प्राचीन समय में किन्नरों का समाज में क्या स्थान व मान-सम्मान रहा है। उनकों इतिहास और मिथक के आलोक में परिभाषित करना उचित रहेगा। किन्नर जाति (थर्ड जेंडर) के सन्दर्भ में मिथकीय प्रयोगों को इन स्त्रोतों से ग्रहण किया जा सकता है :

[1] गर्ग ,पुष्पा. आधुनिक कविता और मिथक . नई दिल्ली : संजय प्रकाशन , 2006, पृष्ठ 48

- रामकथा (रामायण) में किन्नरों से सम्बंधित घटनाओं से
- महाभारत में उपलब्ध किन्नरों के कथानक पर आधारित प्रसंग
- अन्य स्त्रोतों (मौखिक या लिखित कथाओं पर आधारित पौराणिक ग्रंथो)

उपरोक्त संदर्भो में महत्वपूर्ण बात यह है कि आधुनिक काल में जब हम मिथक की बात करते हैं तो 'रामकथा' और 'महाभारत' की कथा को प्रमुखता से प्रयोग किया जाता है। प्राचीन साहित्य में मिथकों पर आधारित ग्रंथ बड़ी मात्रा में मिलते है।

'महाभारत' जैसे ग्रन्थ की बात करते है तो इसमें भारतीय दर्शन में व्याप्त धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की अवधारणा को स्पष्ट देखा जा सकता है। 'रामायण' में भारतीय आस्था एवं विश्वास को स्वर देने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। **'महर्षि वाल्मीकि'** ने मानव के शाश्वत मूल्यों एवं आदर्शो को रामायण कथा में राम को आदिनायक बनाकर प्रस्तुत किया है , जिसमें सम्पूर्ण धर्म और संस्कृति को गुम्फित करके प्रस्तुत किया गया है। रामकथा का भारतीय जनमानस पर इतना व्यापक प्रभाव देखने को मिलता है। इससे समाज के राजनैतिक, सांस्कृतिक सरोकार भी प्रभावित होते है। 'रामायण' और 'महाभारत' पर जनमानस की अत्यधिक आस्था और विश्वास है। इसलिए किन्नर जाति के सन्दर्भ में मिथकीय परम्पराओं, मान्यताओं और प्रयोगों के जो भी प्रमाण मिलते है, उन पर जन मानस का विश्वास भी देखने को मिलता है ,इसलिए इन्हीं सभी मिथकीय ग्रंथो को आधार बनाकर किन्नरों के अस्तित्व एवं अस्मिता पर बात की गयी है। भारतीय समाज में आमतौर पर मान्यता है कि किन्नर नाचते-गाते हैं। जिस भी परिवार में शादी विवाह, बच्चे का जन्म या फिर मांगलिक कार्य होते हैं किन्नर उन लोगों के घर शगुन लेने जाते हैं। कुछ लोग तो ख़ुशी से शगुन देते है, तो कुछ आना-कानी करते है। कहा जाता है कि किन्नर ने यदि अच्छी दुआ दी तो व्यक्ति धन-धान्य से संपन्न हो जाता है। अगर किन्नरों की बद्दुआ लगी तो, वह परिवार सुखी नहीं रहता। इन्हीं मान्यताओं के चलते लोग इन्हें अपने घर से खाली हाथ नहीं जाने देते। अधिकांशतः देखा जाता है कि कुछ लोग उनके इस

शगुन को नहीं देते तो किन्नर उनसे असभ्य भाषा का करते हैं, गन्दी हरकतें भी करते हैं, अपने वस्त्र उतार देते हैं। बहुत से किन्नर ऐसा नहीं करते, अगर सामने बाला पैसे देने में आना-कानी कर रहा होता  है तो यह चुप-चाप चले जाते हैं। उदाहरण के तौर पर देखें तो 'तीसरी ताली' उपन्यास में गौतम साहब के घर बच्चा होने पर किन्नर अपना शगुन माँगने उनके घर जाते हैं। उनके लाख प्रयास करने के बाद भी वह दरवाजा नहीं खोलते तो "**सुनयना ने गुरु डिम्पल से कहा कि दरवाजे पर मूत देते हैं, लेकिन डिम्पल ने सुनयना को इस बात के लिए इजाजत नहीं दी। बोली, हम हिजड़े जरुर हैं, पर हमारे भी कुछ उसूल हैं। हमारे पेट में लात मारेगा तो भगवान भी इसे माफ नहीं करेगा** ।"[1] यहाँ पर असली किन्नरों के सन्दर्भ में यह कथन कहा गया है क्योंकि आज-कल नकली किन्नर समाज में असली किन्नरों के नाम पर लोगों से गलत तरीके से पैसे माँगते हैं।

किन्नर समुदाय  की प्राचीन कालीन समाज में उपस्थिति के सन्दर्भ में  मिथकों की सहायता से हम इनके संदर्भ में अध्ययन करेंगे। किन्नरों कि उत्पत्ति के सम्बन्ध में मिथकों में मान्यता है कि, "**एक तो यह कि वे ब्रम्हा की छाया अथवा उनके पैर के अँगूठे से उत्पन्न हुए और दूसरा यह कि अरिष्टा और कश्यप उनके आदिजनक थे। हिमालय का पवित्र शिखर कैलाश किन्नरों का प्रधान निवास स्थान था, जहाँ वे शंकर की सेवा किया करते थे। उन्हें देवता और गायक समझा जाता था** ।"[2] मिथकों में व्याप्त काल्पनिक सत्य को आज भी भारतीय समाज अपना एक इतिहास मानता है। मिथक को समाज, जाति, समुदाय या फिर व्यक्ति के इतिहास को व्यक्त करने में समर्थ माना जा सकता है। सामाजिक आवश्यकता के अनुसार किसी भी व्यक्ति या समाज को अपनी संस्कृति, धर्म, दर्शन आदि की जानकारी से अवगत होना हो तो वह मिथक का सहारा ले सकता है। मिथकों में ऐसी अनेक मान्यताओं को स्वीकार किया गया है, जिसमें किन्नर समाज के सन्दर्भ में अनेक तथ्य और उनकी मान्यताओं  के प्रमाण प्राप्त होते हैं।

---

[1] सिंह, विजेंद्र प्रताप. हिंदी उपन्यासों के आइने में थर्ड जेंडर . कानपुर : अमन प्रकाशन ,पृष्ठ 69

[2] वही, पृष्ठ   148

'रामायण', रामकथा का एक ऐसा मिथकीय महाकाव्य है, जिसकी लोकप्रियता जन-जन में व्याप्त है। रामकथा के आदिनायक राम हैं। राम कथा में ऐसी मान्यता है कि **राम** अपने पिता कि आज्ञा के पालनार्थ चौदह वर्ष वनवास के लिए **सीता** और भाई **लक्ष्मण** वन में गए थे। **भरत** अयोध्या वासियों के साथ ,राम और सीता के पीछ -पीछे चित्रकूट तक उनको मनाने गए लेकिन **राम** ने सभी के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया और समस्त लोगों से घर लौटने का आग्रह किया और कहा कि ,

**"जथा जोग करि विनय प्रनामा। बिदा किए सब सानुज रामा ॥**
**नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे। सब सन्मानिक कृपा निधि फेरे ॥"**[1]

यहाँ पर भगवान **राम** ने सिर्फ स्त्री-पुरुष को ही घर लौटने को कहा है। जो न नर है, न नारि, उनके लिए कुछ नहीं कहा। भगवान **राम** जब चौदह वर्ष बाद वन से वापस अयोध्या लौटे तो थर्ड जेंडर समुदाय के लोग चित्रकूट में ही मिले। इसका कारण जब राम ने जानना चाहा तो किन्नरों ने कहा कि प्रभु आपने सिर्फ नर-नारि के लिए वापस नगर लौटने को कहा था। इसी कारण हम लोग यहाँ से कहीं नहीं गए। किन्नरों की इस भक्ति से खुश होकर भगवान राम ने किन्नरों से यह कहा की कलयुग आएगा तब तुम्हारा राज होगा। किन्नर समुदाय के लोगो में यह मान्यता आज भी प्रचलित है।

**"नभ दुदुंभी बाजहिं बिपुल गंदर्भ किन्नर गावहीं।**
**नाचहिं  अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं ।।**
**भरतादी अनुज हनुमदादि समेत ते।**
**गहें छत्र चामर व्यंजन धनु असि चर्म शक्ति विराजते ।।"**[2]

---

[1] पोद्दार , हनुमान प्रसाद . रामचरित्र मानस अयोध्याकाण्ड .गोरखपुर :गीता प्रेस, संवत् 2072 , पृष्ठ 559
[2] पोद्दार, हनुमान प्रसाद .रामचरित्र मानस अयोध्याकाण्ड .गोरखपुर :गीता प्रेस, संवत् 2072 , पृष्ठ 841

ऐसी मान्यता है कि जब **रावण** को मारकर **राम** अयोध्या लौटे तो बहुत भारी जश्न हुआ। रातभर नाच-गाना होता रहा बहुत रात हो गयी। इसी कारण **राम** ने कहा कि बहुत रात हो गयी सभी नर-नारि अपने -अपने घर को प्रस्थान करें। लेकिन स्त्री–पुरुष को ही यहाँ पर संबोधित किया गया, जो न तो सम्पूर्ण स्त्री है और न ही पुरुष जिन्हें किन्नर (थर्ड जेंडर) की श्रेणी में रखा गया है उनके लिए कुछ नहीं कहा गया इसलिए किन्नर वहीं पर नाचते रहे। **राम** को जब यह बात मालूम चली तो उन्होंने किन्नर समुदाय (थर्ड जेंडर) की श्रद्धा से प्रसन्न होकर उनको नाचने-गाने का वरदान दे दिया। इसी के परिणामस्वरुप आज भी किन्नर समुदाय के लोग नाचते फिरते हैं।

नाचने-गाने की इस व्यवस्था और मिथकों की इस मान्यता को वर्षों तक यह वर्ग स्वीकार करता रहा। लेकिन आज इस मान्यता को ठुकरा कर यह लोग अन्य कार्यो की और अग्रसर हो रहे हैं। क्योंकि इस व्यवस्था ने उन्हें दोयम दर्जे पर ही ला कर खड़ा कर दिया है। समाज द्वारा थोपी गयी यह मान्यता आज व्यक्ति को सिर्फ सीमित करती जा रही हैं। किन्नर समुदाय के लोग भी इस मान्यता को तोड़ रहे हैं। नाचने-गाने के अतिरिक्त यह वर्ग आज शिक्षा, रोजगार जैसे साधनों का सहारा लेकर सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक सरोकार में भी अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है।

'रामायण' के अतिरिक्त 'महाभारत' जैसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष जैसे दार्शनिक पक्षों की व्याख्या करने वाले वेदव्यास द्वारा रचित ग्रन्थ में किन्नर (थर्ड जेंडर) समुदाय के सन्दर्भ में अनेक प्रसंग और प्रचलित मान्यताएँ प्राप्त होती हैं। 'महाभारत' की एक कथा में एक स्त्रैण पुरुष मिथकीय शिखंडी का जिक्र आता है, जो अपने पूर्वजन्म में **अम्बा** नामक एक राजकुमारी थी और जिसका अपहरण भीष्म ने अपने भाई **विचित्रवीर्य** के साथ विवाह करने हेतु किया था। **अम्बा** नामक राजकुमारी किसी अन्य पुरुष को चाहती थी। इसी कारण उसका विवाह भीष्म के भाई **विचित्रवीर्य** के साथ नहीं हो सका। अपहरण किये जाने पर अम्बा से उस व्यक्ति ने भी विवाह करने से इनकार कर दिया जिसे वह चाहती थी। इस स्थिति में **अम्बा** ने **भीष्म** से विवाह करने का निवेदन किया। अंतः भीष्म ने भी अपनी आजीवन विवाह न करने की प्रतिज्ञा के कारण यह प्रस्ताव ठुकरा दिया। प्रस्ताव अस्वीकार

कर देने के कारण **अम्बा** ने **भीष्म** को अभिशापित कर दिया तुम्हारी मृत्यु का कारण मैं बनूँगी। अतः जब पांडवो और कौरवों में युद्ध हुआ तो **अम्बा** नामक राजकुमारी अपने अगले जन्म में **शिखंडी** एक लड़की के रूप में जन्म लिया और यक्ष की सहायता से पुरुषत्व प्राप्त करके **भीष्म** के सामने युद्ध में गई। उसको देखकर **भीष्म** ने अपने धनुष-बाण त्याग दिए और कहा :

> **"व्रतमेतन्यम सदा पृथ्वियामपि विश्रीतम।**
>
> **स्त्रियाँ स्त्रीपूर्व कै चैव स्त्रीनाम्नि स्त्रीरसरूपाणि ।। 66।।**
>
> **न मुंचेयमहं वाणमिति कौरवनन्दन**।"[1]

इस जीवन में मेरा यह व्रत प्रसिद्ध है कि जो भी पुरुष पहले स्त्री रहा हो जिसका नाम स्त्री के समान हो तथा जिसका रूप, वेश-भूषा, चाल-चलन स्त्रियों जैसी हो और पुरुष रूप में मेरे सामने आयी हो। मैं उस पर बाण नहीं छोड़ सकता। **भीष्म** ने अपनी प्रतिज्ञा के पालनार्थ **शिखंडी** का आदर करके अपने अस्त्र और शस्त्र नीचे जमीन पर रख दिए और **शिखंडी** के माध्यम से **भीष्म** का वध कर दिया जाता है। इसी कारण से सत्य और पांडवों की विजय का मार्ग **शिखंडी** के माध्यम से प्रशस्त किया जाता है।

उपरोक्त समाज के परिप्रेक्ष्य में देखें तो किन्नर समाज पर सामाजिक मान्यताओं को हमेशा थोपा गया है। महाभारत कालीन समय में पांडवों के अज्ञातवास के दौरान **अर्जुन** का विराट नरेश के यहाँ '**वृहन्नला**' के रूप में किन्नर का रूप धारण करके रहना, किन्नर समुदाय के प्रतिनिधित्व को दर्शाता है। **अर्जुन** की इस स्थिति का कारण **उर्वशी** नामक अप्सरा का प्रणय निवेदन अस्वीकार कर दिए जाने पर अभिशापित किया जाना है।

> **"तबपित्राभ्यनुज्ञातां स्वयं च गृह पागताम्।**
>
> **यश्यामन्मा नाभिनन्देन: था: कामवाणवंशगताम् ।।49।।**

---

[1] वेदव्यास, श्री महर्षि. महाभारत (अम्बोपाख्यानपर्व).गोरखपुर : गीताप्रेस ,संवत् 2072,पृष्ठ 569

**तस्मात् त्वं नर्तनः पार्थ स्त्रीमध्ये मानवर्जितः ।**

**अपुमानिती विख्यातः षण्ढवद् विचरिष्यसि ।।50।।"**[1]

**अर्जुन** में तुम्हारे पिता **इंद्र** के कहने से मैं स्वयं तुम्हारे घर पर आयी हूँ ,और कामबाण से घायल हो रही हूँ, फिर भी तुम मेरा आदर नहीं करते । अतः तुम्हें स्त्रियों के बीच में सम्मान सहित होकर नर्तक बनकर रहना पड़ेगा । तुम नपुंसक कहलाओगे और तुम्हारा आचार विचार–व्यवहार हिजड़ों के ही समान होगा । **अर्जुन** का यह रूप समाज में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है । इससे यह भी प्रमाण मिलता है कि 'महाभारत' कालीन समय में किन्नरों की स्थिति अच्छी थी । 'महाभारत' 'में एक जगह **अर्जुन** और **उलूपी** के पुत्र **अरावन** का उल्लेख मिलता है । कई जगह इसे **अरावन** के नाम से भी जाना जाता है ।

**"तै सजित्वा महाराज नागराजसुतासुतः।**

**पौरुषव्यापयस्तूर्ण व्यधमत तव वाहिनीम्।।२३।।"**[2]

**अरावन** नागराज विधवा कन्या **उलूपी** का पुत्र था । **अरावन** को हिजड़ो का आदि पुरुष माना जाता है । एक बार किसी कारण **अर्जुन** को हस्तिनापुर छोड़कर **द्रोपदी** से दूर जाना पड़ा । वह घूमते-घूमते बहुत दूर निकल पड़े । इसी समय उत्तर-पूर्व में **अर्जुन** और **उलूपी** का प्रेम पनपा और इसी के परिणाम स्वरुप **अरावन** का जन्म हुआ । आगे चलकर जब कौरवों और पांडवो के बीच युद्ध हुआ और विजयी होने के लिए एक राजकुमार की नरबलि की आवश्यकता हुई तो **अरावन** ने अपने आप को इस बलि के लिए प्रस्तुत कर दिया । बलि देने के पहले उसने एक शर्त रख दी कि मृत्यु से पहले वह एक रात के लिए विवाहित जीवन का आनन्द लेना चाहता है । कोई भी अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ करने को तैयार नहीं हो रहा था, क्योंकि एक रात के बाद अपनी बेटी को विधवा कोई नहीं देख सकता था । इस स्थिति में **श्रीकृष्ण** ने मोहिनी का रूप धारण किया और अरावन के साथ एक

---

[1] वेदव्यास, श्री महर्षि. महाभारत (इन्द्रलोकभिगमन).गोरखपुर : गीताप्रेस , संवत् 2072,पृष्ठ 966

[2] वेदव्यास , श्री महर्षि, महाभारत (भीष्म वध पर्व ).गोरखपुर : गीताप्रेस , संवत् 2072, पृष्ठ 2072

रात उसकी विवाहिता के रूप में रहे और अगले दिन उसकी मृत्यु पर विलाप भी किया। "**ऐसा कहा जाता है कि दक्षिण भारत के कूवगम, विल्लेपुरम, तमिलनाडू में अरावन का मन्दिर है, वहाँ प्रत्येक वर्ष हिजड़े स्त्रैण कृष्ण के रूप में स्वयं को स्थापित करते हैं और उन्हें उपालंभ देने का कार्य करते हैं। किन्नर स्वयं में बसे (आदि) पुरुष के रूप में जहाँ अरावन को देखते हैं, वहीं स्त्रैण कृष्ण उनके भीतर की आधी स्त्री को जीवित रखता है। संभवतः इसलिए इन्हें अरावनी भी कहते हैं**।"[1]

किन्नर समुदाय की मिथकीय परम्पराओं ,प्राचीन इतिहास और मिथक दोनों जगह महत्वपूर्ण उपस्थिति देखने को मिलती है। इससे यह बात समाने आती है की प्राचीन समय से ही समाज में इनकी उपस्थिति मिलती आयी है, चाहे वह सम्मानजनक रही हो या अपमानजनक। समाज में इनके द्वारा किए गए अनेक वीरता पूर्ण कार्यो का चित्रण मिलता है लेकिन यह सब आज एक अपवाद के रूप में ही देखा जाता है। किन्नर समुदाय के लोग भी सजग सचेत होते जा रहे हैं। किन्नर (थर्ड जेंडर) समुदाय के सन्दर्भ में लोकप्रचलित व मिथकीय मान्यताओं के परिप्रेक्ष्य में बात करते हैं तो देखने को मिलता है कि सभ्य कहे जाने वाले मुख्यधारा के समाज में आज भी थर्ड जेंडर समुदाय के लोग आमतौर पर उपहास और मनोरंजन के साधन माने जाते हैं। **लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी** जो कि किन्नर वर्ग से ही हैं उन्होंने कहा है कि- अगर इस वर्ग के लोगों को पर्याप्त अवसर दिए जाए तो यह पिछड़ा हुआ समुदाय भी मुख्यधारा के समाज के साथ कदम से कदम मिलकर चल सकता है। लेकिन इसके लिए संघर्ष और समाज की अपनी मानसिकता में परिवर्तन लाने की जरुरत है। परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है। इसलिए चाहे सामजिक हो या राजनैतिक चाहे वह प्राकृतिक ही क्यों न हो समय अनुसार परिवर्तन होगा। आज समाज और सरकार किन्नरों के प्रति एक सकारात्मक रवैया अपना रहा है।

---

[1] सिंह , विजेंद्र प्रताप. उद्धृत . जनकृति अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका . (सं) कुमार गौरव, वर्ष 2 ,अंक 18 ,अगस्त 2016 , पृष्ठ 9

समाज के सभी वर्ग अपने अस्तिव और अस्मिता के लिए संघर्षरत है और किन्नर समुदाय (थर्ड जेंडर) भी आज धीरे–धीरे अपने अधिकारों की ओर अग्रसर होता दिखाई दे रहा है।

## किन्नरों का मिथक और सत्य के मध्य विविध सूत्र

बच्चन सिंह ने मिथक को परिभाषित करते हुए कहा है कि, "**मिथक आदिम मनुष्य की भाषा है, जिसके माध्यम से वह जीवन और प्रकृति के रहस्यों के प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं और अलौकिक गाथाओं के रूप में अभिव्यक्त करता था। यह आदिम यथार्थ के प्रति सामूहिक अवचेतन मन का सहजस्फूर्त बिम्बात्मक सृजन है। सूर्य का उगना, चंद्रमा की शीतलता, बादलों की उमड़-घुमड़, विजली की चमक, फसलों का उगना आदि उसकी दृष्टि से विस्मयात्मक, रोमांचकारी और रहस्यात्मक व्यापार थे। इन्हीं के पीछे व्यापारों के इर्द-गिर्द मिथक–चक्र घूमा करता था।**"[1] मिथक को समाज के पवित्र इतिहास का वृत्तान्त प्रस्तुत करने वाली रचना के रूप में देखा जा सकता है। जिसमें पुरा-ऐतिहासिकता की प्रवृत्ति को आत्मसात करने कि क्षमता होती है। इसमें कल्पनाशीलता का गुण पाया जाता है। वह धार्मिक विश्वास, निष्ठा और मानव जीवन के प्राकृतिक सरोकारों से सम्बद्ध है और साथ-साथ ही उनका निर्माण सामूहिक अवचेतन के द्वारा होता है। मिथकों की अपनी एक परंपरा होती है, जिसका संबंध प्रत्येक आदिम समाज में घटित-अघटित तत्वों की निर्माण प्रक्रिया के सम्बन्धों की प्राचीनतम व्याख्या से होती है। प्रत्येक समाज अपनी संस्कृति व परंपरा का अनुसरण इन्हीं ऐतिहासिक एवं मिथकीय ग्रन्थों से सैद्धान्तिक विषयों को प्राप्त करके करता है। प्राचीन आदर्शमूलक व्यवस्था का मनुष्य उतना ही अनुसरण कर रहा है जहां तक वह समय सापेक्षतः उपयोगी सिद्ध होत हो। मनुष्य एक चिंतनशील प्राणी है। मनुष्य सृष्टि के प्रारम्भ से ही बौद्धिक विकास क्रम की ओर निरंतर अग्रसर दिखाई देता आ रहा है। भारतीय साहित्य के अनेक पुराणों व प्राचीन ग्रन्थों में सृष्टि के उत्थान-पतन की प्रक्रिया का

---

[1] सिंह, बच्चन. आधुनिक आलोचना के बीज शब्द . नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन ,पृष्ठ 83

वर्णन मिलता है। "मि**थकों के माध्यम से किसी भी समाज व जाति की भविष्योंन्मुखी दृष्टि का ज्ञान होता है और उन्हें सुदृढ़ आधार मिलता है। वे वर्तमान का व्यावहारिक पक्ष उजागर करते हैं, अतीत से अपना संबंध बनाए रखते हैं और वर्तमान को अर्थकता प्रदान करते हैं**।"[1]

भारतीय समाज लैंगिक आधार पर मुख्यतः दो वर्गों में विभाजित है, स्त्री और पुरुष। इन्हीं दो वर्गों के साथ-साथ तृतीय लिंग प्रकृति के इंसान भी उपस्थित है। जिनकी उपस्थिति समाज में देखी तो जाती है, लेकिन सम्मानजनक जीवन देखने को नहीं मिलता। समान्यतः समाज में ऐसे मानव के लिए किन्नर अथवा हिजड़ा शब्द प्रयोग किया जाता रहा है। यह वे लोग हैं, जो लैंगिक आधार से न तो पूर्णतः पुरुष होते हैं और न तो स्त्री। कुछ विशेष अंगों एवं गुणों का नियम अनुपात में विकास न हो पाने के कारण ये लोग सामान्य स्त्री-पुरुष की भांति न तो संभोग कर पाते हैं और न ही गर्भ धारण कर सकते हैं।

भारतीय मिथकीय ग्रन्थों, रामायण व महाभारत में भी किन्नर (थर्ड जेंडर) समाज के संबंध में अनेक उदाहरण मिलते हैं, जिनका उल्लेख हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं। यहाँ पर किन्नरों का मिथक और वर्तमान समाज और मिथकों में वर्णित प्राचीन समाज की अवधारणा इनके प्रति क्या रही ? 'रामायण', 'महाभारत' कालीन समाज में इनका स्थान और आधुनिक समाज में इनका आज क्या स्थान है ? इसका व्यापक विश्लेषण प्राचीनता और आधुनिकता के संदर्भ में करना ही तर्क संगत रहेगा। मिथकों की बात करें तो "**रामकथा न केवल भारत की अपितु विश्व की अत्यंत लोकप्रिय कथा है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी की बोलियों, भारतीय भाषाओं तथा विश्व की अन्य भाषाओं में रचनाकारों ने अपने देशकाल की प्रेरणा प्रदान करने के लिए रामकथा की विविध काव्यविधाओं के माध्यम से प्रस्तुति की है**।"[2]

---

[1] गर्ग, पुष्पा. आधुनिक कविता और मिथक. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2006,पृष्ठ 47

[2] गर्ग, पुष्पा. आधुनिक कविता और मिथक. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन ,2006 ,पृष्ठ 182

**महर्षि वाल्मीकि** द्वारा रचित महाकाव्य 'रामायण' के आदिनायक **राम** को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'रामायण' एक ऐसा महाकाव्य है जिसको भारतीय जनमानस के धर्म संस्कृति से अलग करके नहीं देखा जा सकता अथवा सम्पूर्ण मानव समाज इससे प्रभावित है। 'रामायण' में किन्नर जाति के संदर्भ में भी प्रसंग आते हैं। वाल्मीकि कृत 'रामायण' के उत्तरकाण्ड में कहा गया है कि कैलाश पर्वत पर भगवान शिव अर्ध स्त्री का रूप धारण करके विहार कर रहे थे। इसके प्रभाव के कारण वहाँ उपस्थित सभी जीव जन्तु स्त्री रूप में परिवर्तित हो गए। यह प्रभाव राजा **'इल'** और उनके सिपाहियों पर भी पड़ा। स्त्री का रूप धारण किए हुए राजा इल अपने सिपाहियों के साथ भगवान शिव एवं पार्वती के समक्ष पहँचे तो भगवान शिव ने कहा कि, "**पुरुषत्व के अतिरिक्त कुछ भी मांगों। इस पर दुःखी इल ने माता पार्वती से अनुनय विनय किया। इस पर माता पार्वती ने कहा कि मैं आधा ही वर दे सकती हूँ, क्योंकि मेरा आधा भाग शिव में समाहित है। इसलिए मेरे वरदान से तुम एक माह स्त्री और एक माह पुरुष बनकर सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करोगे**।"[1] इसी रूप में एक माह सुंदर स्त्री **'इला'** और एक माह तक राजा **'इल'** के रूप में जीवन यापन करने लगे।

लेकिन आज इन मिथकों के सच को विज्ञान ने नकारते हुए किन्नरों की मिथकीय अवधारणाओं पर तर्क देते हुए नया सिद्धान्त प्रतिपादित किया है, जो तर्क पर आधारित सत्य एवं प्रामाणिक है। मिथकों में किन्नरों कि उत्पति के संबंध में अनेक अवधारणाओं को स्वीकृति प्रदान की गई है लेकिन आज वैज्ञानिकता के आधार पर नई और प्रमाणिक अवधारणा प्रस्तुत की गई है। वैदेही कोठारी के अनुसार, "**महिला में 'एक्स' क्रोमोसोम होते हैं और पुरुष में 'एक्स' और 'वाय' दोनों क्रोमोसोम होते हैं। पीरियड्स के कुछ दिनों पहले जो डिब्बी जननांगों के रास्ते बाहर आता है। यदि वह पुरुष शुक्राणुओं के 'एक्स' क्रोमोसोम के संपर्क में आता है तो गर्भ में बालिका, अगर 'वाय' के संपर्क में आता है तो बालक की रचना होती है। अगर दोनों**

[1] मिश्रा, नागेश .ब्राह्म जी की छाया से हुई जिनकी उत्पत्ति ,गजब पोस्ट html

**क्रोमोसोम की बराबर की मात्रा में डिंब को मिलने की स्थिति में प्राकृतिक विकार आने की आंशका होती है** ।"[1] इसी जैवकीय विकार के कारण लिंग दोष या शारीरिक कमी का बच्चे का जन्म होता है।

किन्नरों से संबंधित जानकारी पूर्व में दी जा चुकी है जो उनकी मिथकीय उपस्थिति एवं मान्यताओं को स्पष्ट करती है। लेकिन यहाँ पर किन्नरों के मिथक के सत्य और वर्तमान समाज के यथार्थ के आधार पर ही विस्तृत अध्ययन किया जायेगा। जैसा रामायण में एक प्रसंग आता है। 14 वर्ष बाद वनवास से श्रीराम अयोध्या लौटे तो नाच-गाना हुआ और प्रसन्न होकर किन्नरों को आशीर्वाद दिया की किन्नर किसी भी परिवार में शुभ अवसर पर आशीर्वाद दे पाएंगे। लेकिन यह नाँचने-गाने का आशीर्वाद आज किन्नरों को अभिशाप बन गया है। तीसरी ताली उपन्यास का पात्र विजय कहता है कि, "**मैं नाचना-गाना नहीं नाम कमाना चाहता था। भगवान राम के उस मिथक को झुठलाना चाहता था, जिसके कारण तीसरी योनि के लोग नाँचने-गाने के लिए अभिशप्त हैं। परिवार से वे बेदखल हैं** ।"[2] नाचने-गाने वाले पेशे ने किन्नर समुदाय को उसकी सीमित परिधि में ही बांध कर रख दिया है। नाचने-गाने के नाम पर आज उनका शोषण हो रहा है। समाज उनको सिर्फ शुभ अवसरों के समय ही याद करता है। घर पर उनको उनका शगुन देकर विदा करके क्या समाज एक बार भी सोचता है कि यह लोग नाचने-गाने के लिए मजबूर क्यों हैं ? प्राचीन मान्यताओं और रूढ़िवादी परम्पराओं ने किन्नरो को आँधी का तिनका बनाकर विकल्पहीनता की कुण्ठा से ग्रसित कर दिया है। आज यह लोग समाज के द्वारा थोपी गई सीमित परंपरा को तोड़कर डाक्टर, इंजीनियर, शिक्षक व सामाजिक, राजनीति तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति का सम्मानजनक प्रमाण देना चाहते हैं।

---

[1] सिंह , विजेंद्र प्रताप. उद्धृत . जनकृति अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका . (सं) कुमार गौरव, वर्ष 2 ,अंक 18 ,अगस्त 2016 , पृष्ठ 3

[2] सौरभ, प्रदीप . नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन , 2016 , पृष्ठ 195

'रामायण' जैसे ग्रंथ लोकव्यापी है तो 'महाभारत' मिथकीय ग्रंथ। जिसमें केवल धार्मिक संस्कृति का चित्रण नहीं है बल्कि भारतीय दर्शन के अंतर्गत आने वाली धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष से संबन्धित अवधारणाओं का संग्रहण गया है। महाभारतकालीन समाज जिसमें जाति, वर्ग विभेद की मान्यता अपनी संपूर्णता के साथ देखने को मिलती है। किन्नर समुदाय के संदर्भ में भी अनेक मान्यताएँ देखने को मिलती है। महाभारतकालीन समाज में जहाँ एक ओर शिखंडी जैसे वीर योद्धा का प्रमाण मिलता है वहीं वृहन्नला का विराट नरेश के यहाँ सम्मानजनक जीवन देखने को मिलता है। अरावन महाभारत का एक ऐसा पात्र है जिसने धर्म और सत्य की विजय के लिए अपने प्राणों का बलिदान दे दिया।

किन्नरों की अस्मिता पर बात करे तो देखने को मिलता है कि मिथक और इतिहास में किन्नरों का  तना दयनीय जीवन नहीं  था। भारत में अंग्रेजों के आगमन के साथ ही इनकी स्थिति दयनीय होती नजर आती है। भारत जब स्वतंत्र हुआ और नए संविधान का निर्माण किया गया, सभी को समानता का अधिकार दिया गया, लेकिन किन्नर को अपना क़ानूनी अधिकार बहुत संघर्ष के बाद सन् 2014 में ही मिल सका। अधिकार समय से ही सही लेकिन मिला तो पर समाज आज भी किन्नरों को समानता की नजरों से नहीं देखता। आज भी वर्चस्ववादी संस्कृति के लोग इनको गुलाम बना कर रखना चाहते हैं। 'तीसरी ताली' उपन्यास में विहार के कुछ स्थानों की बात की गई है जहाँ पर आज भी लौंडा प्रथा का एक प्रकरण मिलता है। **बाबू श्याम** सुन्दर सिंह को तवायफों के साथ साथ लौंडा रखने का भी शौक था।

पूँजीपतियों और वर्चस्ववादी व्यवस्था के इन लोगों के सत्य और ऐसे लोगो का दर्द जिनका इन लोगों  के हाथों शोषण किया जाता है , 'तीसरी उपन्यास' में  **ज्योति** नाम के पात्र द्वारा व्यक्त किया गया है, **"माना मैं मर्द हूँ, लेकिन ये समाज मुझसे मर्द का काम लेने के लिए राजी नहीं है। मुझे इस समाज ने मादा की तरह भोग की चीज में तब्दील कर दिया है। मैं मर्द रहूँ या फिर हिजड़ा बन जाऊँ इसमें किसी को कोई फर्क नहीं पड़ेगा। पेट की आग तो बड़ों-बड़ों को न**

**जाने क्या से क्या बना देती है।**"[1] किन्नरों को आज रोजगार की समस्या है क्योंकि उनमे शिक्षा का आभाव अधिकतर देखने को मिलता है। इसलिए अधिकतर किन्नर आपराधिक कार्यो में अपने आप को लिप्त कर लेते हैं, जहाँ से वह वापस नहीं आ पाते।

सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानव समाज में इनकी उपस्थिति देखने को मिलती है। समाज और सृष्टि के संचालन में लगभग बराबर की हिस्सेदारी थी। शुभ अवसरों पर आशीर्वाद देने वालों को सिर्फ हिकारत भरी नजरों से देखा जाता है। किन्नर समाज के लोगों ने आज समाज की परंपरावादी व रूढ़िवादी प्रवृत्तियों को तोड़कर नए आयाम स्थापित किए हैं। राजनैतिक क्षेत्रों में **शबनम मौसी,** शिक्षा के क्षेत्र में **मधु किन्नर,** देश की सबसे पहली किन्नर प्रिंसिपल बनना, **कमला बुआ** का महापौर बनना राजनैतिक क्षेत्रों में भी अपनी स्थिति का एहसास दिलाना। **लक्ष्मीनारायण** त्रिपाठी को '**महामंडलेश्वर**' की उपाधि और अपनी आत्मकथा '**मैं लक्ष्मी**, **मैं हिजड़ा**' लिखा जाना सांस्कृतिक व साहित्यिक क्षेत्र में अपनी पहचान व अस्तित्व के आज अनेक मार्ग प्रशस्त करती हैं। इन सभी तथ्यों केआधार पर कहा जा सकता है कि किन्नरों के मिथक और सत्य के मध्य ऐसे अनेक बिंदु है, जिनमे आज बहुत फर्क दिखाई देता है।

## किन्नरों की पहचान का प्रश्न

मानव सभ्यता एवं संस्कृति के विकासक्रम में व्यक्ति परिवार एवं समाज का सबसे अधिक महत्व रहा है। एक बच्चा जन्म परिवार में ही लेता है और वह समस्त व्यावहारिक मानवीय क्रियाकलाप नियम, सिद्धान्त परिवार समाज से सीखता है। समाज व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जो उसके वास्तविक रूप से सामाजिक प्राणी होने के लिए अति आवश्यक है। किसी भी व्यक्ति या समाज की उसकी अपनी एक विशिष्ट संस्कृति एवं परंपरा होती है। चाहे वह नगरीय हो या ग्रामीण। उन सभी की अपनी सार्वभौमिकता होती है। प्राचीन परिवारों की

---

[1] सिंह , विजेन्द्र प्रताप . हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर.कानपुर : अमन प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 78

आधुनिक परिवारों से तुलना करें तो प्राचीन परिवारों में सदस्यों की संख्या अधिक होती थी, जिसे संयुक्त या विस्तृत परिवार कहते थे। आधुनिक परिवार को देखें तो उसमें केवल पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे ही रहते हैं। जो संख्या में काफी कम होते हैं, जिन्हें एकाकी परिवार कहा जा सकता है।

प्रत्येक परिवार की अपनी विशिष्ट परंपरा या सिद्धान्त होते हैं। उसी परंपरा पर चलना परिवार के सदस्यों की एक नैतिक ज़िम्मेदारी बन जाती है। परिवार में सभी सदस्य एक साथ मिल-जुल कर रहते हैं, और दैनिक कार्य करते रहते हैं या फिर मिल-जुल कर कोई विशिष्ट उद्देश्य प्राप्ति हेतु एक-दूसरे के सहयोगी बनते हैं। परिवार समाज का वह छोटा समूह है, जिसमें पति पत्नी रहते है, । जो यौन-सम्बन्धों पर आश्रित है तथा संतान के जन्म और पालन-पोषण की व्यवस्था करते हैं। जिनके आपसी सौहार्द्र और सहयोग के द्वारा ही समाज का निर्माण होता है, जिसमें एक परिवार नहीं बल्कि एक से अधिक परिवार आपस में मिल-जुल कर काम करते हैं। लेकिन समाज का निर्माण परिवार से ही होता है। "वृहद् हिंदी कोश में समाज का अर्थ निन्म प्रकार से दिया गया है-

**(अ) मिलना तथा एकत्र होना**

**(ख) वर्ग दल या समूह**

**(ग) समान कार्य करने वालों का समूह विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए संगठित संख्या**।"[1]

समाज का निर्माण एक परिवार और उनके सदस्यों के आपस में मिलने या फिर एक परिवार का दूसरे परिवार में मिलाप के कारण ही होता है। समाज के निर्माण में परिवार और उसके सदस्यों की भूमिका के सम्बन्ध में। परिवार एक ऐसी संस्था है जिसके माध्यम से बच्चों को नैतिक मूल्यों ,आदर्श और संस्कारों की शिक्षा दी जाती है। समाज इस शिक्षा के उपयोग की पहली पाठशाला होती है, जिसमें व्यक्ति अपने अन्दर के ज्ञान का विस्तार करता है और सीखता भी है।

---

[1] सिंह,रवीन्द कुमार . संत काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन , 2005, पृष्ठ 19

व्यक्ति और समाज का बहुत गहरा संबंध है, क्योंकि व्यक्ति की पहचान उसके परिवार और समाज से ही होती है। नगरों के नाम से यदि व्यक्ति की पहचान को हटा लिया जाएँ तो उसके पास शेष अपने परिवार की ही पहचान रह जाती है। समाज एक से अधिक लोगों के समुदाय को कहते हैं। समाज के लिए अनेक शब्द प्रयोग किए जाते हैं। जैसे- समाज, समूह, संस्था, समिति, समुदाय तथा संस्कृति आदि बहुत से शब्द हैं लेकिन समाज शब्द का प्रयोग लोग सही अर्थों में नहीं किया जाता। आधुनिक समाज में कभी-कभी कुछ व्यक्ति किसी भी संगठन को समाज कह देते हैं। कभी-कभी कुछ लोग धर्म भाषा के नाम पर समाज को परिभाषित करते हैं। लेकिन यह-सब मत गलत है। मैकाइवर एवं पेज ने समाज को सही अर्थों में परिभाषित करते हुए कहा है कि-"**समाज रीति-रिवाजों और कार्य विधियों की अधिकारिता और पारस्परिक सहयोग की, अनेक समूहों और उपसमूहों की मानव व्यवहार के नियंत्रणों और स्वाधीनताओं की व्यवस्था है। इस सदैव परिवर्तनशील जटिल व्यवस्था को हम समाज कहते हैं। समाज सम्बन्धों का जाल है**।"[1] समाज हम व्यक्ति के समूहों को नहीं कह सकते बल्कि समाज तो वह है जिसमें व्यक्तियों के बीच आपसी सम्बन्धों की सौहार्द्रपूर्ण व्यवस्था हो। समाज एक ऐसी व्यवस्था होती है जिसमें व्यक्ति एक-दूसरे के सम्बन्धों में बंध जाता है और ऐसी व्यवस्था को ही समाज कहना तर्कसंगत होता है।

किसी भी धर्म, जाति या भाषा-भाषी लोगों का अपना एक विशिष्ट समूह होता है। हम किसी भी व्यक्ति, समाज, जाति, धर्म की बात करते हैं तो हमें व्यक्ति या समाज को केंद्र में रखकर ही अध्ययन करना आवश्यक होता है। किसी भी व्यक्ति की पहचान उसके समाज से होती है। डॉ नगेंद्र समाज संरचना के संबंध में कहते है कि, "**समाज से अभिप्राय समुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के**

[1] पाटिल , अशोक डी. एस. एस भदौरिया .मूलभूत समाजशास्त्रीय ,भोपाल : मध्यप्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी ,1992 ,पृष्ठ 70

**निमित्त जाने अनजाने कर लेते है ।"**[1] आदिम समाज से ही किसी की प्राथमिकता इस आधार पर निश्चित की जाती रही है कि समाज एवं अर्थव्यवस्था के विकास में उसका क्या योगदान है।

भारतीय समाज में आज भी समाज में दो ही लिंग (स्त्री और पुरुष) की महत्ता और उपादेयता मानी जाती है किसी तीसरे की नहीं। भारत में इस वर्ग को विभिन्न नामों से जाना जाता रहा है। भिन्न-भिन्न भाषाओं के तर्ज पर भिन्न-भिन्न नाम भी किन्नरों के लिए प्रयोग किए जाते हैं। **"इस समुदाय को उर्दू में 'खोजवाँ अथवा हिजड़', हिन्दी और बंगाली में 'हिजड़ा', कन्नड में 'माद्दा', तमिल में 'नंगाई/अरुवन्नी', पंजाब-पाकिस्तान में 'खुसरा' तथा में 'पवैया' कहा जाता है पर ध्यातव्य है कि किसी भी देश-भाषा में 'किन्नर' नहीं कहा जाता है ।"**[2] सभ्य कहे जाने वाली समाज के लोग उन्हें गली की गाली हिजड़ा, 'गे', 'लेस्बियन्स' आदि कई नामों से भी संबोधित करते हैं। किन्नरों की ओर समाज का ध्यान एक ही समय जाता है, जब कहीं यह लोग नाचते-गाते दिखते हैं। लोगों का ध्यान आकस्मिक इनकी ओर आकर्षित हो जाता है लेकिन कोई भी यह नहीं सोचता की यह लोग कौन है। किस कारण नाचते-गाते पैसे माँगते फिरते हैं।

किन्नरों का अस्तित्व को लेकर जैसा की पहले अध्ययन किया जा चुका है। भारतीय समाज में परम्परा से ही समाज में इनकी उपस्थिति के प्रमाण मिलते हैं। किन्नरों का बौद्ध, सिख, जैन, हिन्दू आदि धर्म संस्कृतियों के धर्मग्रथों में बराबर उल्लेख मिलता है । भारतीय मिथक 'रामायण', 'महाभारत' से लेकर इतिहास के तथ्य इनके अस्तित्व को मान्यता प्रदान करते हैं। प्राचीन काल से ही मान्यता है कि किन्नर जाति के लोग नाच-गा कर अपना दैनिक जीवनयापन करते हैं, किन्तु आधुनिक समाज में इनका यह पेशा बेरोजगारी और अशिक्षा के कारण अपराधी प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होता दिखाई दे रहा है। किन्नरों की बेरोजगार जैसी समस्या आज मुख्य समस्या है। इसका मुख्य कारण

---

1 कुलकर्णी, शोभा . (शोध प्रबंध).आठवें दशक के उपन्यासों में समाजशास्त्रीय अध्ययन .औरंगाबाद :डॉ. बाबा साहब अंबेडकर मराठावाडा वि.वि ., 2006 ,पृष्ठ 18

2 सिंह, प्रताप विजेंद्र, रवि कुमार गौड़. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनग प्रकाशन , 2016,पृष्ठ 7

नकली बनावटी किन्नरों का समूह में शामिल होना। असली किन्नर कम ही हैं, और जो असली किन्नर होता है वह कभी अश्लील व्यवहार नहीं करते। नकली-असली के संदर्भ में देखें तो किन्नर सबसे ज्यादा अपने आप को **'स्त्री'** कहलवाना पसंद करते हैं। जो एक पुरुष के शरीर में फंसी मन और आत्मा से औरत होती है। "**हिजड़ों की चार शाखाएँ हैं– बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बुचरा पैदाइशी हिजड़े हैं, नीलिमा स्वयं बने, मनसा स्वेच्छा से शामिल तथा हंसा शारीरिक कमी के कारण बने हिजड़े हैं।**"[1] समाज व परिवार से बहिष्कृत किए जाने पर यह लोग अपने परिवार व एक अलग समाज का निर्माण करते हैं। हमारी भारतीय संस्कृति में गुरु-शिष्य परंपरा की तरह किन्नरों में भी गुरु परंपरा होती है। इनका प्रमुख एक आध्यात्मिक गुरु होता है, जो किन्नरों के लिए नृत्य, गायन, बधाई के लिए प्रशिक्षित करता है। एक गुरु की देखे-रेख मे 5 और 6 शिष्य या इससे अधिक शिष्य होते हैं। यह गुरु ही किन्नरों के नियमों व सिद्धांतों का निर्माण करते हैं। किन्नरों की रक्षा की ज़िम्मेदारी गुरु की होती है। चाहे डेरे के भीतर हो या बाहर। आपसी विवाद भी गुरु को ही सुलझाने पड़ते हैं। धार्मिक आस्थाओं के चलते इनकी एक इष्ट देवी होती है, जिन्हें 'बुचरा देवी' के नाम से जाना जाता है। किन्नर इन्हें ही 'मुर्गा माता' भी कहते है क्योंकि इनका चित्र भी मुर्गा पर सवारी करते हुए दिखाया जाता है। जब कोई नया किन्नर बालक इनके समूह में शामिल होता है तो यह लोग बड़ी धूमधाम से उसका स्वागत करते हैं। "**समुदाय में नवागत का स्वागत करते है और साथ ही वे उसे रूपान्तरण की एक ट्रांसेक्सुअल योनि की शल्य उत्थान द्वारा बधिया प्रक्रिया के बाद उनके समुदाय का एक हिस्सा बनने का एक विकल्प देते हैं। यह दीक्षा 'संस्कार निर्माण' कहलाता है।**"[2]

किसी भी किन्नर बच्चे को 'बुचरा माता' के सामने बच्चे की दाई प्रक्रिया सम्पन्न करके सम्पूर्ण दुल्हन का श्रृंगार करने के बाद ही समूह में शामिल किया जाता है। गुरु-शिष्य परंपरा के

---

[1] सिंह, प्रताप विजेंद्र, रवि कुमार गौड़. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनग प्रकाशन , 2016,पृष्ठ 31

2 सिंह , विजेंद्र प्रताप. उद्धृत . जनकृति अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका . (सं) कुमार गौरव, वर्ष 2, अंक 18 ,अगस्त 2016 , पृष्ठ 10

अनुसार सम्पूर्ण जीवनपर्यंत एक गुरु स्वीकारना पड़ता है, जिसे माता-पिता के समान दर्जा प्राप्त होता है । किन्नरों के आदर्श सिद्धांतों में भीख माँगना , चोरी करना, हिंसा करना आदि को पाप माना जाता है और मान्यता है कि जब किसी किन्नर की मृत्यु होती है तो उसे दफनाया जाता है । किन्नरों की शवयात्रा रात में ही निकाली जाती है । रात में कब्र में गाड़ने के पश्चात उसको जूते-चप्पल से पीटते हैं। पुरातनवादी इस परंपरा के पीछे मान्यता है कि यह किन्नर योनि बहुत पीड़ा दायक होती है । जूते-चप्पल से इसलिए पीटा जाता है कि मरने वाला दुबारा इस योनि में जन्म न ले ऐसी अवधारणा है । एक ऐसी भी मान्यता है कि किन्नर के मरने के बाद उसके समुदाय में मातम नहीं मनाया जाता बल्कि खुशी मनाते हैं । इनका कहना है कि मरने के बाद इस नरकरूपी जीवन से छुटकारा मिल जाता है ।

इतिहास और मिथकीय समाज में किन्नर समाज की स्थिति जैसी भी रही लेकिन भारत के 1950 नए संविधान में किन्नरों को जरायमपेशा जनजातियों की सूचि से हटा दिया गया लेकिन उनको सम्पूर्ण अधिकार प्रदान नहीं किये गए । धारा 377 का प्रभाव इन पर हमेशा पड़ता रहा । "**नवम्बर** 2009 **में भारत सरकार ने इनकी पुरुषों एवं महिलाओं से अलग पहचान को स्वीकृति प्रदान की तथा निर्वाचन सूची एवं मतदाता पहचान पत्रों में इनका 'अन्य' के तौर पर उल्लेख किया । 15 अप्रैल 2014 को उच्च न्यायालय ने तीसरे लिंग के रूप में इनके अधिकारों को मान्यता दी है और सभी आवेदनों में तीसरे लिंग का उल्लेख अनिवार्य भी कर दिया इतना ही नहीं उच्चन्यायालय ने इन्हें बच्चा गोद लेने का अधिकार भी दिया और स्त्री पुरुष बनने का भी अधिकार दिया** ।"[1]

आज किन्नरों को सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में मुख्यधारा के समाज की तरह उपस्थिति देखने को मिल रही है । राजनैतिक क्षेत्र में सफलता पाने वाली पहली किन्नर हिसार, हरियाणा की '**शोभा नेहरू**' हैं जो 1995 में हुए नगर निगम के चुनाव में पार्षद चुनी गई थी । श्रीगंगानगर, राजस्थान में भी '**बसंती**' पार्षद बनी । मध्य प्रदेश में सन् 2002 में किन्नर विधायक,

---

[1] सिंह, प्रताप विजेंद्र, रवि कुमार गौड़. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनग प्रकाशन , 2016,पृष्ठ 53

पार्षद व महापौर थे। देश की पहली किन्नर विधायक **शबनम मौसी,** शहडोल जिले के सोहागपुर विधानसभा सीट से चुनी गई थी। प्रदेश में सन् 2002 में स्थानीय निकाय चुनाव में चार किन्नर चुने गए थे। राजनीति में अपनी जगह बनाने के बाद इन्हें समाज और मीडिया ने अधिकतर किन्नर शब्द का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्नरों के अधिकारों के लिए भारतीय सामाजिक संस्थाओ ने मिलजुल कर काम किया। भारत की तुलना में अन्य देशों में थर्ड जेंडर समुदाय के लोगों को अपने अधिकार बहुत पहले प्राप्त हो चुके हैं।

भारतीय न्यायालय द्वारा किन्नरों को किन्नर शब्द की संज्ञा प्रदान किए जाने पर पर हिमांचल प्रदेश के किन्नौर जनजाति के लोगों ने इस पर आपत्ति जताई है। 'किन्नर' शब्द को परिभाषित करते हुए बंशीलाल शर्मा ने कहा है कि किन्नौर के दूसरे नाम कनौर, कनावर तथा कुनावर हैं। डॉ. कन्हैयालाल के अनुसार "**किन्नर हिमालय में आधुनिक कनौर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र के जनजाति के लोग होते हैं, जिनकी भाषा कन्नौरी, गलचा, लाहौली आदि बोलियों के परिवार की है। किन्नर जनजाति के प्रधान हिमवत और हेमकूट थे** ।"[1] न्यायालय द्वारा थर्ड जेंडर समुदाय को किन्नर पहचान देना किसी जनजाति के अस्तित्व अस्मिता की पहचान का पर्याय होना माना जा रहा है। किन्नौर जाति के लोगों ने विरोध किया। इसका विरोध '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास का पात्र **विनोद** भी करता है थर्ड जेंडर की समस्या आज पूरे विश्व कि समस्या बन गई है। बड़े-बड़े गिरोहों द्वारा नकली किन्नर बनाकर इनके अधिकारों का पैसा लोगों से जबर्दस्ती वसूला जा रहा है। किन्नरों को वैश्यावृत्ति करने पर भी मजबूर किया जाता है। अस्मिताओं के विस्फोट के इस समय में समस्त अस्मितामूलक वर्ग अपने-अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। **लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी उर्फ राजू,** जिनका जन्म किन्नर के रूप में हुआ था। इन्होंने अपनी आत्मकथा "**मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी**" के माध्यम से इस पुरुषसत्तात्मक समाज को करारा जबाब दिया। ओछी मानसिकता के समाज की रूढ़ियों को तोड़कर अपने जीवन में अनेक ऐसे काम किए हैं जो

[1] सिंह , विजेन्द्र प्रताप . हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर.कानपुर : अमन प्रकाशन, 2017, पृष्ठ 147

किन्नर समुदाय के लिए एक प्रेरणा बन सकते है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी ने स्वयं कहा है कि, "**मैं सोई मुद्दत के बाद ऐसी गहरी नींद से जागी हूँ जिससे एक रश्क किया जा सके**।"[1] किन्नर होते हुए भी 'लक्ष्मी' ने समाज के परम्परागत नियमों को तोड़कर एक नए जीवन का सूत्रपात किया। अपनी आत्म कथा '**मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी**' के माध्यम से किन्नरों की समस्याओं को प्रस्तुत किया ,सरकार के सामने किन्नरों को स्वस्थ्य, शिक्षा, रोजगार की उचित व्यवस्था की माँग की।

हजारों वर्षों से पिछड़ा हुआ यह समुदाय आज अपने अधिकारों की माँग कर रहा है। मुख्यधारा के समाज से कह रहा है कि हम भी इंसान हैं। आखिर अन्य बच्चों की तरह हम भी माँ की कोख में नौ महीने रहे होंगे। अंधे, लंगड़े, मनोरोगी को तो यह समाज स्वीकृति दे देता है। फिर हमें क्यों नहीं। लिंग दोष के रूप में पैदा हुए इसमें हमारा क्या दोष है। यह तो प्रकृति का दोष है, जिसे अभिशाप की तरह झेलना पड़ रहा है। उपभोक्तावादी पुरुष प्रधानता वाले समाज के सामने खड़ा हुआ यह समाज अपने मानवीय अधिकारों की माँग कर रहा है। समाज में समानता के साथ रहना है, यही इनकी इच्छा है।

सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक रूप से समानता मिलना ही इनके अस्तित्व और सम्मान की रक्षा है। नहीं तो यह समुदाय समाज की मुख्यधारा में शामिल नहीं हो पाएगा। इन्हें बहिष्कृत करने के बजाय अपने घर में माता-पिता के पास रहने दिया जाए और समाज की इसमें सहज स्वीकृति होना अनिवार्य है। साहित्य के माध्यम से इनके पक्षों को समाज के सामने रखने का प्रयास किया जा रहा है। उपन्यासों के अतिरिक्त कई आलोचनात्मक संपादित पुस्तकें जैसे **'विमर्श का तीसरा पक्ष'** और पारस दसोत ने किन्नरों के लघुकथाओं के क्षेत्र में **'मेरी किन्नर केन्द्रित लघुकथाएं**' (2013) में प्रकाशित एक महत्वपूर्ण पुस्तक के रूप किन्नर समुदाय के अस्तित्व की पहचान कराती है। हिन्दी साहित्य में किन्नर समुदाय पर केन्द्रित डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह की उपन्यासों पर केन्द्रित आलोचनात्मक पुस्तक '**हिन्दी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर**' एक महत्वपूर्ण

---

[1] त्रिपाठी, लक्ष्मीनारायण.मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन , 2015, कवर पेज

पुस्तक है। उन्होंने  बहुत सराहनीय काम किया गया है। किन्नरों के अस्तित्व और अस्मिता के सन्दर्भ में  ‘प्रस्तुत उपन्यास **‘पोस्ट बॉक्स नो. 203 नाला सोपारा**’ उपन्यास अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उपन्यास में किन्नरों के परंपरागत पेसे को ठुकराने का प्रयास किया गया है।एक नयी पहचान के साथ सम्मानजनक जीवन जीने का मार्ग बताया गया है।

# तृतीय अध्याय

## पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा में व्याप्त सामाजिक चिंतन

समकालीन लेखिका चित्रा मुद्गल का किन्नरों (थर्ड जेंडर) समुदाय की संवेदनाओं उनके दुःख-दर्द को व्यक्त करता व एक नये कथ्य एवं शिल्प में लिखा गया '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास एक नए विमर्श का विस्तार करता उपन्यास है। उपन्यास किन्नर समुदाय के दिन प्रतिदिन के अनुभवों को अपने कथ्य में समाहित किए हुए है। उपन्यास में समाज के अनछुए वर्ग की बात की गयी है, जिसको समाज ने मुख्यधारा से अलग-थलग कर दिया है। उपन्यास में भारतीय समाज की पितृसत्तामक, पूँजीवादी व वर्ण व्यवस्थावादी समाज की मानसिकता का विरोध किया गया है एवं समाज के यथार्थ रूप को सामने लाने का भरपूर प्रयास किया है। जिसके कारण लिंगदोषी के रूप में पैदा हुए अपने मझले बेटे विनोद उर्फ बिन्नी से उसकी माँ को बहुत लगाव होते हुए भी सामाजिक दबाव, घर के भीतर बड़े बेटे-बहू की मानसिक परेशानी और किन्नरों की मंडली के आतंक के डर से माँ को लगभग 14 वर्ष की अवस्था में अंत में अपने किन्नर बेटे विनोद को किन्नर समुदाय को सौंपना पड़ता है। विनोद बेहद प्रतिभाशाली है। स्कूल में हमेशा प्रथम आता है। स्कूल में विनोद और अन्य बच्चों में कोई अंतर नहीं है। अंतर सिर्फ इतना ही है कि वह अन्य बच्चों की तरह स्कूल की चारदिवारी से सट कर पैंट के बटन खोल कर निवृत नहीं हो सकता। प्रकृति प्रदत्त इस शारीरिक विकलांगता के कारण उसे घर से बाहर कर दिए जाने के साथ-साथ नारकीय जिंदगी जीने पर मजबूर कर दिया जाता है।

उपन्यास का पात्र समाज की संकुचित मानसिकता का विरोध करता है। वह अपनी इस शारीरिक कमी को दोष नहीं मानता। भारतीय समाज और किन्नर समुदाय द्वारा थोपी गयी पुरातन मान्यताओं को विनोद स्वीकार नहीं करता है। विनोद अपनी 'बा' से कहता है कि,"**उनके लात, घूसे, थप्पड़ और कानों में गर्म तेल सी टपकती किसी भी सम्बन्ध को न बख्सने वाली**

**अश्लील गालियों के बावजूद न मैं मटक-मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ, न सलमे-सितारे वाली साड़ियाँ लपेट लिपस्टिक लगा कानों में बूदे लटकाने को।**"[1]

वर्षो की गुलामी और संघर्ष के चलते किन्नर (थर्ड जेंडर) समुदाय को अपने समानता के अधिकार प्रदान तो कर दिए गए लेकिन सामंतवादी व पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था वाला यह समाज इनको स्वीकार कर पाने में समर्थ दिखाई नहीं देता। समाज का रवैया आज भी इन किन्नरों के प्रति उदारवादी नहीं देखा जाता इनकी गिनती समाज की सबसे निकृष्टतम संज्ञा के रूप में की जाती है। समाज की यह पुरातन मानसिकता मानवीय मूल्यों और सामाजिक सरोकारों के लिए हानिकारक सिद्ध होती है जिससे किसी भी देश की एकता और अखंडता में बाधा पहुँचती है। उपन्यास की मूल चिंता यही है कि आखिर क्यों किन्नरों को सिर्फ लिंगदोष के आधार पर मानवीय आधिकारों से वंचित कर दिया गया ? उपन्यास के संदर्भ में लेखिका कहती हैं कि,"**लंबे समय से मेरे मन में पीड़ा थी। एक छटपटाहट थी कि आखिर क्यों हमारे इस अहम हिस्से को अलग-थलग किया जा रहा है। हमारे बच्चों को हमसे दूर किया जा रहा है। आजादी से लेकर अभी तक कई रूढ़ियाँ टूटी। लेकिन किन्नरों की जिंदगी में कोई बदलाव नहीं आया। क्यों आखिर इनका दोष क्या है? यही सवाल था जो मुझे बेचैन करता था।**"[2] लेखिका चित्रा मुद्गल ने समाज के प्रत्येक वंचित वर्ग चाहे वह स्त्री हो या दलित हो या फिर किन्नर सबको अपनी लेखनी में शामिल किया है। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास भी मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रारंभ विनोद के द्वारा लिखे गए पत्रों से होता है लेकिन एक माँ की अपने किन्नर बेटे से घर वापसी की अपील के विस्तृत माफीनामे के साथ समाप्त होता है। पत्र-शैली में लिखा गया यह उपन्यास अपनी सार्थकता और महत्व को सही मायनों में सिद्ध करता है।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. 2016 पृष्ठ 9

[2] सिंह ,विजेन्द्र प्रताप. हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर .कानपुर: अमन प्रकाशन.2017.पृष्ठ 145

उपन्यास के प्रारंभ में अपनी स्कूली शिक्षा के दौरान किन्नरों की मंडली को सौंप दिए गए विनोद उर्फ बिन्नी की संवेदनाओं एवं समस्त पीड़ाओं को व्यक्त किया गया है ,जिस तरह की समस्याएं समाज से बहिष्कृत किये जाने परकिन्नरों को झेलनी पड़ती हैं। वह विभिन्न संवेदनाएँ सिर्फ विनोद की ही नहीं हैं बल्कि सम्पूर्ण किन्नर समुदाय के सामाजिक बहिष्कार व तिरस्कारपूर्ण जीवन का यथार्थ है। सामाजिक बहिष्कार की इन समस्त परिस्थितियों का कारण जितना समाज को माना जाता है उतना ही सामाजिक बहिष्कार के साथ राजनैतिक कारण भी  हैं। जिनके कारण समाज के कमजोर एवं असहाय लोगों का शोषण होता है। इन्हीं समस्त तथ्यों के पीछे निहित कारणों का चिंतन कर उनको जानने का अथक प्रयास इस उपन्यास के माध्यम से किया गया है।

पत्र-शैली में लिखे गये इस उपन्यास में पत्र संवादों के माध्यम से विनोद और उसकी 'बा' दोनों  ही भावों, विचारों, संवेदनाओं के प्रेषक और ग्रहणकर्ता की भूमिका में रहते हैं। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास का पहला पत्र 23 जुलाई, 2011 को 3/4 मोहन बाबा नगर, वदरपुर, दिल्ली से और अंतिम पत्र 24 दिसम्बर, 2011 को कमरा, लाजपतनगर, दिल्ली से लिखा गया है, जिसे पोस्ट नहीं किया गया है। इन पत्रों में समाज के समस्त मानवीय मूल्यों सम्बन्धी बिन्दुओं का विश्लेषण किया गया है, जिनका मानव जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जातिगत भेदभाव, लिंग आधारित, वर्ग आधारित विषमता ही आज कल्याणकारी देश के लिए हानिकारक है। वर्तमान दौर में, जब हम इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में पर्दापण कर चुके हैं। औद्योगिक एवं तकनीकी माध्यम से विकसित होने के बाबजूद भी मानव जीवन की समस्याएँ बढती जा रही हैं। भारतीय समाज में एक ओर जाति एवं लिंग आधारित समाज व्यवस्था है तो दूसरी ओर शोषित एवं वंचित समुदायों की वेदनाएँ एवं विवेचनाएँ हैं। मानव जीवन की अनेक समस्याएँ हैं। भूमंडलीकरण के विकसित होते प्रभाव से उपजे बाजारवाद ने मनुष्य को संवेदन शून्य बना दिया है। लोकतंत्र की बुनियाद पर खड़ा हमारा देश आज 'जनतंत्र' को सही मायने में आत्मसात नहीं कर पा रहा है। सामाजिक संदर्भो के इन्हीं बिन्दुओं को केंद्र में रखकर लेखिका चित्रा मुद्गल '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**'

उपन्यास के माध्यम से स्त्री एवं किन्नर समुदाय की संवेदनाओं कों विनोद उर्फ बिन्नी और उसकी 'बा' के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

विनोद किन्नर समुदाय की समस्याओं व अपनी स्वयं के पल-प्रतिपल की वास्तविक जिंदगी से अपनी 'बा' को अवगत कराता है। विनोद की 'बा' को उसके नारकीय जीवन का एहसास होता है और वह विनोद को साहस दिलाती है कि,"**तू विश्वास कर सकता है तो अपनी 'बा' पर विश्वास न डिगने दे। तू जिस नरक से गुजर रहा हैं, वहाँ में तेरे साथ नही हूँ मगर तेरे उस नरक की हर गली मेरी छाती से होकर गुजरती है** ।"[1] 'बा' के द्वारा अपने इस पीड़ा दायक जीवन और समस्याओं के बीच साहस बढ़ाना ही उसके जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है।

समाज की उपेक्षा और अपनों से आहत हुए किन्नर वर्ग के समाज में स्थान के साथ-साथ उनके राजनैतिक और आर्थिक रूप से भी समर्थ होना चाहिए यही लेखिका की सोच है। लेकिन राजनैतिक,सामाजिक संदर्भो में किन्नरों का जो शोषण हो रहा है उसको उपन्यास में बहुत ही मार्मिक तरीके से चित्रित किया गया है। आज देश में किन्नरों का राजनैतिक क्षेत्रों में कम ही स्थान दिखाई देता है लेकिन राजनैतिक लोग इनका प्रयोग अपने स्वार्थ के लिए जरुर बना रहे हैं। विनोद को विधायक जी कम्पूटर की ट्रेनिग दिलवाने से पहले ही शर्त रख देते हैं कि तुम्हें नौकरी मेरे पास ही करनी पड़ेगी। राजनैतिक लोगों की दोहरे स्वार्थनीति के कारण आज यह वर्ग बहुत ही सामाजिक तिरस्कार की पीड़ा झेल रहा है। समाज और राजनैतिक व्यवस्था के अंदर के लोगों की यह कैसी मानसिकता है कि आज मनुष्य-मनुष्य में विषमता के खेल को चुप-चाप देख रहे हैं। लोकतंत्र के इस देश में राजनैतिक व्यवस्था का निर्माण समाज व्यवस्था और समाज संचालन और समाज में समानता और एकता लाने के लिए किया गया है जिसमें जनता अपना प्रतिनिधि स्वयं चुनती है। यह प्रतिनिधि आज जनता का ही शोषण कर रहे हैं। समाज का संचालन और प्रतिनिधित्व करने की वजह समाज के ठेकेदार बन गए हैं।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन . 2016 .पृष्ठ 71

आज देश में जाति, धर्म के नाम पर वोट की राजनीति काम कर रही है। चुनावों के समय नेताओं द्वारा मंचो पर बड़े-बड़े वादे करके जनता को गुमराह करने का काम किया जाता है। राजनैतिक लोगों का हाल हाथी के दातों जैसा है जो खाने के कुछ ओर दिखाने के कुछ ओर हैं। मानवीय संवेदनाओं को साथ में लिए यह उपन्यास किन्नर समुदाय (थर्ड जेंडर) के लिए शिक्षा,रोजगार,और आर्थिक,राजनैतिक,सांस्कृतिक समानता का आग्रह करता हुआ नजर आता है। लेखिका चित्रा मुद्गल ने समाज में निहित उन सभी कारणों को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जिनकी वजह से आज किन्नर समुदाय के लोगों को समाज से बहिष्कृत कर अलग कर दिया जाता है। आजादी से पहले और बाद में हमने समाज में व्याप्त अनेक रूढ़ियाँ तोड़ी जैसे समाज में स्त्री–पुरुष,जातिगत भेदभाव आदि। लेकिन किन्नरों के प्रति यह मानसिकता कब बदलेगी यह प्रश्न लेखिका ने समाज के सामने खड़ा किया गया है।

संवैधानिक अधिकारों की बात करें तो देश के किसी भी नागरिक को उस देश की नागरिकता के आधार पर समानता के अधिकार प्राप्त होते हैं। संविधान सभी को समानता के अधिकार प्रदान करता है लेकिन समाज में आज भी कुछ वर्ग ऐसे हैं, जिनको समाज ने अपनी पुरातन रूढ़िवादी मानसिकता के चलते समाज की मुख्यधारा से बहिष्कृत कर हाशिये पर डाल दिया है। सन् 2009 में किन्नरों को वोट डालने का अधिकार दिया गया इसके बाद सन् 2014 में किन्नरों को स्त्री एवं पुरुष के अतिरिक्त 'अन्य' का दर्जा दिया दिया गया। सरकारी दस्तावेजों में 'अन्य' के रूप में तीसरे जेंडर का दर्जा मिला। बच्चा गोद लेने का तथा स्त्री-पुरुष बनने का भी अधिकार इसमें शामिल है। सन् 2014 में न्यायालय ने तो समानता के अधिकार दे दिए लेकिन इन्हें सामाजिक स्वीकृति कब मिलेगी इस सन्दर्भ में उत्तर देते हुए कहा गया है कि,"**कानून बनाए, बाध्य करे अभिभावकों को। घर से बहिष्कृत बच्चों को वह जिस भी उम्र के पड़ाव में हों, अपने साथ रखें। प्रचार करे, अख़बारों, चैनलों और आकाशवाणी पर विज्ञापनों के माध्यम से। उनकी चेतना को झकझोर, ताकि भविष्य में कोई माता–पिता लोकोपवाद के भय से लिंगदोषी औलाद को**

**दर- दर की ठोकरें खाने के लिए घूरे पर न फेंके** ।"[1] जितने जिम्मेदार परिवार के लोग हैं उससे कम किन्नर और उनके सरदार भी नहीं। इसलिए उपन्यास में लेखिका विनोद के माध्यम से किन्नर समुदाय के लोगों से  अपील की गई है कि आप लोग शपथ लीजिए कि आज के बाद किसी लिंगदोषी नवजात बच्चें-बच्ची को, उसके माता-पिता से अलग नहीं करेगें। उपन्यास में सरकार और समाज दोनों को जिम्मेदार मानते हुए लेखिका कहती हैं कि आज हमारे देश में भ्रूण लिंग जाँच पर तो सजा का प्रावधान है, लेकिन सबसे पहले उन माता-पिता को भी कटघरे में लाने की जरुरत है, जो अपने किन्नर बच्चों को जन्मते ही दूसरों के हाथों सौप कर फेंक देते हैं सड़को और घूरों पर लात घूसे खाने को। विनोद जो उपन्यास का नायक है, वह स्वाभिमानी है, आत्मनिर्भर बनना चाहता है। समाज द्वारा दी गई उपहार स्वरुप वस्तुओं को वह नहीं स्वीकारता। इतना ही नहीं वह सरकार के दिए गए लिंग निर्धारण (O) 'अन्य' को भी नहीं स्वीकारता। वह किन्नर समुदाय के व्यक्तियों की समानता और स्वतंत्रता पर बात करते हुए कहता है कि,"**किन्नर बिरादरी का संघर्ष उन्हें मनुष्य माने जाने का संघर्ष है। फिर (O) अन्य में उन्हें क्यों ढकेला जा रहा है। (O) अन्य को ख़त्म कर देना चहिए, सरकार को** ।"[2] मानवीय संवेदनाओं और उनके संघर्ष को आत्मसात करता हुआ यह उपन्यास भारत जैसे देश की गंभीर समस्या को पाठक वर्ग के सामने प्रस्तुत करता है। आज यह समस्या विराट रूप में विश्व की समस्या बनायी जा सके यहीं उपन्यासकार का लक्ष्य है।

मानवीय अस्तित्व की यहीं चिंता लेखिका को एक प्रतिभाशाली लेखिका होने का गौरव प्रदान करती है। एक व्यक्ति को घर से इसलिए निकाल दिया जाता है क्योंकि वह लिंगदोषी है। इसमें उसकी कोई गलती नहीं है ,बल्कि प्रकृति प्रदत्त दोष को भोगने के लिए वह अभिशप्त है। उन्हें परिवार और समाज से विस्थापन की पीड़ा और ऊपर से असामजिक तत्वों के हाथों की कठपुतली भी बना दिया जाता है। उपन्यास में 'किन्नर'  पूनम जोशी जिनका विनोद के प्रति सहज आकर्षित होना उनमें

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ 186

[2] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ  195

स्त्री के गुण होने का प्रमाण है। पूनम का सहज आकर्षण विनोद को अपनें बचपन की उन सब यादों में पहुँचा देता है जहाँ उसे ज्योत्सना की कमी महसूस होती है। विनोद में स्त्री के गुण हैं ही नहीं तो वह कैसे स्वीकार करे। वह पिता बनने का सपना देखता है और अपनी 'बा' से कहता है कि माँ बचपन में समझ नहीं थी मैं ज्योत्सना से विवाह करने के लायक नहीं हूँ। विनोद अपनी माँ से कहता है कि "माँ जीवन में अगर मैं कुछ बन जाता तो ज्योत्सना से ब्याह जरुर करता और सब कुछ सच्चाई बता देता। उसको कह देता तू मेरे साथ सिर्फ विवाह कर ले। विवाह के बाद बच्चा हम गोद ले लेंगे"[1]। सामाजिक जीवन का तीसरा विकल्प अयौनिकता से परे वैवाहिक संबंध का प्रस्तावना किन्नर समुदाय के सामने विकल्प चुनने का प्रयास किया गया है।

भारतीय सभ्य कहे जाने वाले समाज के उन लोगों के मुंह पर करारा जबाब दिया गया है जो लोग यह समझते हैं कि किन्नरो का समाज के विकास में कोई योगदान नहीं है क्योंकि वे भोग सुख से वंचित हैं। समाज की इस सोच पर लेखिका ने कहा है कि अगर यह प्रकृति प्रदत्त दोष को भोगने के लिए अभिशप्त है तो इनको वात्सल्य सुख से वंचित तो न रखे। माता-पिता नहीं बन सकते तो क्या हुआ बच्चा गोद तो ले सकते हैं। इस सोच को मानवीयता के सच्चे अर्थो में देखने की कोशिश लेखिका ने की है।

**'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास'** में लेखिका चित्रा मुद्गल वर्षो से चली आ रही सामाजिक और रूढ़िवादी, संकुचित मानसिकता को तोड़ने का प्रयास करने के साथ-साथ सामाजिक बदलाव की एक नई पहल की है। हिंदी साहित्य में अभी तक किन्नर समुदाय को केंद्र में रखकर जो भी उपन्यास लिखे गए है उनमें **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा'** विशिष्ट शैली एवं कथ्य में लिखा गया उपन्यास है। उपन्यास का पात्र किन्नरों के द्वारा दी गई पहचान उनके रीति-रिवाजों को नहीं स्वीकारता। नाच-गा कर हिकारत भरी दान दक्षिणा नहीं लेना चाहता बल्कि वह आत्मनिर्भर बनना चाहता है। किन्नर समुदाय पर लिखे गए उपन्यासों में अक्सर देखा गया है कि

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ

किन्नर समुदाय के लोग नाचने-गाने की परंपरा को नहीं छोड़ते हैं। यह लोग समझ बैठे हैं कि नाच-गाने के अतिरिक्त इनको और कोई काम नहीं है लेकिन ऐसा नहीं है यह तो समाज के द्वारा थोपी गई रूढ़ियाँ हैं, जिन्हें वे वरदान मानते हैं लेकिन वह उनके लिए अभिशाप है।

चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास के माध्यम से किन्नर समुदाय की मुक्ति के लिए शिक्षा को एक सशक्त माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया है। लेखिका का मानना है कि शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके माध्यम से किन्नरों को जागरूक किया जा सकता है। उपन्यास का पात्र विनोद किन्नर पूनम से कहता है कि **"तुम इतना पढ़ कि विश्व के कुछ अच्छे उपन्यास पढ़ सको। हम आपस में उनके चरित्रों पर बात कर सकें। पढ़ाई ही हमारी मुक्ति का रास्ता है। कोई रास्ता नहीं छोड़ा गया है हमारे लिए।**"[1]किन्नर समुदाय के लिए शिक्षित होना जरुरी है। बचपन से सामाजिक और आर्थिक रूप से बहिष्कार की पीड़ा भोग रहे किन्नरों अगर समाज की मुख्यधारा में शामिल करना है तो समाज को अपनी मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा। अन्य बच्चों की तरह लिंग दोषी बच्चों को परिवार एवं समाज का प्यार दिया जाना आवश्यक है। उपन्यास के अंत में एक माँ का व्यापक माफीनामा अपने किन्नर बेटे (विन्नी) उर्फ विनोद के घर वापसी की अपील सिर्फ एक माँ की सोच न बनकर सम्पूर्ण स्त्री समुदाय की बनायी जा सके। स्त्री को अपनी संतान पर अधिकार जताने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। जन्म के साथ स्त्री और पुरुष के खाँचे में विभाजित इस समाज ने कभी यह सोचने की कोशिश नहीं की। स्त्री पुरुष के अतिरिक्त और कोई तीसरा वर्ग भी है लेकिन **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास'** में लेखिका चित्रा मुद्गल ने ऐसे कथ्य का निर्माण किया है जहाँ पर हमेशा मानवीय मूल्य के विघटन की संवेदना दिखाई देती है।

## किन्नरों की पारिवारिक स्थिति: संदर्भ बिन्नी उर्फ विनोद

---

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ 10

यौनिकता और लैगिकता के सन्दर्भ में होने वाले विमर्शों के क्षेत्र में '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' (2016) विमर्श के तीसरे पक्ष को केंद्र में रखकर लिखा गया उपन्यास अपना विशिष्ट स्थान रखता है। उपन्यास में किन्नर विनोद और माँ के माध्यम से लेखिका ने भारतीय समाज की जड़वादी मानसिकता का विरोध है किया जिसके कारण हमारा समाज आज मानवीय मूल्यों को आत्मसात करने में समर्थ नहीं है। विनोद के माध्यम से लेखिका ने किन्नरों की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डालने का भरपूर प्रयास किया है। उन्होंने किन्नर समुदाय की इस स्थिति का जिम्मेदार सबसे पहले ऐसे माता पिता को ठहराया है, ऐसे किन्नर बच्चों को जन्मते ही दूसरों के हाथों में सौंप देते हैं।

उपन्यास में भारतीय समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विरोध किया गया है जिसके चलते आज स्त्री और किन्नरों को भी समाज समानता की दृष्टि से नहीं जाता। संध्या द्विवेदी द्वारा लिए गए एक साक्षात्कार के इस प्रश्न "समाज के इस हिस्से को कैसे न्याय मिलेगा कैसे बराबरी मिलेगी" के उत्तर में चित्रा मुद्गल ने कहा है कि,**"जब माँ चाहेगी। जब स्त्री अपनी कोख पर हक जताएगी। स्त्री ने कभी अपनी कोख को स्वायत्तता का विषय बनाया ही नहीं। शायद इसकी वजह पितृसत्ता का दबाव है**।"[1] उपन्यास में वंदना बेन अपने बेटे को सार्वजनिक स्वीकृति देती है और पिता को भी अपने किन्नर बेटे को सार्वजनिक स्वीकृति प्रदान करने के लिए मजबूर करती हैं। विनोद की घर वापसी सिर्फ विनोद और उसकी माँ की न रह कर सम्पूर्ण स्त्री वर्ग एवं उनके अपने किन्नर बेटों के प्रति बने यहीं लेखिका का उद्देश्य है।

वर्तमान समय में आज सभी वर्ग अपने अस्तित्व एवं अस्मिता के प्रति जागरूक और संघर्षरत हैं। संघर्ष की इस लड़ाई की कड़ी में '**पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा**' उपन्यास सामाजिकता को साथ में लिए चलता है। स्त्री को अपनी खामोशी तोड़नी होगी अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना होगा। स्त्रियों पर हो रहे शोषण और अत्याचारों को समाज और दुनिया को बताना होगा। इस

[1] सिंह ,विजेन्द्र प्रताप. हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर .कानपुर: अमन प्रकाशन.2017.पृष्ठ 151

उपन्यास में एक स्त्री अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष एवं आवाज बुलंद करती है। उपन्यास का पात्र विनोद घर से विस्थापित होने के बाद एक भी दिन अपनी माँ को नहीं भूल पाता। विनोद किन्नर समुदाय के रहन-सहन और दुःख और पीड़ा से अपनी माँ को अवगत कराता है। आपनी माँ से शिकायत करते हुए विनोद कहता है कि पप्पा और बा तुमने मुझे जिस नरक में धकेल दिया गया है वहाँ तो सिर्फ सांप-बिच्छू जैसा जीवन यापन करना पड़ता है। इन्सान के रूप में हम लोगों ने जन्म जरुर लिया है लेकिन जिस जगह हम लोगों को धकेल दिया गया उस जिंदगी ने हमें मनुष्य नहीं रहने दिया।

भारत जैसे देश में धर्म जाति को नकारा नहीं जा सकता है। भारतीय समाज व्यवस्था में हमेशा से जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, वर्ग व्यवस्था आदि के आधार पर विषमता ही देखने को मिलती है। जिस सामाजिक व्यवस्था की नींव योनि आधारित हो, वह समाज अपनी मानसिकता को कैसे बदल सकता है। एक स्त्री की संवेदनाओं को यह समाज अभी तक समझ नहीं पाया, तो किन्नरों की पीड़ा दर्द को कहाँ से समझेंगे। समाज की इस संकुचित मानसिकता के चलते विनोद को उसकी 'बा' घर से बहिष्कृत तो कर देती है लेकिन अपनी आखों से ओझल नहीं होने देती। 'बा' हमेशा विनोद को याद करती रहती है लेकिन समाज के भय और बदनामी के कारण विनोद की मृत्यु का झूठा नाटक भी रचना पड़ता है और कालबा देवी वाले घर को बेचकर दूसरी जगह रहना पड़ता है। सामाजिक बहिष्कार तिरस्कार की बात तो दूर लिंग दोषी बच्चों को अपने परिवार के सदस्य भी तिरस्कृत करने लगते हैं। संकुचित मानसिकता के चलते विनोद का बड़ा भाई सिद्धार्थ कहता है कि " **'बा' अपने कमरे में तुमने बिन्नी की तस्वीर क्यों टांग रखी है ? सेजल की निगाह उस पर पड़ती नहीं होगी ? कभी सोचा है तुमने उसके मन पर क्या प्रभाव पड़ता होगा।**"[1] सामाजिक बहिष्कार तो होता ही है, यहाँ तक की खून के रिश्ते समझे जाने बाले भाई-बहिन भी उन से मुंह मोड़ लेते हैं। रिश्तों

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ 23

के इस अटूट बन्धन को भी याद नहीं किया जाता, महज सिर्फ शारीरिक लिंग दोष के चलते उन रिश्तों को तोड़ दिया जाता है।

किन्नर समुदाय की आज की सबसे बड़ी समस्या जीविकोपार्जन की है। क्योंकि इन्हें बचपन से ही समानता के अधिकारों से वंचित रखा जाता है। अशिक्षित, बेरोजगार और असहाय यह किन्नर आसामाजिक तत्वों के हाथों में आकर अपराधी प्रवृति व सेक्स जैसे असामाजिक कार्यो में अपने को लिप्त कर लेते हैं। समाज से यदि कुछ दान दक्षिणा माँगते भी है तो लोग अभद्र व्यवहार करते है। किन्नर यदि अपनी दान दक्षिणा के लिए जोर जबरदस्ती कर दे तो लोग पुलिस को बुला लेते है। उपन्यास में इसी सन्दर्भ में "**सरदार समेत सात लोग लॉकअप में डाल दिए गये। दूसरी सुबह जाकर छूटे। चंदा की बांहों पर दरिंदगीभरी खरोंचें खून से छलछलाई हुई थीं। सोनिया का निचला होंठ कटा हुआ था। पूनम ने पीठ दिखाई। उसकी गोरी पीठ पर नील खुदे हुए थे। छूते ही वह पीड़ा से कराही थी।**"[1] किन्नर विनोद इस सब का विरोध करता है और किन्नर समुदाय को शिक्षा, रोजगार युक्त व आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा देता है। सिर्फ लिंग दोष के कारण किन्नरों को एक मनुष्य होने के बाद भी उन समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया गया,जो उसके मानवीय और संविधान प्रदत्त थे। समाज से बहिष्कृत इन लोगों के मन में समाज के प्रति एक असंतोष और पीड़ा हमेशा रहती है। बार बार मन में प्रश्न उठता है की समाज व्यवस्था के यह कैसे आदर्श और नियम हैं जिनमे स्त्री-पुरुष के अतिरिक्त अन्य का कोई स्थान नहीं है अगर हैं भी तो सिर्फ न के बराबर। इसी हताशा और असंतोष के चलते विनोद माँ को नहीं भूलता। विनोद अपनी 'बा' से प्रश्न करता है कि जब भी मैं लिखने को बैठता हूँ लिखते हुए तुम मेरी यादों मे आ जाती हो। मैं सोचने लगता हूँ कि मैं तुझसे वह सब कुछ जान लूं जिसे जानने के अधिकार से मैं वंचित कर दिया हूँ। घर से बहिष्कृत कर दिए जाने के बाद जो पीड़ा दर्द मुझे सहने पड़ रहें हैं ,उन सब से तुझे अबगत करा दूँ।

---

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन .2016 .पृष्ठ 51

सामाजिक व परिवारिक विस्थापन के बाद उसके जो दर्द हैं, पीड़ा है, उसे वह अपनी माँ से व्यक्त करता है और प्रश्न करता है कि मुझे इस नारकीय जीवन में क्यों ढकेल दिया ? मुझे समस्त अधिकारों से वंचित क्यों रखा गया?? । लेखिका ने उपन्यास के माध्यम से यह प्रश्न केवल विनोद के यहाँ तक सीमित नहीं रहने दिया बल्कि भारतीय मुख्यधारा के सभ्य कहे जाने बाले किन्नर बच्चों के परिवार वालों से भी किया है । माता-पिता के घर एवं परिवार की आत्मीयता से कटकर विनोद चौदह वर्ष बाद अचानक अपरिचित और भिन्न संसार में पहुँचता है । विनोद अपने घर-परिवार से निष्कासित होने के बाद किन्नर समुदाय में पहुंचता है, जहाँ उनके रीति-रिवाज, रहन-सहन, बोल-चाल सब एकदम  नया है । समाज ने किन्नर समुदाय के लिए जो रीति-रिवाज स्थापित कर दिए है उनको विनोद स्वीकार नहीं करता । प्रदीप सौरव ने भी अपने उपन्यास में एक पात्र के माध्यम से किन्नर समाज के सामने यह विकल्प रखा है । 'तीसरी ताली' उपन्यास का पात्र विजय कहता है कि, "**मैं नाँचना-गाना नहीं, नाम कमाना चाहता था । भगवान राम के उस मिथक को झूठलाना चाहता था, जिसके कारण तीसरी योनि नाँचने-गाने के लिए अभिशप्त है । परिवार और समाज से बेदखल है** ।"[1]'**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' का पात्र भी इसी तरह का आग्रह किन्नर समुदाय से करता है । विनोद, शिक्षा के माध्यम से ही उनकी मुक्ति के द्वारा खुलने की बात करता है । विनोद जैसे स्वाभिमानी और संघर्ष करने वाले व्यक्ति की तरह आज सामाजिक व राजनैतिक क्षेत्रों में किन्नर समुदाय के कुछ व्यक्तियों के नाम उभर कर आये हैं । पश्चिम बंगाल में **मानवी बंदोपाध्याय** भारत की पहली ट्रांसजेंडर प्रिंसिपल बनी तो दूसरी तरफ **शबनम मौसी**सन् 1998 में मध्य प्रदेश के सोहागपुर विधानसभा क्षेत्र से पहली विधायक चुनी गई । **कमला जान**, **कमला बुआ** जैसे नाम भी इस क्षेत्र में ही अपनी छवि बना चुके हैं । **पद्मिनी प्रकाश** जिन्होंने तमिलनाडु में लोटस टीवी में न्यूज एंकरिग की और अपनी पुस्तक '**दी त्रुथ अबाऊ मी**' में थर्ड जेंडर समुदाय को केंद्र में रखा लेकिन राजनैतिक चाले और समाज की दोहरी उपभोक्तावादी संस्कृति व पितृसत्तात्मक व्यवस्था के लोगों ने उन्हें सिर्फ

[1] सौरभ प्रदीप,तीसरी ताली,नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन. 2011, पृष्ठ 195

एक अपवाद के सिवाय कुछ नहीं रहने दिया। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास में भी इसी तरह की राजनीति का पर्दाफाश किया गया है। उपन्यास में 27 नवम्बर का वह समाचार पत्र जिसमें अज्ञात किन्नर की लाश "**कुर्ला कालीना काम्पलेक्स से लगी हुई मिठी नदी में पुलिस ने एक किन्नर की फूली लाश बरामद की है। शव की शिनाख्त नहीं हो पाई है। सिर बुरी तरह कुचला हुआ। पुलिस इस वारदात को आपसी रंजिश का नतीजा मान रही है। उसका अनुमान है, हत्या का सम्बन्ध अंडरवर्ल्ड में इन दिनों सक्रिय 'मुन्ना भाई गिरोह' से हो सकता है।**"[1]

राजनैतिक और पूँजीपति लोग शोषितों और कमजोरों को, सिर्फ अपनी स्वार्थवृत्ति का माध्यम बनाते हैं। उपन्यास में विनोद को वोट बटोरने का माध्यम बनाया जाता है। विनोद जब अपने अधिकारों की बात करने लगते हैं, विनोद इन लोगों में स्वाभिमान जगाने लगता है। तब उसको बोला जाता है कि जितना बोला गया उतना बोलों। तुम तो बड़े रणनीतिकार निकले किन्नरों में स्वाभिमान। जब विनोद उनके रास्ते का काँटा बन जाता है तो उसे रास्ते से हटा दिया जाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था के इस देश में जिस प्रकार से किन्नरों का शोषण हो रहा है उन सब का कारण लेखिका सामाजिक एवं राजनैतिक कारणों मानती हैं। किन्नर विनोद ,पूनम जोशी,चंदा आदि किन्नर समुदाय के पात्रों के माध्यम से लेखिका चित्रा मुद्गल ने समस्त किन्नर समुदाय के मानवीय एवं सामाजिक मूल्यों के विघटन से सम्बंधित तथ्यों का विश्लेषण करके प्रस्तुत किया है।

उपन्यास में सूक्ष्म से सूक्ष्म तथ्यों पर बात की गई है। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' का पात्र विनोद मुख्यधारा के इस समाज एवं परिवार से जिस प्रकार बहिष्कृत व तिरस्कृत कर दिया गया इसके बाद जब वह अपने पूर्व के परिवार को छोड़कर अपने दूसरे परिवार में जाता है, तो वहाँ उसका विरोध किन्नर समुदाय के लोग स्वीकारते हैं। इससे स्पष्ट होता है की किन्नर समुदाय के लोग अपने पुरातन पेसे से मुक्त होना चाहते है। विनोद की तरह अन्य किन्नर को अपने समुदाय से बाहर

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. 2026 . पृष्ठ 224

काम करने व पढ़ने लिखने की अनुमति नहीं दी जाती। “**पूनम बहुत रोई थी, तू कंही न जा। आंखों के सामने बना रहेगा तो नाशपीटा सरदार तेरी हरकतों को नजर अन्दाज करता रहेगा, करता ही है। तेरी जैसी छूटें औरों को मिली हैं क्या ?**।”[1] परंपरावादी रूढ़ियों में जकड़ा हुआ यह समाज भी परिवर्तन चाहता है इसलिए तो विनोद का विरोध स्वीकार करता है और उसे प्रोत्साहित भी करता है। उसके पढने लिखने और मजदूरी करने की छूट भी होती है '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास सिर्फ किन्नरों की जिन्दगी पर आधारित उपन्यास नहीं है। इसमें भारतीय समाज की उस स्त्री का भी चित्रण किया गया है जिसको पितृसत्तात्मक समाज के दबाब में अपने पुत्र को किन्नरों को देना पड़ता है। पारिवारिक संबंधो के यथार्थ को भी प्रस्तुत किया है जहाँ पर एक स्त्री ही स्त्री के शोषण का कारण बन जाती है। विनोद की बा को अपने ही बड़े बेटे-बहू के दबाव के कारण अपनी संतान को दूसरों के हाथों में सौंपना, पारिवारिक रिश्तों के बदलते मूल्यों प्रतीक दिखाई पड़ता। समाज में व्याप्त इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विरोध तो किया ही है लेकिन उस स्त्री का भी विरोध किया है जो एक स्त्री के शोषण में पुरुष का साथ देती है। स्त्री के अस्तित्व एवं अस्मिता की लड़ाई में चित्रा मुद्गल का स्थान प्रमुख है।

आधुनिकता से उत्पन्न बाजारवाद से मानवीय संबंधों में शिथिलता आ गई है। मनुष्य आज उपभोग के आधार पर ही व्यक्ति प्रयोग करता है। भारतीय समाज व्यवस्था में आज भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था देखने को मिलती है। आज भी समाज परंपरावादी रूढ़ियों से जकड़ा हुआ है। आज भी समाज में अपने अभिन्न अंग किन्नर (थर्ड जेडर) समुदाय के अस्तित्व को स्वीकृति नहीं दे पा रहा है। समाज का एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य के प्रति जो भेदभाव देखने को मिल रहा है। इसका मुख्य कारण जाति, धर्म और लिंग के आधार पर व्याप्त विषमता है जो कल्याणकारी राष्ट्र निर्माण में बाधा डालती है।

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन 2016 .पृष्ठ 26

भारतीय समाज में पुनरूत्थान और उपभोग्तावादी संस्कृति की अवधारणा के चलते लिंग के अधूरे विकास के कारण समाज किन्नरों को मुख्यधारा से अलग किया जाता है। मुख्यधारा का समाज आज भी समाज-निर्माण में सिर्फ स्त्री-पुरुषों का ही महत्वपूर्ण योगदान मान रहा है। किसी तीसरे व्यक्ति का नहीं, जिसका विरोध उपन्यास में किया गया है, "**लिंग-पूजक समाज लिंगविहिनों को कैसे बर्दास्त करेगा ? माता-पिता दोषी हैं, मगर उससे ज्यादा दोषी हैं, क्रूर निष्ठुर, पाखंडी, धर्म विश्लेषकों की धर्मान्धता। लिंग पूजक हैं तो बने रहिए। धर्म-कर्म में उन्हें प्रतिबंधित तो न करिए।**"[1] सामाजिक मानसिकता के बदलाव की पहली सीढ़ी परिवार होता है। इसी बात को ध्यान में रखकर उपन्यास के कथ्य की रचना की गई है। वंदना बेन जिस प्रकार सामाजिक उपहास की वजह से अपने बच्चे विनोद को किन्नरों के हाथों में सौंपती है। विनोद की माँ अपनी इस अक्षम भूल को स्वीकार करती है। इस उपन्यास में लेखिका ने अपनी संवेदना और मानवीयता प्रस्तुत करने के साथ सराहनीय कार्य किया है। लेखिका चित्रा मुद्गल के इस कार्य से उनकी बहुमुखी व्यक्तित्व की झलक देखने को मिलती है।

उपन्यास के माध्यम से यह बताने की कोशिश की गई है कि व्यक्ति को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ता है क्योंकि संघर्ष के बिना किसी को अपने अधिकार नहीं मिलते। अपने अधिकारों के लिए स्वयं संघर्ष करना पड़ता है। उपन्यास के एक पात्र ने कहा भी है कि दलितों के लिए जब अम्बेडकर जन्म ले सकते है तो किन्नरों के लिए विनोद संघर्ष क्यों नहीं कर सकता। हाथों पर हाथ रखे रहने से अपने अधिकार नहीं मिलते संघर्ष करना पड़ता है और यही संघर्ष वंदना बेन ने किया है अपने बेटे विनोद के लिए और अन्त में उनकी जीत होती है। पारिवारिक सहज स्वीकृत सहित माफीनामा इसका प्रमाण है। वंदना बेन स्वयं ही नहीं बल्कि अपने पति हरीन्द्र शाह से भी स्वीकृति दिलवाती हैं। वंदना बेन घोषणा करती हैं कि, मेरे शव को मेरा मंझला पुत्र विनोद शाह ही अग्नि देगा और जब तक वह नहीं आ जाता मेरे शव को सुरक्षित रखा जाए।

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 .नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन.153 पृष्ठ .2016

आज समाज और परिवार को संवेदनशील होने की जरूरत है। किन्नरों का नाम सिर्फ शादी के समारोह में नेंग मांगना, ट्रेनों और बसों में भीख मांगने तक सीमित नहीं है। उनको भी समाज के अन्य व्यक्तियों की तरह इंजीनियर, डाक्टर्स बनने और शिक्षित होने और ससम्मान जीवन जीने का अधिकार है। सड़क की गाली 'हिजड़ा' समझे जाने वाले यह किन्नर वर्ग आखिर क्यों अपने अधिकारों से वंचित हैं। सरकार के द्वारा तमाम अधिकार और मान्यताएँ मिलने के बाद भी यह वर्ग समाज की मुख्य धारा में सम्मलित क्यों नहीं हैं। सरकार के द्वारा आज जो लिंग निर्धारण किया गया है उसका विरोध भी इस उपन्यास में देखने को मिलता है। किन्नरों को निर्धारित आँकड़ों में क्यों बाँध दिया गया है। उन्हें स्वतंत्र लिंग चुनने की स्वतंत्रता क्यों नहीं दी जा रही है। किन्नरों के आरक्षण के बदले उनके माता-पिता को कटघरे में खड़ा किया जाए। इस संदर्भ में लेखिका अपने साक्षात्कार में स्पष्ट रूप से कहती हैं कि जब तक ऐसे माँ-बाप को कटघरे में नहीं लाया जाता ? जो अपने लिंग दोषी बच्चों को किन्नरों के हाथों में दे देते है या फिर घूरे पर फेंक देते हैं।

सरकार को किन्नरों के आरक्षण के बदले यह नियम लागू करना चाहिए की ऐसे माता-पिता को भी दण्डित किया जायेगा, जो अपने किन्नर बच्चों को गली-गली फिरने या फिर दूसरों के हाथों में सौंप देते हैं। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास अनेक ऐसे सामाजिक सरोकारों को लेकर चलता है। आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक रूप से समानता का आग्रह भी इस उपन्यास का प्रमुख उद्येश्य है।

## किन्नरों की सामाजिक स्थिति : संदर्भ पत्र लेखन और माँ-पुत्र सम्बन्ध

किसी भी व्यक्ति की उसकी आपनी विशिष्ट पहचान होती है, देश या राज्य का नाम हटाकार उसको उसके परिवार से ही उसकी पहचान होती है । सामान्यतः अपने समाज में वह या तो स्त्री रूप से जाना जाता है या पुरुष रूप में। लेकिन परेशानी तब होती है तब उसकी कुछ सामाजिक पहचान ही न हो। वह व्यक्ति न ही पुरुष हो और न ही स्त्री। उसका समाज में कुछ अस्तित्व ही न हो। अगर हो

भी तो वह सिर्फ न बरावर हो। समाज का यह वंचित वर्ग जिसकी पहचान अब किन्नरों के नाम की जाने लगी है। जिनको भिन्न-भिन्न भाषा में भिन्न-भिन्न के आधार पर नाम से पुकारा जाता है। किन्नर वर्ग के लोगों को सिर्फ लिंग दोष के चलते ही घर, परिवार व समाज से वंचित कर दिया जाता है और दर-दर की ठोकरे खाने के लिए छोड़ दिया जाता है। मानवता के लिए यह कितनी शर्मनाक बात है। अन्दर से कमजोर और बेसहारा लोगों को कोई भी व्यक्ति अपनी स्वार्थवृति का जरिया बना कर उनको अपराधिक और असामाजिक कामों में लिप्त करके प्रयोग करता है।

सन् 2014 में देश की सबसे सर्वोच्च अदालत ने किन्नर समाज के लिए एक ऐतिहासिक फैसला सुनाया, जिसमें 'हिजड़ा' शब्द पर रोक लगाकर किन्नरों को थर्ड जेंडर की श्रेणी में शामिल करके एक पहचान बना दी। किन्नरों को सरकारी नौकरी में स्त्री पुरुष के अतिरिक्त अन्य का भी विकल्प दिया गया। किन्नर समुदाय वर्षो से गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ यह समाज आज अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत दिखाई दे रहा है। समानता के अधिकारों के इस संघर्ष के कारण किन्नर वर्ग को भी अपने अधिकार प्रदान कर दिए गए। इसके अतिरिक्त और भी अधिकार दिए जिसमें "**इस समुदाय को शिक्षा, स्वास्थ्य, नौकरी, आरक्षण सभी शामिल है। इतना ही नहीं सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में किन्नरों को बच्चा गोद लेने का अधिकार देने के साथ–साथ उन्हें सेक्स चेंज करवाकर औरत या मर्द बनने का अधिकार भी दे दिया**।"[1] सामजिक संदर्भों में देखे तो समाज में किसी भी व्यक्ति की पहचान उसके लिंग से ही होती है। परिवार समाज की महत्वपूर्ण इकाई होती है। व्यक्ति को अपने विकास के लिए परिवार और समाज की आवश्यकता होती है, लेकिन आज समाज में यह देखा जा रहा है कि किन्नरों को समानता के तमाम अधिकार मिलने के बाद भी उनके साथ भेद भाव हो रहा है। आखिर किन्नरों के प्रति समाज की इस मानसिकता में कब परिवर्तन आयेगा।

---

[1]सिंह, डॉ विजेंद्र.प्रताप, रविकुमार गौड़. विमर्श का तीसरा पक्ष (किन्नरों की रहस्यमय दुनिया). दिल्ली : अनंग प्रकाशन. 2016, पृष्ठ 102

'**पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा**' उपन्यास किन्नर समाज के साथ हो रहे भेदभाव और सरकार द्वारा किन्नरों को 'अन्य (0)' की श्रेणी में डाल देने का विरोध करता है। किन्नरों से सम्बंधित अनेकों पहलूओं को उपन्यास में समाहित किया गया है। अभी भी अनेकों किन्नर बच्चों को उनके जन्म होते ही माता-पिता बाल्यकाल में ख़त्म कर देते हैं। यदि किसी कारण ख़त्म नहीं कर पाते तो सड़कों पर फेंक देते हैं उनके नारकीय जीवन जीने के लिए छोड़ देते है। अगर ऐसे बच्चों को परिवार वाले मोह बस नहीं त्यागना चाहते तो समाज की लोक-लज्जा और बदनामी के डर से उन्हें त्याग देते हैं। दूसरी ओर किन्नर समुदाय के लोग भी ऐसे बच्चों को खोजते फिरते हैं और उनके माता-पिता से जबरदस्ती ले जाते है। अगर कोई भी व्यक्ति अपने किन्नर बच्चें को नहीं देना चाहता तो किन्नर बहुत हंगामा करते हैं।

किन्नरों को केंद्र में रखकर लिखे गए अभी तक उपन्यासों में चित्रा मुद्गल का सन् 2016 में प्रकाशित यह उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में अपनी अनोखी पहचान बनाता है। पत्र-शैली में रचा गया यह उपन्यास पत्र संवादों के माध्यम से विनोद और उसकी 'बा' के सम्पूर्ण विचारों भावों को एक ही पत्र में दोनों के जबाबी रूप में चित्रित करता है। उपन्यास का कोई भी संवाद बनावटी नहीं लगता सम्पूर्ण उपन्यास पाठक को सत्यता और प्रमाणिकता का बोध कराता है। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास अपनी क्षेत्रीयता और भाषागत पहचान साथ में लिए हुए है। विनोद अपने बचपन की माँ के द्वारा सुनाई गई वह लोरी जो मंजुल को माँ सुनाया करती थी। विनोद उसको अपने पत्र में माँ को लिखता है।

**"खम्मा वीरा ने जाऊं वारण ,रेडड लोल**

**एक तो सुहागी मारों वीर ,रेडड लोल**

**वीजा सुहागी मारों वीर ,रेडड लोल**

**खम्मा वीरा ने जाऊं ....'**

**और वीजी बात।"**[1]

यहाँ पर उपन्यासकार की भाषागत एवं क्षेत्रीयता विशेषता दिखाई देती है। गुजरती शब्दों के प्रयोग ने इस उपन्यास को उसकी क्षेत्रीयता से जोड़े रखा है। उपन्यास अपनी विशिष्टता को साथ में लिए हुए है क्योंकि अभी तक किन्नरों की समस्याओं को लेकर जितने भी उपन्यास लिखे गए हैं,उनमें किन्नरों के जातिगत पेशे को किन्नरों द्वारा स्वीकारा गया है। '**लेकिन पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास का पात्र विनोद अपने समाज के लिए निर्धारित किये गये नियमों को नहीं स्वीकारता और परिवर्तन की बात करता है। विनोद भारतीय सभ्य कहे जाने वाले समाज पर व्यंग्य करता है लेकिन साथ में अपने किन्नर समुदाय के गुरुओं और सरदारों को भी किन्नरों की इस स्थिति का जिम्मेदार मानता है । लिंगदोष के रूप में जन्मा विनोद अपनी 'बा' से कहता है कि,"**असामाजिक तत्वों के हाथ की कठपुतली बनने में जितनी भूमिका किन्नरों के सन्दर्भ में सामाजिक बहिष्कार–तिरस्कार की रही है, उससे कम उनके पथभ्रष्ट निरंकुश सरदारों और गुरुओं की नहीं है ऊपर से विकल्पहीनता की कुंठा ने उन्हें आँधी का तिनका बना दिया है**।"[2] उपन्यास में मात्र विनोद की ही व्यथा कथा नहीं है वल्कि यह सम्पूर्ण किन्नर समुदाय की कथा है। यह एक स्त्री की कथा है जो सामाजिक एवं पारिवारिक बन्धनों में आजीवन जकड़ी रहती है और जीते जी अपनी ही कोख से जन्मी संतान पर अपना अधिकार नहीं जता पाती।

लेखिका चित्रा मुद्गल का भी अभिप्राय है कि एक स्त्री जब तक अपने अधिकारों के प्रति सजग और सचेत नहीं होगी तब तक उसको अपने अधिकार नहीं मिल सकते हैं। डॉ. विजयलक्ष्मी ने स्त्री के अधिकारों के सन्दर्भ में कहा है कि, "**धार्मिक नियमों और सामाजिक मर्यादाओं में**

[1] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं 203 . नाला सोपारा: नई दिल्ली. सामयिक प्रकाशन . 2016 पृष्ठ 64

[2] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. 2016 पृष्ठ 86

**जकड़ी स्त्री स्वतंत्र व्यक्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकती थी । परन्तु समय सापेक्ष पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ ही आधुनिकता बोध महानगरीय बोध और अस्तित्व बोध ने सामाजिक प्रथाओं और मान्यताओं पर करारी चोट की ।**"[1] समाज में व्याप्त पुरातन मान्यताओं पर करारा व्यंग्य उपन्यास में किया ही गया है लेकिन इस व्यवस्था के प्रति संघर्ष भी इस उपन्यास में दिखाई देता है । "**मैं वंदना बेन शाह, पत्नी श्री हरीश शाह, सार्वजनिक रूप में यह घोषणा करती हूँ कि दिनांक 22 नवम्बर, 2011 को अपने पूरे होशोहवास में मैं अपने तीनों बेटे सिद्धार्थ शाह, विनोद शाह, मंजुल शाह में से मझले बेटे विनोद शाह, जिसे लिंग दोष के चलते बरसों पहले हमने जबरन किन्नर चम्पाबाई को सौपकर दुर्घटना में उसकी मृत्यु होने का नाटक रचा था, लोकापवाद के भय से, उस भूल का परिष्करण करना चाहती हूँ** ।"[2] आखिर में समाज और परिवार से डरने वाली एक स्त्री विद्रोह करती है और अपने इस विद्रोह से अपने पति मानसिकता भी परिवर्तित कर देती है। यहाँ पर लेखिका ने एक स्त्री को उसकी अपनी शक्ति का एहसास कराया है। समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक व्यवस्था जिसने एक स्त्री को सिर्फ उपभोगवादी दृष्टी से देखा है और कभी भी सम्मान की नजरों से नहीं देखा स्त्री को सिर्फ उपभोग की वस्तु मात्र समझा।

उपभोक्तावादी इस समाज के सन्दर्भ में किसी ने ठीक ही कहा है कि सभ्य कहे जाने वाले इस समाज ने स्त्री को तो समझा नहीं किन्नरों के दुःख दर्द को समझने का कलेजा कहाँ से आयेगा। स्त्री-विमर्श से संबधित प्रश्न करना उन पर बात करना और उनका निराकरण करना तो चित्रा मुद्गल का उद्देश्य ही है। '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' भी स्त्री विमर्श से अछूता नहीं है। यहाँ पर एक स्त्री के महत्त्व को बड़ी ही सहजता के साथ प्रस्तुत करने में लेखिका ने सफलता हासिल की है। एक स्त्री और उसके महत्व को स्वीकारते हुए उपन्यास में कहा है कि, जितना सहयोग समाज के विकास में

---

[1] कुल्हरि, विजय लक्ष्मी. नारी विमर्श : दशा एवं दिशा. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन. 2015, कवर पेज

[2] मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन. 2016 पृष्ठ 222

एक पुरुष का होता है उतना ही स्त्री का। फिर वह क्यों अपनी ही संतान पर जीते जी अधिकार नहीं जता पाती। वंदना वेन के माध्यम से एक स्त्री को उसकी अस्मिता और अधिकारों की लड़ाई लड़ने की प्रेरणा यहाँ पर दी गयी है। विनोद किन्नरों को सामाजिक, राजनैतिक, सांकृतिक और आर्थिक आदि सरोकरों की बात करते हुए शिक्षा, रोजगार में उपस्थिति बनाकर अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने की बात करता है। समाज द्वारा थोपी गयी मान्यताओं और परम्पराओं को ठुकराकर समाज की मुख्य धारा में शामिल होने की बात विनोद अपने द्वारा 'बा' को लिखे गये पत्रों में करता है। विनोद में स्त्रैण गुण हैं ही नहीं तो वह कैसे स्वीकार करे की वह एक स्त्री है, क्योंकि माना जाता है की अधिकांशतः किन्नर अपने आप को स्त्री कहलवाना पसंद करते हैं। उनका रहन सहन स्त्रियों की, चाल-चलन जैसा प्रतीत होता है। किन्नरों के इस फैशन का विनोद विरोध करता है और अपनी बा से कहता कि माँ स्त्रैण लक्षण मुझमें कभी नहीं थे और अब भी नहीं है और जो लक्षण मुझमें नहीं हैं, उन्हें मैं स्वीकार नहीं कर सकता और क्यों करू की शेष समुदाय ने किन्नरों के हाव-भाव को अपना लिया है। मैं भी उन्हीं के साथ रह कर उन्हीं की तरह बाहों और छाती के जंगल को साफ करने लगू क्योंकि में किन्नर हूँ और लिंग दोष के रूप में पैदा हुआ। **'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा'** उपन्यास पत्र शैली में लिखा गया उपन्यास है इसलिए शैली पर बात करना तर्क संगत रहेगा है।

**उपन्यास का शैलीगत विशिष्टता :**

प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है। वह अपने अन्दर के भावों एवं संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए एक विशेष रीति, परम्परा का अनुसरण करता है या अपनी स्वयं की एक विशेष पहचान बनाकर अपने व्यक्तित्व की एक छवि अंकित करता है। अपने विचारों की अभिव्यक्ति करने के लिए जो शब्द योजना, वाक्यों की बनावट, भाषा का प्रयोग,आदि सम्प्रेषण के भिन्न-भिन्न तरीकों को अपनाता है वह उसकी अपनी शैली होती है।

**"शैली शब्द अंग्रेज़ी के 'style' शब्द का हिन्दी रूपांतर है। कुछ विद्वानों का मत है style शब्द के लिए यदि रीति शब्द प्रयुक्त किया जाए तो अधिक तर्क संगत होगा। परन्तु वास्तविकता यह है कि रीति शब्द केवल रचना–विधि या गमन–विधि का वाचक होने के कारण style का सम्पूर्ण अर्थ–बोध नहीं करा पाता।"**[1] शैली को हम यदि साधारण भाषा में परिभाषित करे तो देखते है कि शैली लेखक या कवि की सिर्फ साहित्यिक अभिव्यक्ति ही नहीं होती बल्कि वह तो सहित्यकार की बाह्य एवं आंतरिक चित्तवृतियों का संचित प्रतिबिम्ब होता है जिसमें एक लेखक या कवि की संवेदना, व्याकुलता और उसके व्यक्तित्व के अनेक पहलू समाहित होते हैं। शैली अनुभव व कल्पना के द्वारा निर्मित होती है लेकिन साहित्य में उसको लेखन की परम्परा के अनुसार ही प्रेषित किया जाता है। कोई भी साहित्यकार जब इन साहित्यिक परम्पराओं के ज्ञान भंडार में थोड़ी वृद्धि करके अपने लेखन की शुरुवात करता है तो अपने साहित्य लेखन में पुरातन परम्परा को तोड़ कर नूतन प्रयोग करता है वही नूतन प्रयोग एक विशिष्ट शैली का निर्माण कहलाता है।

हिंदी साहित्य में साहित्यकारों ने कालक्रमानुसार अनेक शैलियों का प्रयोग किया। सबसे पहले भारतेंदु युग में वर्णात्मक और आत्मकथात्मक शैलियों का प्रयोग मिलता है। 'कुछ आप बीती : कुछ जग बीती' में आत्मकथात्मक शैली का सबसे पहले प्रयोग किया गया। धीरे-धीरे परम्परा का विकास होता गया और प्रेमचन्द युग तक साहित्य में डायरी-शैली और पत्र-शैली का भी प्रयोग मिलता है। आधुनिक काल में सन्1950 के बाद साहित्य में सभी शैलियों का प्रयोग दिखाई देता है।

साहित्य लेखन की प्रमुख शैलियाँ :

- **वर्णानात्मक शैली:** इस शैली का प्रयोग लेखक द्वारा अपने उद्देश्य तथा पात्रों की घटनाओं का विस्तृत वर्णन करने के लिए किया जाता है।

[1] शर्मा, राजमणि .आधुनिक भाषा विज्ञान.नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन . 2007, पृष्ठ 305

- **विश्लेषणात्मक शैली :** इस शैली में किसी भी वस्तु घटना को समझाने के लिए उदाहरण देकर समझाया जाता है। यह शैली वैज्ञानिकता को भी साथ लेकर चलती है क्योंकि इसमें किसी घटना या वस्तु के प्रमाण के लिए तर्क देकर प्रस्तुत किया जाता है ।
- **संवादात्मक शैली :** इस शैली का प्रयोग वैसे तो नाटक आदि में किया जाता है लेकिन उपन्यास में भी पात्रों का विशेष महत्त्व रहता है इसलिए इस शैली का प्रयोग पात्रों के मध्य बातचीत और मनोभाव को व्यक्त करने के लिए किया जाता है। साधारण में देखे तो लेखक इसका प्रयोग पात्रों के मध्य संवाद योजना और सही सम्बन्ध स्थापित करने के लिए किया जाता है।
- **आत्मकथात्मक शैली :** इस शैली में लेखक अपने जीवन के विभिन्न पहलूओं को बड़े ही मर्मस्पर्शी तरीके से चित्रित करता है।
- **नाटकीय शैली :** इस शैली में लेखक द्वारा प्रस्तुत पात्र किसी अप्रस्तुत पात्र को संबोधित करते हुए अपने अन्दर के भाव एवं विचार अभिव्यक्त करता है।
- **डायरी शैली :** इसका प्रस्तुतीकरण किसी एक प्रथम पुरुष के द्वारा किया जाता है जिसमें किसी भी व्यक्ति के व्यक्तिगत अनुभव, सोच का लिखित रूप रहता है।
- **मनोविश्लेषणात्मक शैली :** इस शैली में लेखक प्रस्तुत पात्रों की मनःस्थिति और उनके स्वभाव का विश्लेषण करता है और उसकी विशेषता को प्रस्तुत करता है।
- **पत्र शैली :** पत्र शैली में कुछ ही उपन्यास देखने को मिलते है क्योंकि सम्पूर्ण उपन्यास पत्र शैली में लिखना बहुत ही कठिन कार्य होता है। इस शैली में लेखक अपने विचार अपने पत्रों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है और लेखक पात्र का मनोविश्लेषण करता है। सम्पूर्ण उपन्यास काल्पनिक होते हुए भी विश्वसनीयता का आभास कराता है। इनमें कोई कल्पना या बनावटीपन का आभास नहीं होता है। पाश्चात्य साहित्य में इस शैली का प्रयोग काफी मात्रा में हुआ है।

**कैलाश पाण्डेय पत्र को परिभाषित करते हुए कहते है कि, "पत्र में व्यक्ति अपने जीवन के अनुभव के टुकड़े–दृश्य भावव्यंजना को मनोरम ढंग से अभिव्यक्त करता है। जीवन के सुख दुःख, पीढ़ा, यातना, निराशा, तड़प आदि मनोभावों के प्रकाशन प्रगटीकरण का पुख्ता माध्यम मंच और मंचन यह पत्र ही होता है।"**[1]

हिंदी साहित्य में सबसे पहले पत्र शैली का प्रयोग खड़ी बोली को प्रतिष्ठित करने के लिए किया गया।इस शैली का प्रयोग स्वाधीनता की चाह को लेकर भी किया गया इसमें सबसे पहला नाम भारतेंदु हरिश्चंद का आता है जिन्होंने **'कविवचन सुधा'**,**'हरिश्चंद मैगनीज'**पत्रिकाएँ निकाली। लेकिन भारतेंदु हरिश्चंद से पूर्व हिंदी भाषा का प्रथम समाचार पत्र **उदन्त मार्तण्ड** 30 मई,सन्1826को कानपुर निवासी युगल किशोर ने निकाल चुके थे उनके बाद **श्रीधर पाठक**, **पंडित बालमुकुन्द गुप्त** के **'शिव शंभू के चिट्टे'**, **पदम् सिंह शर्मा**, **विद्यानिवास** के **'सस्वती'** और **'कल्पना'** में **भ्रमरानंद के नाम से अनेक पत्र निकले। रामचंद्र शुक्ल के 'शुक्ल के पत्र श्री केदारनाथनाथ के** नाम', **'शुक्ल के पत्र श्री रायकृष्ण दास के नाम'**आदि देखने को मिलते हैं। इसके बाद **राजेन्द्र यादव** ने अपनी पुस्तक '**आदमी की निगाह में औरत**' में संग्रहित लेख '**सुनीता के पत्र जैनेंद्र के नाम**' में पिता-पुत्री का संवाद पत्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। **मोहन राकेश**, **श्रीलाल शुक्ल**, **भगवती प्रसाद वाजपेयी जी** के उपन्यासों में पत्र-शैली का प्रयोग मिलता है।

**"आलोच्य युग में पत्र के सन्दर्भ में जो संग्रह प्रकाशित हुए, उनमें पत्रांजलि, विवेकानंद–पत्रावलि, पत्रावलि तथा पिता के पत्र-पुत्री के नाम विशेषरूपेण उल्लेखनीय है।"**[2] पत्र-शैली में लिखे गए उपन्यासों में '**चंद हसीनों के खतूत**' पत्र-शैली में लिखा हिंदी पहला उपन्यास माना जाता है। पत्र शैली के विस्तार के लिए सबसे पहला प्रयास बनारसी दास ने किया था।

---

[1] पाण्डेय ,कैलाश . कार्यलायीन हिंदी . प्रभात प्रकाशन: प्रभात प्रकाशन .नई दिल्ली .2013.पृष्ठ 23

[2] नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास ,नई दिल्ली : मयूर पेपर बैक्स. 2014. पृष्ठ 583

इन्होंने कुछ लेखकों के साथ मिलकर पत्र लेखक मंडल की स्थापना भी की थी जिसके शिवपूजन सहाय स्थायी सदस्य थे।

पत्र शैली की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए उपन्यासों में **सूरज प्रकाश जी** का '**देसविराना**' उपन्यास महत्वपूर्ण है , जिसमें गगनदीप अपने घर से बचपन में ही किसी घटना के कारण चला जाता है। घर से बाहर चले जाने के बाद का संवाद पत्रों के माध्यम से होता है। **हंसराज रहबर** का '**अमिता उन्माद**' इसमें अमिता जब गोपाल से विवाह के लिए न कर देती है और योगराज के साथ विवाह करने को सहमत हो जाती है। इससे गोपाल को बहुत पीड़ा होती है और उपन्यास में इसी पीडा को पत्रों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। **कुसुम अंसल** ने अपने उपन्यास '**अपनी अपनी यात्रा**' में एक माँ और पुत्र के संवाद को माध्यम बनाया है। इसमें यदु एक ईसाई लड़की के साथ शादी करके घर छोड़ कर चला जाता है। जिसके बाद आगे की कथा पत्रों के माध्यम से चलती है। **राजी सेठ** का '**तत्सम**', **कृष्णा सोबती**'**समय सरगम**', **भीष्म साहनी** के '**नीलू–नीलिमा-निलोफर**',**द्रोणवीर कोहली** के '**नानी**' आदि उपन्यास पत्र-शैली में लिखे गए कुछ महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।

हिंदी साहित्य में पत्र शैली में लिखे गए इन उपन्यासों की संख्या बहुत ही कम मिलती है। पत्र-शैली के सम्बन्ध में अमृतराय कहते हैं कि, "**हम लोगों से मेरा अभिप्राय विशेष रूप से हिंदी भाषा के लोगों से है : क्योंकि पश्चिम के देशों को तो छोड़ ही दीजिए, जो इस विषय में बहुत ही सचेत हैं, हमारे यहाँ भी बंगला, उर्दू ,मराठी आदि क्षेत्रों को सभालकर रखने की प्रवृति पायी जाती है** ।"[1] हिंदी की तुलना में उर्दू में अनेक पत्र-शैली का विस्तार अधिक दिखाई देता है। मिर्जा ग़ालिब के खतूत प्रकाशित होते ही पत्रों का ताता सा लग जाता है।

हिंदी साहित्य में दो तरह के पत्रों का लेखन हुआ एक लेखक के स्वयं व्यक्तिगत पत्र जिनको कोई लेखक यह समझ कर लिखता है कि यह पत्र जिस व्यक्ति को लिखा जा रहा उसके आलावा

[1] w.w.w.navneethindi.com\साहित्य –की स्थाई संपत

उसके कोई नहीं पढ़ेगा तो वह उन में अपने मन की भाषा और स्वतंत्र बिन्दुओं को अंकित करता है। पत्र को जब पाठक के लिए लिखा जाता है तो वह पत्र एकलयता, जीवंतता और साहित्य के सरोकारों को साथ में लेकर चलता है। हिंदी साहित्य की पत्र-शैली परम्परा में एक नवीन विस्तार करता हुआ और समकालीन ज्वलंत समस्या को प्रस्तुत करने वाला एक अनोखी शैली में लिखा गया '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास हिंदी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। चित्रा मुद्गल का सन् 2016 में प्रकाशित यह उपन्यास भाषा शैली और संवाद योजना को बड़े ही सहज और स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत करता है। उपन्यास में पत्र-शैली का एक अनोखा प्रयोग यहाँ पर देखने को मिलता है। एक किन्नर बेटे का अपनी माँ से संवाद जो कि विनोद के लिखे सत्रह पत्रों में होता है लेकिन इसमें संवाद दोनों तरफ का प्रेषित होता है और पत्र एक होता है। इसमें माँ पुत्र सम्प्रेषणकर्ता और ग्रहणकर्ता की भूमिका में रहते है। हिंदी सहित्य के क्षेत्र में यह एक नया प्रयोग है इसलिए पत्र-शैली में लिखा गया यह उपन्यास अब तक लिखे गए उपन्यासों में भी अपना एक अलग स्थान रखता है।

किन्नर समुदाय के लोग वर्षो से दुत्कार, प्रताड़ना और अपमान झेल रहे है किन्तु वर्तमान समय में आज यह वर्ग सजग और सचेत दिखाई दे रहा है। विनोद भी इसी व्यवस्था का शिकार बनाया जाता है। अपनी स्कूली शिक्षा के दौरान सिर्फ चौदह वर्ष की अवस्था में ही किन्नरों की मण्डली को सौप दिया जाता है। विनोद बचपन से ही इंग्लिश मीडियम स्कूल में पढ़ा लिखा था इसलिए उसे इंग्लिश का ज्ञान भी था। घर परिवार से विस्थापित हो जाने के बाद उस पर दोहरा अघात हुआ एक तो घर परिवार से विस्थापन और दूसरा मानसिक और शारीरिक प्रताड़ना। घर परिवार के माता-पिता, छोटे भाई मंजुल की यादों ने विनोद का पीछा नहीं छोड़ा वह यादे हमेशा विनोद के साथ रहती हैं।

बचपन की तमाम यादें और उन से उपजा हुआ यह असंतोष ही उसे अपनी माँ से पत्र संवाद करने को प्रेरित करता है एक जगह विनोद कहता भी है कि माँ तुम्हीं बताओं तुम्हें पत्र लिखते हुए मैं

उस आदत को कैसे भूलू और पत्र लिखते हुए सब कुछ जान लेना चाहता हूँ। जिसे जानने के अधिकार से मैं अपदस्थ कर दिया गया हूँ और तुझे उस सबसे अवगत करा देना चाहता हूँ जिसको बताए बगैर में रह नहीं सकता। उपन्यास में लिख गये पत्रों माध्यम में विनोद अपनी माँ से वह तमाम प्रश्न करता है, जो किन्नर समुदाय के मुख्यधारा के समाज से हैं। उपन्यास का पात्र विनोद पढ़ा लिखा है, किन्तु जो लोग पढ़े लिखे नहीं रहते वह इन सब बातों को कैसे व्यक्त करते होंगे उनकी पीड़ा-दर्द तो उन्हीं तक सीमित रह जाते होंगे। उपन्यास का कथानक बड़े ही सहजता पूर्ण तरीके से रचाया गया है क्योंकि विनोद के माध्यम से सिर्फ एक व्यक्ति विशेष की समस्याओं और संवेदनाओं को चित्रित नहीं किया गया बल्कि सम्पूर्ण किन्नर समुदाय का प्रतिनिधित्व यहाँ पर किया गया है। यही सब आकुलताएं उपन्यास को सामाजिक सरोकारों से जोड़ती हैं। किन्नर वर्ग जो समाज का ही अंग है जिसको समाज हमेशा से ही बहिष्कार कर दुत्कारभरी नजरों से देखता आ रहा है।आज भी यह वर्ग समाज की मुख्यधारा में शामिल नहीं है। अपनी अस्मिता की पहचान के लिए आज भी यह वर्ग अपने अधिकारों एवं सम्मान के लिए संघर्ष के रास्ते पर है। ऐसे में चित्रा मुद्गल का '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' उपन्यास किन्नर वर्ग के लिए संजीवनी का काम करता है। चित्रा मुद्गल का यह चर्चित उपन्यास समाज के ऊपर सिर्फ सवाल ही खड़े नहीं करता उठाता बल्कि उन समस्याओं का व्यापक हल प्रस्तुत करता है।

इस उपन्यास के सन्दर्भ में वांग्मय पत्रिका में मधुरेश ने अपने लेख में कहा है कि- **"पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा का महत्व समाज की तीसरी सत्ता को उपेक्षा और तिरस्कार के अँधेरे से बाहर लाकर उसकी सहज मानवीय पहचान के लिए किये जाने वाले संघर्ष में निहित है और यही दरसल वह मुकाम है जहां खड़े होकर चित्रा मुद्गल को गले लगाकर शाबासी दी जा सकती है।**"[1] इस प्रकार चित्रा मुद्गल का यह उपन्यास यथार्थ का विस्फोटक चित्र ही उपस्थित नहीं करता बल्कि भविष्य को संकेतित करने के कारण आश्वस्त भी करता है। समाजिक

[1] मधुरेश, वांग्मय पत्रिका, अंकजुलाई .–दिसम्बर, 2017, पृष्ठ 100

सरोकरों की यह संवेदना उपन्यास को बड़े सरोकार से जोड़ती है। उपन्यास में इस बात का विरोध किया गया है कि पुरुषसत्तामक और उपभोगवादी  समाज के द्वारा निर्मित प्रतिमानों के अनुसार किन्नरों ने अपने को ढाल लिया है। लेकिन वह समाज उन्हें गुलाम बनाकर उनकी जिंदगी को ही गर्हित बना देगा। चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यासों में समाज की इस पुरातन रुढ़िवादी परम्परा का विरोध करके किन्नरों के लिए नए प्रतिमानों को गढ़ा है जिन प्रतिमानों पर चलकर किन्नर समाज के लोग अपने अधिकारों के प्रति सजग और सचेत हो सकते है।

चित्रा मुद्गल का सम्पूर्ण साहित्य मानवीय संवेदनाओं से ओत प्रोत दिखाई देता है और '**पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा**' भी मानवीय और समाजिक मूल्यों से अछूता नहीं है। सच्चा समाजवादी लेखक वही कहलाता है, जिसके साहित्य में समाज और देश की वह समस्त चिंताए व्याप्त हो जो समकालीन समय और समाज की माँग हो।

## किन्नरों का समाज एवं समाज में किन्नर : अस्मितामूलक अध्ययन

उपन्यास में मानव समाज के मानवीय मूल्य एवं किन्नर की अस्मिता एवं उनके सामाजिक ,राजनैतिक,सांस्कृतिक पक्षों बात की गई है। समाज विज्ञान विश्वकोश में अस्मिता को परिभाषित करते हुए कहा है कि,**"समाज विज्ञान विश्वकोश में अस्मिता या बहुवचन का पद अक्सर मनुष्य की वैयक्तिकता या समुदाय।समूह के साथ उसके रिश्तों को व्यक्त करने के लिए किया जाता है।"**[1] सामाजिक अस्मिताओं के मूल्यों की स्थापना पर बात करते हुए उनके मूल्य में निहित तथ्यों का विश्लेषण करना ही उपन्यास का केंद्रबिंदु है। किन्नरों की समस्याओं को केंद्र में रखकर लिखे गए इस उपन्यास में किन्नर वर्ग के सामाजिक,राजनैतिक,आर्थिक आधार पर उनकी समानता एवं उनके अधिकारों के सन्दर्भ में व्यापक  विश्लेषण उपन्यास में देखने को मिलता है।

---

[1] दुबे, अभय कुमार. समाज विज्ञानकोश. नई दिल्ली  : राजकमल प्रकाशन. 2013,पृष्ठ 89

‘अस्मिता‘ शब्द समकालीन हिन्दी साहित्य में अलग पहचान रखता है। यह शब्द एक निश्चित अर्थ से इतर अपने में सम्पूर्ण विचार श्रृंखला तथा व्यापक चिंतन दृष्टि रखता है। इस दृष्टि के अध्ययन से पूर्व ‘अस्मिता‘ शब्द के कोशगत अर्थ को देखना आवश्यक है। वामन शिवराम आप्टे ‘अस्मिता' शब्द ‘अस्मि + टाप’ का संयोग मानते हैं। इसका अर्थ अहंकार है। ‘अस्मि‘ शब्द ‘ अस्मिन् से बना है। ‘अस्मि‘ का विस्तृत रूप है ‘अस्मिता‘ जिसका अर्थ है ‘मैं‘ अथवा ‘अहं‘। वामन शिवराम आप्टे के अनुसार अस्मिता के अन्य अर्थ हैं –**“अभिमान, आत्मश्लाघा, घमंड, स्वाभिमान, गर्व तथा अपनी सत्ता का बोध होना।”**[1] दूसरी ओर डॉ. हरदेव बाहरी ‘अंग्रेजी हिन्दी शब्द कोश‘ में ‘आइडेंटीटी’ शब्द का अर्थ कुछ इस प्रकार करते हैं –**“व्यक्तित्व, विशिष्टता, सर्वसमता, एकरूपता, तादात्मय, अनन्यता, पहचान, परिचय।”**[2] चैम्बर्स ‘अंग्रेजी हिन्दी कोश‘ में‘अस्मिता‘ का अर्थ इस प्रकार है –**“ऐक्य, सारूप्य, समानता, एकरूपता, तादात्मय, विशिष्टता, व्यक्तित्व, व्यष्टित्व, अभिज्ञान, पहचान, परिचय, तत्समय, सर्वसमिता, सर्वसमता, अनन्यता, अभेद।”**[3] अस्मिता का उपर्युक्त कोशगत अर्थ प्रयोग रूढ़ि से निजत्व का द्योतक बन गया है। इस संदर्भ में डॉ. श्याम बहादुर वर्मा का मत उल्लेखनीय है –**“यह मानसिक भाव कि ‘मैं‘ हूँ। अपनी सत्ता के बोध का भाव। अहंभाव, अन्य व्यक्तियों, समाजों , राष्ट्रों आदि से भिन्नता दिखाने वाली विशेषताओं से युक्त और उनसे सिद्ध क्रमशः व्यक्ति। समाज। राष्ट्र का अपने अस्तित्व का भाव।”**[4] कोशगत अर्थ के अनुसार अस्मिता शब्द निजत्व, समूहगत, सामाजिक, जातिगत, राष्ट्रीय आदि सभी स्तरों पर समान रूप से पहचान के लिए स्वीकृत हुआ है।

कोशगत अर्थ से इतर ‘अस्मितामूलक विमर्श’ वर्तमान समय में हो रहे साहित्यिक शोधों का प्रमुख केन्द्र बनकर उभरा है। समकालीन समय में यह अपने में एक पूर्ण दृष्टि बनकर उभरा है। बीसवीं

---

[1] वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश, पृ .132

[2] डॉ. हरदेव बाहरी, अंग्रेजी हिन्दी शब्द कोश, पृ. 334

[3] सं.डॉ. सुरेश अवस्थी,डॉ. इंदुजा अवस्थी, चैम्बर्स अंग्रेजी - हिन्दी कोश, पृ. 624

[4] सं.,डॉ. श्यामबहादुर वर्मा,डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, बृहत-हिन्दी शब्दकोश, पृ. 260

सदी के अंतिम दशक से चिंतन के केन्द्र में आया अस्मितावादी विमर्श कई क्षेत्रों में विस्तार पा चुका है। यह विस्तारस्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श, किन्नर-विमर्श, आदिवासी-विमर्श, अल्पसंख्यक-विमर्श, दिव्यांग-विमर्श आदि विशाल वृक्ष की शाखाओं के रूप में दिखाई देता है । उपर्युक्त विषयों की प्रमुखता के कारण समकालीन समय को 'विमर्शों का दौर' कहना सही जान पड़ता है । वर्तमान दौर अमूल्यवान को मूल्यवान बनाने का भी दौर है । अस्मितामूलक विमर्श की शुरूआत भले ही नब्बे के दशक से मानी जाती है, परन्तु इसके बीज काफी पूर्व की साहित्य धरा में दिखाई देने लगते है । हिन्दी साहित्य का प्रयोगवाद 'अस्तित्ववाद' से सबसे ज्यादा प्रभावित दिखाई देता है । अस्तित्ववाद तथा अस्मितामूलक विमर्श के मूल में 'पहचान' ही है । परन्तु यह दोनों चिंतन दो युगों के चिंतन को दिखाता है । अस्तित्ववाद एक ओर जहाँ व्यक्ति-अस्मिता के साथ विचार के केन्द्र में आता है वहीं दूसरी ओर अस्मितामूलक विमर्श का केन्द्र समाज के हाशिये पर खड़े समूह है । उपर्युक्त विमर्श इसी ओर संकेत करते है । यह दो दृष्टियाँ इन्साक्लोपीडिया ऑफ सोशियोलाजी द्वारा 'अस्मिता' की परिभाषा में भी देखी जा सकती है-**"व्यक्ति-विशेष अपनी पहचान एक नहीं दो धरातलों पर बनाता हैं। एक वह जो उसका निजी व्यक्तिगत लघु समाज है, जिसका वह अभिन्न अंग हैं । दूसरा वह वृहत् समाज जिसमें वह प्रवेश पाना चाहता है, ताकि वह अपने आपको बाह्यजगत से जोड़ सके एवं किसी प्रभुत्व इकाई का भाग बन सके । अस्मिता सिद्धान्त विश्वास करती है कि विकल्प की संभाव्यता मानवीय जीवन या अस्तित्व में अंर्तभूत है। अस्मिता सिद्धांत इस सामाजिक सत्य की पहचान करती है कि सामाजिक संरचना एवं सामाजिक अन्तरक्रिया वैसे अंतर्भूत कारक है, जो मानवीय आचरण निर्धारित करते हैं। अस्मिता सिद्धांत एक ही परिस्थिति में विभिन्न लोगों द्वारा किए गये विभिन्न आचरणों में अपनी व्याख्या खोजती है ।"**[1] उपर्युक्त परिभाषा दो धूरियों की ओर ध्यान आकृष्ट करती है । पहला, व्यक्ति और दूसरा, समाज । यह दोनों धूरी आधुनिक काल की भीड़ में अपनी पहचान की

[1] बोरगेट, एडगर एफ एण्ड मेरी एल बोरगेट, पृ .स .871

खोज से प्रेरित है। अस्मितामूलक विमर्श मूलतः समाज का विमर्श न होकर समूह का विमर्श है। व्यक्ति तथा समूह के अस्तित्व का पूरक विकास आज के समय की 'अस्मितामूलक विमर्श' की विशेषता भी है। हिन्दी साहित्य के अंतर्गत व्यक्ति की सीमा तथा समूह की पहचान दोनों एक-दूसरे से जुड़कर सामाजिक विषमता की समस्याओं से जूझने का प्रयास करती है। जाति, धर्म, वर्ग आदि के आधार पर निर्मित विषमता भारतीय समाज की रूढ़िगत प्रवृत्तियों का संकेत करती है। जबकि अस्मितामूलक विमर्श इन विषमताओं से अलग हाशियाकृत समूहों को चयनित करता है। उसका उद्देश्य मुख्यधारा से वंचित समूह को समाज में सम्मानीय स्थान दिलाने का है। इसीलिए यह विमर्श हाशियाकृत समूहों की समस्याओं पर विचार करने तथा समाधान ढूँढने का प्रयास है। यह विमर्श साथ ही समूह के अस्मितामूलक प्रतीकों की खोज तथा निर्मिति द्वारा एक पहचान देने का काम करता है।

'समाज' एक से अधिक लोगों को आपस में मिलकर रहने वाले समुदाय को कहते हैं, जिसमें सभी व्यक्ति मानवीय क्रियाकलाप करते हैं। "**मैकाइबर एवं पेज के अनुसार "समाज संबंधों का जाल है**।"[1] समाज की सबसे छोटी इकाई परिवार होता है, जिसमें माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी, पिता-पुत्र, पति-पत्नी जैसे आपसी पास्परिक सम्बन्धों की जटिलता होती है। 'समाज' शब्द का प्रयोग व्यक्तियों के समूह के लिए प्रयोग करते हैं लेकिन सहीं अर्थों में हम देखें तो जलसे, जुलूस, रेलवे प्लेटफार्म, बस स्टैण्ड, धार्मिक स्थल आदि स्थानों पर एक से अनेक व्यक्तियों के समूह देखने को मिलते है लेनिक 'समाज' शब्द का प्रयोग अचानक उमड़ी भीड़ को करना तर्कसंगत नहीं होगा। अचानक उमड़ी इस भीड़ में वह सम्बन्ध देखने को नहीं मिलते जिनके आधार पर समाज का निर्माण होता है। समाज में ज्यादातर मानवीय क्रियाकलाप के आचरण, सामाजिक सुरक्षा, निर्वाह और पारस्परिक सम्बन्धों की जटिलता देखने को मिलती है लेकिन अचानक उमड़ी भीड़ में यह सब नहीं होता। जिन्सबर्ग के अनुसार "**समाज ऐसे व्यक्तियों का संग्रह है जो कुछ सम्बन्धों अथवा**

---

[1] मिश्रा, राजन .समाजशास्त्र का परिचय. आगरा :एस.आर.साइन्टिफिक पब्लिकेशन, 2006, पृष्ठ 40

**व्यवहार की विधियों द्वारा संगठित है तथा उन व्यक्तियों से भिन्न है, जो इस प्रकार सम्बन्धों द्वारा बँधे हुए नहीं है अथवा जिनके व्यवहार उनसे भिन्न हैं।**"[1] व्यक्ति के आचार-विचार उसके आदर्श, सिद्धान्त व व्यवहार उसके समाज अनुरूप ही होते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जब-जब उसे अपने दैनिक जीवन में कुछ महत्वपूर्ण कार्य करने की आवश्यकता महसूस होती है तो उसको एक दूसरे व्यक्ति की आवश्यकता जरुर पड़ती है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए जरुरत पर उसका साथ देता है। उसके दुःख सुख में साथ रहता है इसी तरह संबंधों के बढ़ते जाल से ही एक बड़े समूह का निर्माण होता है, जिसे सम्पूर्ण रूप में समाज कह सकते हैं। समाज को परिभाषित करते हुए ग्रिलिन ने कहा है कि,"**समाज तुलनात्मक रूप से सबसे बड़ा और स्थाई समूह है, जो सामान्य भू-भाग, सामान्य रहन-सहन तथा पारस्परिक सहयोग अथवा सामान्य बोलचाल की भाषा में हम समाज शब्द का प्रयोग सभी प्रकार के समूहों के लिए करते हैं।**"[2]

आदिम मनुष्य का इतिहास देखें तो उसकी आरंभिक अवस्था बर्बरता की थी, पशुओं की भाँति आदिम मनुष्य के रीति-रिवाज, खान-पान की सहजात प्रवृत्तियाँ पायी जाती थी। मानव सभ्यता का धीरे-धीरे विकास होने के साथ विवेकशीलता और आदर्शवादिता की जरूरत महसूस हुई और मनुष्य ने अपने जीवन के लिए कुछ नियमों में बाँधना जरूरी समझा था। जिसके लिए सिद्धान्त, आदर्श का निर्माण करना भी आवश्यक समझा। आदर्श व्यवस्था बनाए रखने के लिए उसने उन आदर्शों और सिद्धान्तों की रक्षा के लिए एक शासक की स्थापना की और सामाजिक नियमों का पालन न करने वाले के लिए दण्ड का प्रावधान रखा। दण्ड केवल शारीरिक ही नहीं अपितु मानसिक दण्ड का भी प्रावधान रखा गया। मानसिक दण्ड में अज्ञात अथवा ईश्वर का भय जोड़ दिया गया। भारतीय समाज आज भी कुछ ऐसे नियम समाज के व्यक्तियों पर आरोपित किए हुए हैं जो सामाजिकता की परिभाषा की सीमा पार करके असामाजिकता की श्रेणी में आ जाते हैं।

---

1 अग्रवाल, गोपालकृष्ण .मानव समाज. आगरा : आगरा बुकस्टोर, 1985, पृष्ठ 93

2 अग्रवाल, गोपालकृष्ण .मानव समाज. आगरा :आगरा बुकस्टोर, 1985, पृष्ठ 94

भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज है जिसमें वर्गीय-लिंगीय और जातीय भेदभाव आज भी देखने को मिलता हैं। आधुनिकता के चलते आज मनुष्य संवेदनशील नहीं है। मनुष्य उपयोगिता एवं उपभोग प्रवृत्ति का हो गया है। गोपाल कृष्ण अग्रवाल समाज को परिभाषित करते हुए कहते है कि ,"**भारतीय समाज अनेकता में एकता का प्रतीक कहा जाता है परन्तु मेरे विचार से हमारा समाज विविधताओं और विषमताओं का विश्व में सबसे बड़ा उदाहरण कहा जा सकता है। भारतीय समाज की संरचना में जातिभेद-पूँजीवाद-ब्राह्मणवाद सदा से ही इतना हावी रहा है कि इसमें कुछ समुदायों को छोड़कर किसी इंसान को इंसान के रूप में मान्यता ही नहीं दी** ।"[1] भारतीय समाज में इसी प्रकार की पुरातन रूढ़िवादी घिसी-पिटी मानसिकता व्याप्त है, जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति का हमेशा विरोधी बनाती है। समाज में व्याप्त पूँजीवादी एवं पुरुषसत्तात्मक समाज हमेशा से ही कमजोर, असहाय और वंचित, शोषितों का शोषण करता आ रहा है। वर्चस्ववादी समाज स्त्री, दलित, आदिवासी, किन्नर जैसे वर्गों का हमेशा से शोषण कर रहा है। हाशिए पर किया गया यह वर्ग अपने अस्तित्व एवं अस्मिता की लड़ाई निरंतर लड़ता आ रहा है। समाज की मानसिकता संघर्ष करने से बदलती है और आज इसी कारण इन वर्गों के प्रति समाज का रवैया बदल रहा है। इन्हें अपनी समानता के अधिकार मिल रहे हैं। भारतीय समाज हमेशा से ही पुरुष प्रधान उपभोक्तावादी समाज रहा है। जिसका मानना है कि सिर्फ स्त्री-पुरूष की ही समाज के विकास में अहम् भूमिका है किसी तीसरे की नहीं। किन्नर जो कि न सम्पूर्ण स्त्री है न सम्पूर्ण पुरुष। उनके अस्तित्व को लोग जानते हैं लेकिन मानते नहीं क्योंकि वे लिंग दोषी हैं। सन्तान उत्पन्न कर नहीं सकते,भोग सुख से वंचित हैं। प्रकृति प्रदत्त इस दोष के चलते उन्हें परिवार व समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है। जन्म होते ही अगर किसी व्यक्ति को उसके समस्त अधिकारों से वंचित करके सड़क पर या किसी अज्ञात व्यक्तियों के हाथ में सौंप दिया जाए तो उसकी मानसिक स्थिति क्या होगी।

[1] प्रताप, विजेंद्र सिंह .उद्धृत .कुमार गौरव. (सं). जनकृति अंतरराष्ट्रीय पत्रिका. वर्ष 2, अंक 18. अगस्त 2016

माता-पिता के प्यार, शिक्षा, रोजगार, सांस्कृतिक रूप से वंचित रखा जाए तो व्यक्ति के पास अपना जीवन जीने के लिए सिर्फ असामाजिक कार्य ही बचते हैं, जिनमें आज अधिकांश किन्नर अपराधिक कार्यो में लिप्त पाए जाते हैं।

'किन्नर' शब्द सुनते ही लोगों के दिमाग में समाज के उस बहिष्कृत-तिरस्कृत वर्ग की छवि बनने लगती है जो समाज में सिर्फ शुभ कार्यों पर शगुन मांगने ही आते हैं। घर में किसी बच्चे के जन्म पर, शादी-ब्याह और किसी भी मांगलिक कार्यों पर नाँचते, गाते आपके बच्चें को दुआएं देते मिलते हैं। बस, ट्रेन, सड़क या किसी पार्क में भी अक्सर किन्नरों को पैसे मांगते देखा जाता है। समाज से बहिष्कृत किन्नरों के बारे में शायद ही किसी ने सोचा होगा कि आखिर क्यों यह लोग हिकारत भरी जिन्दगी जीने और गली-गली पैसे मांगने पर मजबूर हैं। मनुष्य होकर भी मनुष्यता के अधिकारों से वंचित यह वर्ग आज अपने अधिकारों की माँग करता दिखाई दे रहा है। घर परिवार से निष्कासित यह किन्नर जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाए हों और पुरुष होकर भी स्त्री रूप में रहने में सहजता महसूस करते हों उन्हें किन्नर कहते हैं। किन्नरों के लिए यथा स्थान तरह-तरह के नाम सुनने को मिलते हैं।

भारत में किन्नरों को अनेक भाषाओं में अनेक नामों से जाना जाता है। भारत देश में अनेक भाषाएं एवं बोलियाँ पाई जाती है और अनेक भाषाओं और बोलियों में अपनी भाषा के तर्ज पर किन्नरों को अनेक नामों से संबोधित किया जाता है। किन्नर समुदाय को उर्दू में 'खोजवां, हिजड़ा', हिंदी और बंगाली में 'हिजड़ा', कन्नड़ में 'माछा', तमिल में 'नंगाई, अरुवन्नी', पंजाब और पाकिस्तान में 'खुसरा' तथा गुजराती में 'पवैया' कहा जाता है।"[1]

थर्ड जेंडर को परिभाषित करते हुए डॉ.अनुसुय्या त्यागी ने कहा है कि, "**किसी भी व्यक्ति के पुरुष या स्त्री के रूप में पहचाने या परिभाषित किए जाने के लिए स्पष्ट यौनांग होना**

---

[1] प्रताप, विजेंद्र सिंह .उद्धृत .कुमार गौरव. (सं). जनकृति अंतरराष्ट्रीय पत्रिका. वर्ष 2, अंक 18. अगस्त, 2016,पृष्ठ 7

**आवश्यक है। इसके लिए जननांग की अनियमितता महत्वपूर्ण है ऐसे मानव हिजड़े कहे जाते हैं जो लैंगिक रूप से न नर होते है न मादा।**"[1] किन्नरों को चार शाखाओं में विभक्त किया गया है, बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। मुख्य धारा के समाज जैसा किन्नरों का भी अपना समाज होता है जहाँ उनके अपने रीतिरिवाज और परम्परा होती है। जब भी किसी किन्नर बच्चे को किन्नरों के समाज में शामिल किया जाता है तब उसे किन्नर समाज के रीति रिवाज के अनुसार ही किसी किन्नर को समुदाय में शामिल किया जाता है। किन्नरों में गुरु परम्परा भी होती जिसमे एक गुरु के पास चार पांच चेले होते हैं। किन्नर समुदाय में प्रवेश करने से पहले उन्हें बधिया प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। उनका एक मुखिया या एक सरदार होता है, जिनके अधीन सभी किन्नरों को रहना पड़ता है। गुरु-चेले की भी प्रक्रिया इनमें प्रचलित मानी जाती है। किन्नर समुदाय में प्रवेश करने से पहले 'दीक्षा' संस्कार करवाया जाता है, जिसे निर्वाण प्रक्रिया भी कहते हैं। यह प्रक्रिया सबसे पहले ही होती है। यह माना जाता है कि किन्नर समाज में जिस भी व्यक्ति का निर्वाण संस्कार होता है, उसको साड़ी और चूड़ियों को पहन दुल्हन के रूप में सजाया जाता है।

किन्नर समुदाय के लोग भी अपने समुदाय के व्यक्तियों के लिए अलग सिद्धान्तों और मूल्यों का निर्माण करते हैं। किन्नर समुदाय की यह भी मान्यता है कि उनमें किसी भी प्रकार का वर्णव्यवस्था या जाति, धर्म नहीं होता जैसा भारतीय समाज में देखने को मिलता है। मान्यता है कि किन्नर एक दिन के लिए शादी भी रचाते हैं। महाभारत काल में जब पांडवों को युद्ध में जीत हासिल करने के लिए देवी को नर बलि की आवश्यकता होती है तो अर्जुन के पुत्र अरावन ने इसके लिए अपने आप को प्रस्तुत कर दिया। किन्तु उसने शर्त रख दी कि बलि से पूर्व वह एक दिन के लिए विवाहित जीवन का आनंद लेना चाहता है। एक रात के बाद उसकी मृत्यु का होना तय है इसलिए कोई भी उससे विवाह करने को तैयार नहीं हुआ तो श्री कृष्ण ने मोहनी के रूप में अरावन से विवाह किया और दूसरे दिन उसकी विवाहिता के रूप में विलाप भी किया। उसी दिन से किन्नर, कूवगम, विल्लुपुरम-तमिलनाडु में

[1] प्रताप विजेन्द्र , गौड़ रविकुमार. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली: अनंग प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 32

अरावन के मंदिर में जाकर कृष्ण के स्त्रैण रूप में स्वयं को स्थापित करके उनसे विवाह करते हैं और दूसरे दिन विधवा हो जाते हैं। किन्नर समुदाय के संबंध में अनेक ऐसी मान्यताएँ हैं, जो उनके क्रियाकलाप और रीति-रिवाजों में आज भी देखने को मिल जाती है। लिंग दोष के चलते समाज इनको भले ही समाज का अंग नहीं मानता लेकिन यह समाज का अंग हैं, यह बात समाज को स्वीकार करनी ही होगी। किन्नरों के बारे में कई प्रकार के मिथक और किस्से आज भी हमारे समाज में व्याप्त हैं। किन्नरों के सम्बन्ध में मान्यता है कि जब भी किसी किन्नर की मृत्यु  होती है तो किन्नर की शव यात्रा को उठाने से पूर्व जूतों व चप्पलों से पीटा जाता है। हिजड़े के मरने के उपरांत पूरा किन्नर समुदाय ख़ुशी मनाता है। किन्नरों की शवयात्रा रात में निकलती है क्योंकि इस संदर्भ में मान्यता है कि रात में इनके शव को चला कर शमशान तक ले जाया जाता है और सभी किन्नर शव को दफनाते समय उसे पीटते हैं ताकि वह अगले जन्म में किन्नर के रूप में जन्म न ले।

किन्नरों के संदर्भ में संभावित सत्य या असत्य की मान्यताएँ हैं। उनसे स्पष्ट होता है कि जिस प्रकार कोई भी समाज अपने समाज की आदर्श व्यवस्था, और समाज संचालन के लिए कुछ नियम सिद्धान्त बनाता है, उसी प्रकार किन्नर भी अपने समाज के अलग रीति-रिवाज बनाते हैं। जिनका पालन करना किन्नर समुदाय के व्यक्तियों का कर्तव्य होता है। व्यक्ति एवं समाज का एक दूसरे से घनिष्ट संबंध हैं। व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु तक जो कुछ भी जैविक और मानसिक योग्यताएँ मिलती हैं उसी क्रमानुसार वह समाज का अंग बनता है। जीवनपर्यन्त बालक समयानुसार बड़ा होता है और अपने जीवन में गुण, अवगुण जो कुछ भी सीखता है उसमें समाज का महत्वपूर्ण योगदान होता है। व्यक्ति कितना भी योग्यतापूर्ण क्यों न हों, प्रगति के लिए उसे सदैव समाज की सहायता लेनी पड़ती है। अपने जीवन की प्रत्येक अवस्था में व्यक्ति समाज से जुड़ा रहता है और इसलिए उसके विकास की अवधि में सदैव समाजीकरण होता है।

भारतीय समाज में देखा जाए तो हमेशा से ही वर्चस्ववादी समाज के द्वारा दमित, शोषितों और कमजोरों को दबाया ही जाता रहा है। समाज के विकास में प्रत्येक व्यक्ति का समान योगदान होता है

फिर किसी व्यक्ति को उसके अधिकारों से वंचित क्यों रखा जाता है। समाज की इस मानसिकता का विरोध करते हुए डॉ. विजेंद्र कहते हैं कि,"**सामान्यतः सृष्टि पुरुष तथा स्त्री के संयोग से ही उत्पन्न होती है। तात्पर्य यह है कि समाज के दो प्रमुख घटक हैं- पुरुष एवं स्त्री। पुरुष नर कहलाता है और स्त्री नारी कहलाती है। नर तथा नारी के मध्य "किम् नर:नारिवा? ऐसा प्रश्न समाज के उस घटक के लिए उपस्थित है, जिन्हें किन्नर कहते हैं**।"[1] भारतीय समाज में हमेशा देखने को मिलता है कि जब भी किसी परिवार में पुत्र का जन्म होता है, तो परिवार में खुशियाँ मनाई जाती है। सभी की जिज्ञासा रहती है कि जन्म लेने वाला लड़का है या लड़की होगा। लड़का हो तो सभी खुशियाँ मनाते हैं अगर वह कोई तीसरा निकला तो समझों परिवार पर मुसीबत आ जाती है। शीघ्र ही उसको मरवा दिया जाता है या फिर घूरे या सड़कों पर फेंक दिया जाता है। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो उस बच्चे को किन्नरों की मण्डली को सौंप दिया जाता है। किन्नरों के यहाँ पर परिवार से दूर अलग ढंग से प्रशिक्षित किया जाता है और उसे किन्नर समुदाय में शामिल कर लिया जाता है। किन्नर समुदाय में जाकर वह नाच-गाना सीखकर एक अच्छा कलाकार तो बन जाता है लेकिन समाज में उसका सम्मानजनक स्थान नहीं होता है।

सरकार द्वारा समानता के अधिकार मिल जाने के बाद क्या यह समुदाय मुख्यधारा के समाज में सम्मिलित हो सकता है ? क्या इस वर्ग को हमेशा समाज बहिष्कृत व तिरस्कृत ही करता रहेगा ? नहीं, क्योंकि किन्नरों की ऐतिहासिक एवं पौराणिक पृष्ठभूमि हमारे भारतीय पौराणिक मिथकीय ग्रन्थों और वैदिक संस्कृत में तीन लिगों का होना इस तथ्य को और भी प्रमाणित करता है कि उस समयके साहित्य एवं समाज में किन्नरों की उपस्थिति बराबर देखने को मिलती है। मिथकीय ग्रन्थों के अनुसार सतयुग से कलयुग तक इनके रहन सहन में परिवर्तन आता गया। देवताओं और राजाओं की खुशी में नाचने वाले आज समाज में मजबूरी बस नाच-गा रहे हैं। आजीविका उपार्जन की भी समस्या उनके

---

[1] प्रताप विजेन्द्र , गौड़ रविकुमार. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली: अनंग प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 247

सामने रहती है। जीवनचर्या चलाने के लिए वह अपराधी प्रवृत्ति या सेक्स जैसे कार्यों में लिप्त हो जाते हैं।

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व सन् 1871 से पहले तक भारत में किन्नरों को ट्रांसजेंडर के रूप में देखा जाता था लेकिन परिस्थिति तब बदल गई जब भारत पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया और किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स यानी जरायमपेशा जनजाति की श्रेणी में डाल दिया गया था। भारत आजाद हुआ और भारत के नए संविधान में किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स से निकाल दिया गया। मुगल काल में किन्नरों की स्थिति कुछ अच्छी देखने को मिलती है। मुग़ल काल में किन्नरों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था । आज वर्तमान में भी किन्नरों को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखता बल्कि किन्नरों को समाज की मुख्य धारा से अलग ही रखा गया है।

संघर्ष की लंबी लड़ाई के बाद सन् 2014 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा किन्नरों को समानता के अधिकार दिये गए और ऐसे अनुच्छेदो को भी जोड़ा गया जिनके द्वारा सभी व्यक्तियों को समानता का अधिकार मिल सके अनिवार्य है,"**अनुच्छेद 14, 15, 16 और 21 का लिंग से कोई संबंध नहीं है। इसलिए ये सिर्फ स्त्री-पुरुष तक सीमित नहीं हैं। इनमें किन्नर भी शामिल हैं**।"[1] सुप्रीम कोर्ट ने समानता के अधिकार के साथ शैक्षिक, चिकित्सकीय सुविधाओं की घोषणा की और समाज में उनको अपमान, शर्म, सामाजिक कलंक आदि सामाजिक मुद्दों के निवारण का गम्भीर प्रयास करने का आदेश दिया। न्यायालय का आदेश यह भी है कि इनको समाज की मुख्य धारा में शामिल करने के लिए विशेष कदम उठाए जाएं ताकि किन्नर अपने को अलग-थलग न समझे। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का विरोधी न बने इसलिए समानता का संवैधानिक प्रयोग एक कल्याणकारी राष्ट्र निर्माण में अहम् प्रयास सिद्ध होगा।

[1] प्रताप विजेन्द्र , गौड़ रविकुमार. विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली: अनंग प्रकाशन, 2016, पृष्ठ 164

**'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा'** उपन्यास में उन समस्त सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक प्रवृत्तियों पर ध्यान दिलाने का प्रयास किया गया है, जिसके कारण किन्नरों को समाज से अलग-थलग होना पड़ता है। सरकारी नीतियों और घोषणाओं का भी पर्दाफास भी यहाँ पर किया गया है। यह उपन्यास किन्नर समुदाय के लिए सराहनीय कार्य करता है। जैसे अँधेरे को मिटाती हुई सूरज की किरण पृथ्वी पर अपना प्रकाश विखेरती है उसी तरह **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास'**भी किन्नर समुदाय के लिए एक उम्मीद की किरण बन कर सामने आता है। उपन्यास में किन्नर समुदाय एवं मुख्यधारा के समाज का यथार्थ  पाठक वर्ग के सामने लाने का प्रयास किया गया है। व्यक्ति को अपने अधिकारों के प्रति सजग सचेत और लड़ने की प्रेरणा यहाँ पर दी जाती है। साथ में यह भी बताया जाता है कि किस प्रकार समाज में किन्नरों शोषण हो रहा है। समाज की किन्नरों के प्रति क्या  मानसिकता है। राजनैतिक लोग किस तरह कमजोर और शोषितों को अपनी स्वार्थवृति का माध्यम बनाकर प्रयोग करते हैं। इस उपन्यास में समाज के अनछुए और अनकहे सत्य को समाज के सामने लाने का प्रयास किया गया है। उपन्यास में जहा एक ओर किन्नरों की पीड़ा है, दर्द है तो दूसरी ओर उनका संघर्ष है जहाँ उनके मुक्ति के अनेक रास्ते हैं। उपन्यास में मुख्यधारा के समाज की मानसिकता का चित्रण किया गया है और किन्नर समाज के गुरुओं और सरदारों  के सन्दर्भ में कहा गया है कि यह सरदार कुछ पैसों के लिए किन्नरों को पूँजीपति और राजनैतिक लोगों के हाथ सौप देते है। एक बार इन लोगों के साथ हो गए तो मुक्ति के रास्ते भी नहीं मिलते हमेशा गुलाम बनकर ही रहना पढता है। सामाजिक और मानवीय मूल्यों का प्रतीक यह उपन्यास किन्नर समुदाय के लिए एक नई पृष्ट भूमि खड़ा करता है। जहाँ से तमाम नए विकास रास्ते निकलकर सामने आते हैं। शिक्षा, रोजगार, आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान का पाठ पढ़ाता यह उपन्यास किन्नर समुदाय औए मुख्यधारा के समाज के सामने अनेक प्रश्न खड़े करता है। सामाजिक सरोकारों से लेकर एक कल्याणकारी देश निर्माण की चाह उपन्यास में देखने को मिलती है।

# उपसंहार

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध **'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन'** पर शोध कार्य के लिए चित्रा मुद्गल के व्यक्तित्व, कृतित्व और उनकी रचनाधर्मिता का अध्ययन किया गया। लेखिका की प्रमुख रचनाओं और प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध के आधार ग्रन्थ **'पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा'** का विश्लेषणात्मक अध्ययन करने से चित्रा मुद्गल के जीवन अनुभव, समाज के प्रति व्याप्त संवेदना के अनेक पहलू निकल कर सामने आते हैं।

परिवार में जब भी किसी बच्चें का जन्म होता है तो परिवार के सभी सदस्य उत्सुकता बस यह पूछते है कि घर में लड़का हुआ या लड़की और इन दोनों में से कोई भी हो परिवार बाले खुशी मानते हैं और कहते हैं कि , कुल का दीपक आ गया। लड़का या लड़की न होकर कोई तीसरा हुआ तो परिवार बालों की खुशी मातम में बदल जाती है। उस बच्चें को कुल का कलंक मानकर जल्दी से जल्दी घर-परिवार से किसी को बिना सूचना दिए मार दिया जाता है या फिर घूरे पर फेक दिया जाता है। अगर किसी कारण बस ऐसा नहीं हुआ तो किन्नरों की मण्डली को सौप दिया जाता है। 'किन्नर' मण्डली के पास जाने के साथ उस बच्चें को अपने घर के दरवाजें हमेशा के लिए बंद कर दिए जाते हैं। उसके सपनों ,आकांक्षाओ सबका गला घोट दिया जाता है। छोड़ दिया जाता है दर- दर की ठोकरें खाने के लिए।

चित्रा मुद्गल का सन् 2016 में प्रकाशित **'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा'** उपन्यास अपने कथ्य एवं शिल्प की विशिष्टता के कारण मानवीय एवं सामाजिक मूल्यों के आत्मसात करने में एक सफल उपन्यास है। समाज के अभिन्न अंग की समस्याओं को केंद्र में रखकर लिखा गया यह उपन्यास किन्नरों के दुःख दर्द और दैनिक यथार्थ को बड़ी ही संजीदगी के साथ प्रस्तुत करता है। प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंन्ध **'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा : थर्ड जेंडर का अस्मितामूलक अध्ययन'** पर कार्य करते हुए स्पष्ट होता है ,कि 'किन्नर' समुदाय का अस्तित्व भारतीय समाज एवं

संस्कृति में प्राचीनकाल से देखने को मिलता रहा है। भारतीय सांस्कृतिक एवं धार्मिक परंपराओं के प्रमुख मिथकीय आधार ग्रन्थ 'रामायण' और 'महाभारत' का अध्ययन करने पर यहाँ किन्नर समुदाय का समाज की मुख्यधारा में स्थान देखने को मिलता है । लेकिन यहाँ भी समाज के एक भिन्न अंग के रूप में ही इनको स्वीकार किया गया है। 'रामायण' में प्रमुख पात्र **राम** को भारतीय समाज एवं संस्कृति के आदर्श रूप में प्रस्तुत किया गया है और उन्हें भगवान का रूप स्वीकार किया गया है। 'रामायण' जैसे धार्मिक ग्रंथ पर जन-जन की आस्था और विश्वास दिखाई देता है। 'रामायण' में भी किन्नरों के सन्दर्भ में ऐसे अनके प्रसंग आते हैं जिनके माध्यम से किन्नरों का 'रामायण' कालीन समय और साहित्य में किन्नरों के सन्दर्भ में अध्ययन किया गया है। इस समय किन्नरों को अनेक ऐसे वरदान **राम** के द्वारा प्रदान किए गये हैं। किन्नर समुदाय के प्रति आज भी समाज मे अनेक ऐसी परम्पराएँ हैं जो आस्था का प्रतीक बनी हुई हैं।

धर्म, अर्थ, काम मोक्ष्य जैसे दार्शनिक पक्षों को अपने आप में आत्मसात किये हुए 'महाभारत' जैसा धार्मिक ग्रन्थ एक महाकाव्य की भूमिका निभाने में सफल माना जा सकता है। 'महाभारत' में '**शिखंडी**', '**वृहन्नला**', '**अरावन**' जैसे पात्रों के सन्दर्भ के माध्यम से जो प्रयोग होते हैं। इससे 'महाभारत' कालीन समय और साहित्य में किन्नरों की उपस्थिति और समाज कल्याण में किन्नरों की भूमिका को देखा गया है। 'महाभारत' कालीन समाज और साहित्य पर बात करे तो यहाँ पर किन्नर समुदाय के लिए समाज में थोडा सम्मानजनक स्थान देखने को मिलता है। किन्नर समुदाय के सन्दर्भ में मिथकीय संसार में व्याप्त यथार्थ और वर्तमान समाज में व्याप्त यथार्थ के सत्य में बहुत अंतर देखने को मिलता है।

संस्कृति और परंपरा के संचालन करने वाले मिथकीय ग्रंथों के अनुसार किन्नरों ने धर्म की रक्षा करने में अपना विशेष योगदान दिया लेकिन समाज में उनको दोयम दर्जे पर ही रखा गया। मिथकीय समाज की पौराणिक कथाओं किवदंतियों के अनुसार देवताओं के यहाँ पर नाचने वाले किन्नर आज समाज से बहिष्कृत हैं। समय परिवर्तन अनुसार किन्नर समुदाय को लेकर समाज की

मानसिकता में परिवर्तन होता गया। सामाजिक परिवर्तन के इन सभी बिन्दुओं को केंद्र में रखकर अध्ययन करने पर देखा गया है कि भारतीय धार्मिक ग्रंथों में किन्नरों को कुछ सम्मानजनक जीवन यापन करने को मिलता है, और उनके द्वारा अनेक वीरतापूर्ण व सम्मान जनक कार्यों के भी प्रमाण मिलते हैं।

भारतीय समाज के प्रमुख्य ऐतिहासिक ग्रंथों में वैदिक परंपरा के 'मनुस्मृति', 'पारणी', 'कामसूत्र' आदि ऐतिहासिक ग्रंथों में पुंलिंग और नपुंसकलिंग के रूप में परिभाषित किया गया है। मुगलकालीन भारत में हिन्दू और मुस्लिम शासकों द्वारा किन्नरों के इस्तेमाल खासतौर पर अंतःपुर और हरम में रानियों की पहरेदारी के लिए किया जाता था। हरमों में बहुत स्त्रियाँ रहती थी, इसलिए किन्नरों को उनकी सुरक्षा के लिए तैनात किया जाता था। इसके पीछे राजाओं की यह सोच रहती थी की रानिया पहरेदारों के साथ अवैध सम्बंध स्थापित न कर सकें। 'इतिहास' में ऐसे अनेक किन्नरों का वर्णन है जिनके द्वारा अनेक युद्ध लड़े गए। **मुहम्मद मलिक काफूर** जो **अलाउद्दीन खिलजी** का बफादार सेनापति था उसके मध्यम से खिलजी ने अनेक युद्ध जीते। **जहाँगीर** के शासनकाल में अनेक किन्नर महत्वपूर्ण पदों पर रहे।

भारत में अंग्रेजी शासन व्यवस्था के लागू होने के साथ ही किन्नरों की दयनीय स्थिति हो गयी उन्हें अपराधी खाँचे में डाल दिया गया। आधुनिक समाज व्यवस्था के लोग किन्नरों की मिथकीय एवं ऐतिहासिक मान्यताओं के आधार पर आज किन्नरों को समाज में स्थान देने में समर्थ नहीं हैं। भारतीय संविधान मे वर्णित समानता के सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक सभी मानवीय अधिकारों को ध्यान में रखते हुए किन्नरों को सन् 2014 में सुप्रीम कोर्ट ने समानता के समस्त अधिकार प्रदान कर दिए गए। समाज इन्हें स्वीकार करने को तैयार ही नहीं है। सामाजिक एवं राजनैतिक लोगों के द्वारा निरंतर इनका शोषण किया जा रहा है। समाज एवं सरकार के द्वारा इस वर्ग के विकास के लिए विशेष कार्य नहीं किया जा रहा है। सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों के ह्रास की संवेदना से 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' जैसे उपन्यास का कथ्य एवं शिल्प को रचा गया।

मानवीय संवेदनाओं को आत्मसात करता हुआ पत्र-शैली में प्रस्तुत इस उपन्यास पर शोध कार्य करते हुए कुछ ऐसे प्रश्न भी उपन्यास से निकलकर समाज के समक्ष आते हैं। उनका व्यापक और समाधान पूर्वक उत्तर उपन्यास में लेखिका द्वारा दिया गया है । यह सम्पूर्ण उपन्यास जहाँ एक ओर किन्नरों के दुःख दर्द संवेदनाओं से भरा पड़ा है, वहीं दूसरी ओर उनके दुःख दर्द की समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत करने का कार्य करता है । उपन्यास में मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखते हुए समतामूलक समाज की स्थापना करने का प्रयास किया गया है। समाज में आज किन्नर समुदाय को लेकर अनेक ऐसी मान्यताएँ प्रचलित हैं । किन्नर समुदाय के अधिकारों पर बात करते हुए किन्नर समुदाय और मुख्यधारा के समाज की यथास्थिति को केंद्र में रखकर यहाँ पर शोध कार्य किया गया है । किन्नरों के स्वतंत्र अस्तित्व की माँग इस उपन्यास का आग्रह है। सरकार द्वारा (0) अन्य की सीमित परिधि में यह लोग नहीं रहना चाहते किन्नरों को स्वतंत्र लिंग चुनने का अधिकार दिया जाए और ऐसे माता-पिता को भी कटघरे में लाया जाए जो लिंग दोषी बच्चों को सडकों या घूरों पर फेंक देते हैं, जन्म होते ही मार डालते हैं, या फिर किन्नर समुदाय को सौंप देते हैं। इन सभी तथ्यों को देखने के साथ मानवीय मूल्यों के अस्तित्व की पहचान का भी प्रयास किया गया है । 'किन्नर' समुदाय की विडंबनाओं, विसंगतियों की समस्याओं का अस्मितामूलक अध्ययन करने के साथ किन्नर समुदाय तथा मुख्यधारा के समाज को जोड़ने वाले अंतर्सूत्रों की स्थापना की गयी है।

किन्नर समुदाय की समस्याओं कों लेकर पत्र-शैली में लिखा गया है यह उपन्यास अलग पहचान रखता है । पत्र-शैली में लिखे गए इस उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने अपने भावों एवं संवेदना को पाठक वर्ग के सामने मार्मिक तरीके से प्रस्तुत किया है। किन्नर समुदाय की समस्याओं को लेकर अन्य उपन्यास भी लिखे गए है लेकिन पत्र-शैली मे लिखित इस उपन्यास में व्याप्त संवेदनाओं का प्रभाव पाठक वर्ग पर व्यक्तिगत रूप से देखने को मिलता है। उपन्यास के पात्र और संवाद एक अपनेपन का बोध कराते हैं । आधुनिक समाज वयवस्था में अनेक पुरातन रूढ़ियों पर कुठराघात किया गया। समाज मे अनेक रूढ़ियों जैसे –सती प्रथा ,बाल विवाह ,विधवा-विवाह आदि

को तोड़ा और समाज के वंचित वर्गों में दलित, स्त्री और आदिवासियों के प्रति भी समाज का रवैया थोडा-बहुत परिवर्तित हुआ । लेकिन किन्नर समुदाय समाज का अभिन्न अंग होते हुए भी बहिष्कार एवं तिरस्कार की पीड़ा भोग रहा है । सामाजिक समानता और एकता का आग्रह करता यह उपन्यास मानवीय सभ्यता के लिए एक सशक्त मार्ग प्रशस्त करता है । उपन्यास के माध्यम से समाज के सामने लेखिका ने अपनी बात रखते हुए कहा है कि किन्नरों को उनके अधिकार और सामाजिक न्याय दिलाने हैं, तो माता पिता एवं किन्नरों के गुरुओं एवं सरदारों को जागृत होने की जरुरत है । किन्नरों के समानता के आग्रह के साथ समतामूलक समाज और एक आदर्शवादी व कल्याणकारी राष्ट्र निर्माण करना इस लघु- शोध- प्रबंध का प्रमुख्य उद्देश्य है ।

इस उपन्यास पर शोध कार्य करते हुए किन्नर समुदाय से सम्बंधित ऐसे अनेक प्रश्न समाज के सामने खड़े होते है, जिनके सन्दर्भ में समाज संवेदनशील नहीं है । पारिवारिक संबंधो में माँ-बेटे के सम्बंध को इसमें बड़ी ही संजीदगी के साथ प्रस्तुत किया गया है । एक तरफ विनोद की माँ मुखधारा के समाज का प्रतिनिधित्व करती है । दूसरी तरफ विनोद किन्नर समुदाय का प्रतिनिधित्व करता दिखाई देता है । उपन्यास के अन्य पात्र पूनम और चंदा भी शिक्षित होकर आत्मनिर्भर बनना चाहती हैं । उपन्यास के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किन्नर समुदाय के लोग भी समाज द्वारा निर्मित पुरातन मूल्यों को नहीं स्वीकारना चाहते । किन्नर बच्चों को भी घर के अन्य बच्चों की तरह उनका पालन पोषण परिवार और समाज में ही किया जाए । सामाजिक,राजनैतिक,सांस्कृतिक सभी प्रकार से समानता के अधिकार प्रदान किए जाए ।

समानता का आग्रह करता यह उपन्यास समाज एवं पाठक वर्ग के सामने मुख्यधारा के समाज में व्याप्त रीतिरिवाजों एवं मान्यताओं के सम्बंध में जानकारी प्रदान करता है । दूसरी ओर किन्नर समुदाय के रीति रिवाजों और परम्पराओं से पाठक वर्ग को अवगत कराता है तथा उनकी यातनाओं से मुक्ति हेतु मार्ग प्रशस्त करता है । लेखिका चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास के माध्यम से समाज की एक महत्वपूर्ण समस्या को एक नए विमर्श के रूप में प्रस्तुत किया है । किन्नर समुदाय के

लोगों की ससम्मान सही सलामत घर वापसी और सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक सभी प्रकार से समानता का आग्रह करना और साथ में सामाजिक और मानवीय मूल्यों की स्थापना करने का प्रयास इस लघु-शोध-प्रबंध के माध्यम से किया गया है।

# संदर्भ ग्रंथ सूची


**आधार ग्रंथ :**

- मुद्गल, चित्रा. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2016

**सहायक ग्रन्थ :**

- अग्रवाल, गोपालकृष्ण. मानव समाज. आगरा : आगरा बुक स्टोर, 1985
- कुल्हरि, विजयलक्ष्मी. नारी विमर्श : दशा एवं दिशा. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2015
- गर्ग, पुष्पा. आधुनिक कविता और मिथक. नई दिल्ली : संजय प्रकाशन, 2006
- त्यागी, मुक्ता. समकालीन महिला उपन्यासों में नारी विमर्श. कानपुर : अमन प्रकाशन, 2014
- नगेंद्र. हिन्दी साहित्य का इतिहास. नई दिल्ली : मयूर पेपरबैक्स, 2014
- पाटिल, अशोक, एस.एस. भदौरिया. मूलभूत समाजशास्त्रीय अवधारणाएँ. भोपाल : मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1992
- फ्रेंकोइस बर्नियर, ट्रेवल्स इन द मुगल एम्पायर, पुनः लिखित विस्मिल, यूनाइटेड किंगडम : आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1934
- भीष्म, महेन्द्र. किन्नर कथा. नई दिल्ली : सामयिक प्रकाशन, 2016
- मिश्रा, राजन. समाज शास्त्र का परिचय. आगरा : एस. आर. साइन्टिफिक पब्लिकेशन, 2006
- मुद्गल, चित्रा. माधवी कन्नगी. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 1993
- मुद्गल, चित्रा. मेरे साक्षात्कार. नई दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2017

- लक्ष्मण, संतोष कुमार . मार्क्सवाद और प्रगतिवादी काव्य. कानपुर : विकास प्रकाशन, 2011
- वेदव्यास, श्री महर्षि. महाभारत. गोरखपुर : गीता प्रेस, संवत् 2072
- वनजा, के.. चित्रा मुद्गल : एक मूल्यांकन. नई दिल्ली : सामायिक बुक्स, 2016
- सिंह, डॉ. विजेंद्र प्रताप, विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनंग प्रकाशन, 2016
- सिंह, डॉ. विजेंद्र प्रताप. हिन्दी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर. कानपुर : अमन प्रकाशन, 2017
- लक्ष्मण, संतोष कुमार . मार्क्सवाद और प्रगतिवादी काव्य. कानपुर : विकास प्रकाशन, 2011
- सिंह, डॉ. विजेंद्र प्रताप, विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनंग प्रकाशन, 2016
- सिंह, डॉ. विजेंद्र प्रताप, विमर्श का तीसरा पक्ष. दिल्ली : अनंग प्रकाशन, 2016
- सौरभ, प्रदीप. तीसरी ताली. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2016
- त्रिपाठी, लक्ष्मीनारायण. मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2015

**पत्रिकाएँ :**

- आजकल, (सं.) फरहत परवीन, नालासोपारा : तीसरे जेंडर की लोमहर्षक त्रासदी, अंक नवंबर, सन् 2016
- जनकृति अंतरराष्ट्रीय पत्रिका, (सं.) कुमार गौरव, वर्ष 2, अंक 18, अगस्त, सन् 2016
- मधुरेश : वांग्मय पत्रिका,अंक जुलाई–दिसम्बर, सन् 2017, पृष्ठ 100

**शब्दकोश :**

- दुबे, अभय कुमार. (सं.). समाज विज्ञानकोश. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2013

- बोरगेट, एडगर एफ एण्ड मेरी एल बोरगेट
- वामन शिवराम आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश, पृ .132
- हरदेव बाहरी, अंग्रेजी हिन्दी शब्द कोश, पृ. 334
- सुरेश अवस्थी, इंदुजा अवस्थी, (सं.). चैम्बर्स अंग्रेजी - हिन्दी कोश, पृ. 624
- श्यामबहादुर वर्मा, धीरेन्द्र वर्मा, (सं.). बृहत-हिन्दी शब्दकोश, पृ. 260

**शोध प्रबंध :**

- इरेश स्वामी. (शोध प्रबंध). <u>चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व</u>. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001
- कुलकर्णी, शोभा. (शोध प्रबंध). <u>आठवें दशक के उपन्यासों में समाजशास्त्रीय अध्ययन</u>. औरंगाबाद : बाबा साहब अंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय. 2006
- जाधव, मीना, (डॉ.) इरेश स्वामी. (शोध प्रबंध). <u>चित्रा मुद्गल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व</u>. कोल्हापुर : शिवाजी विश्वविद्यालय, 2001

**अन्तर्जाल सूत्र :**

- Yougmans.blogspot.in (समकालीन लेखिका चित्रा मुद्गल : व्यक्तिव एवं कृतित्व) 28-10-2017 को देखा गया)
- नागेश मिश्रा, ब्रह्मा जी की छाया से हुई जिनकी उत्पत्ति, गज़ब पोस्ट htm (08-10-2017 को देखा गया )
- w.w.w.navneethindi.com\साहित्य –की स्थाई संपत (08-12-2017 को देखा गया )

- http://www.namanbharat.com/**19872/**why-allauddin-khilji-killed-mlik-gafur-here-the-reason/ (09-01-2018 को देखा गया)

Research maGma
An International Multidisciplinary Journal
ISSN NO- 2456-7078 IMPACT FACTOR- 4.520
VOL-1, ISSUE-9, NOV-2017 UGC JOURNAL ID- 63465

# किन्नरों की व्यथा और अस्तित्व का संघर्ष एवं समकालीन उपन्यास (पोस्ट बॉक्स नं. २०३ नाला सोपारा के संदर्भ में)

अनिल अहिरवार
एम .फिल. शोध छात्र, हिंदी विभाग
साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्यन विश्वविद्यालय, बारला, रायसेन, मध्यप्रदेश

**सारांश**

समकालीन उपन्यासों में 'पोस्ट बॉक्स नं.२०३ नाला सोपारा' के केंद्र में तृतीय प्रकृति अर्थात् किन्नर समुदाय (थर्ड जेंडर) को रखा गया है । चित्रा मुद्गल ने किन्नर समुदाय के संघर्ष की गाथा को ऐतिहासिक सन्दर्भ में देखने की बजाय उसे समकालीन, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक पृष्टभूमि में चित्रित किया है । यह ऐसे लोगों की कहानी का औन्यासिक विस्तार है जिन्हें सिर्फ लिंग दोष के कारण इन्सान ही नहीं समझा गया और न ही उनका स्वयं का कोई अस्तित्व माना गया है । आधुनिक समाज की परम्परा में आज किन्नरों को समानता की दृष्टी से नहीं देखा जाता और इसी भेद भावपूर्ण पुरुषसत्तामक समाज के द्वारा निर्मित प्रतिमानों के अनुसार किन्नरों ने अपने को ढाल लिया है । चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यासों में समाज की इस पुरातन रुढ़िवादी परम्परा का विरोध करके किन्नरों के लिए नए प्रतिमानों को गढ़ा है । चित्रा मुदगल का सम्पूर्ण साहित्य मानवीय संवेदनाओं से ओत प्रोत दिखाई देता है और पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा भी मानवीय और समाजिक मूल्यों से अछूता नहीं है । याद रहे कि जब हम किसी को प्रकृति प्रदत्त लिंग के आधार पर भेदभाव करते हैं तो निश्चय ही हम उनके मनवाधिकारों का हनन कर रहे होते हैं ।

**मुख्य शब्द :**

प्रतिमान, परम्परा, संस्कृति, पितृसत्तात्मक समाज, किन्नर समाज, समाज और संघर्ष, अस्मिता, स्वायत्तता, पौराणिक ।

**प्रस्तावना :**

गद्य साहित्य में हिंदी उपन्यास एक महत्व पूर्ण विधा के रूप में माना जाता है जिसके माध्यम से मानव जीवन के किसी भी तत्व को उक्त रूप में समन्वित कर समीप रखा जाता है । उपन्यास में मानव जीवन के यथार्थ को समग्रता में देखने की कोशिश की जाती है और समाज, देशकाल वातावरण को उपन्यासकार अपने पात्रों और चरित्रों के माध्यम प्रस्तुत करता है । गोपाल राय ने उपन्यास विकासक्रम के सन्दर्भ में कहा है कि, "हिंदी में नावेल के अर्थ में उपन्यास पद का प्रथम प्रयोग 1875 ई. में हुआ । बंगला में नावेल के अर्थ में उपन्यास पद का प्रयोग 1862 ई. में भूदेव मुखोपाध्याय ने किया था, जिसे बंकिमचंद्र चटर्जी ने अपनी रचना के द्वारा लोकप्रिय बनाया ।"1 उपन्यासों के माध्यम से साहित्य में कई महत्त्व पूर्ण समस्याओं को प्रस्तुत करके केंद्र में रखा गया और उन समस्याओं को सरल और स्वाभाविक बनाकर प्रस्तुत

करने का कार्य उपन्यास के माध्यम से किया गया । आधुनिक युग समस्या प्रधान युग है । आज प्रत्येक व्यक्ति मानसिक कुंठा से ग्रस्त, निराशा, सामाजिक विसंगतियों के कारण किसी न किसी प्रकार से अभाव ही दिखाई देता है । व्यक्ति की कुंठा और हतासा के इस समय में व्यक्ति के लिए एक आधार की आवश्यकता है और उस आवश्यकता की पूर्ति करने में साहित्य एक सशक्त माध्यम के रूप में दिखाई देता है । उपन्यास लेखन की परम्परा तो बहुत पुरानी है लेकिन यहाँ सिर्फ समकालीनता और आधुनिकता के संदर्भ में अध्ययन किया गया है । व्यक्ति के जीवन को समग्रता में प्रस्तुत करने का प्रयास समकालीन उपन्यासों में अधिक देखने को मिलता है । वर्तमान युग अस्मिताओं के विस्फोट का युग है । आज प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों के लिया संघर्ष दिखाई देता है । इसलिए समकालीन अस्मिता सम्बन्धी विमर्शो के आधार पर विश्लेषण करना ही तर्कसंगत रहेगा ।

समकालीन स्त्री लेखन में महिला साहित्यकारों ने एक स्त्री को केंद्र में रखकर ही रचनात्मक साहित्य लिखा है लेकिन समकालीन महिला साहित्यकाकारों में चित्रा मुद्गल एक ऐसा नाम है जिन्होंने सिर्फ स्त्री पर ही रचना नहीं कि वल्कि प्रकृति, पशुदृपक्षियों के प्रति भी अपनी संवेदना व्यक्त की है । चित्रा मुद्गल का रचनात्मक साहित्य ऐसे अनेकों मानवीय और सामाजिक मूल्यों के प्रश्नों से भरा पड़ा हुआ है । 'एक जमीन अपनी', 'आवा', उपन्यास में स्त्री विमर्श देखने को मिलता है, लेकिन 'गिलिगडु' उपन्यास से उनके रचनात्मक सहित्य का रुख समाज के अनछुए पहलूओं जैसे वृद्ध और किन्नर वर्ग की तरफ प्रवृत होता दिखाई देता है । किन्नरों समुदाय जिनका अस्तित्व लोग जानते है लेकिन मानते नहीं । समाज की मुख्यधारा से अलग थलग इस वर्ग की दुःख, संवेदना को आत्मसात करते हुए चित्रा मुद्गल ने 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' जैसे संवेदनात्मक उपन्यास की रचना करती है ।

यह उपन्यास किन्नरों के दैनिक यथार्थ, संवेदना, पीढ़ा, दर्द से अवगत करवाता पत्र शैली के माध्यम से नए कथ्य और शिल्प में रचित एक गंभीरता पूर्ण रचना है । भारत देश अनेकता में एकता का प्रतीक कहा जाता है लेकिन आज हमारा देश लोकतंत्र को आत्मसात करने में समर्थ दिखाई नहीं दे रहा है । भारतीय समाज में आज व्यक्ति की पहचान उसके लिंग, जाति या समुदाय के आधार पर अंकित की जा रही है । इसी कारण तो आज दलित, आदिवासी, स्त्रियों और किन्नर समुदाय पितृसत्तात्मक, पूँजीवादी, ब्राम्हणवादी समाज व्यवस्था के लोगों की नजरों में समानता के अधिकारी नहीं हैं ।

दलित, आदिवासी, और स्त्री वर्ग का समाज में बहुत संघर्ष के बाद अपना कुछ अस्तित्व दिखाई देता है । लेकिन किन्नर समुदाय का एक अंग लंबे समय से हाशियेकरण की स्थिति में अभी भी अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत दिखाई दे रहा है । जो न पूर्ण स्त्री की श्रेणी में आते है न ही पुरुष की श्रेणी में उन्हें किन्नर के नाम से जाना जाता है । किन्नरों का इतिहास बहुत पुराना है । महाभारत, रामायण, उपनिषदों में भी इनकी गाथाएँ देखने व सुनने को मिलती हैं । ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार, हिंदू और मुस्लिम शासकों द्वारा किन्नरों का इस्तेमाल खासतौर पर अंतरूपुर ओर हरम में रानियों की पहरेदारी के लिए किया जाता था। इसके पीछे उनकी सोच यह थी कि रानियां पहरेदारों से अवैध संबंध स्थापित नहीं कर पाएं । उस दौर में राजाओं द्वारा काफी नौजवानों के यौनांग काटकर उन्हें हिजड़ा बना दिया जाता था । किन्नरों को लेकर भारतीय समाज में भिन्न–भिन्न तरह की भ्रांतियां हैं । मिथक और इतिहास में भी इनकी खास तरह की उपस्थिति है । महाभारत का शिखंडी योद्धा था । जिसकी मदद से अर्जुन ने भीष्म पितामह का वध किया था । वह आधा औरत और आधा मर्द यानि किन्नर था । अर्जुन ने अपने अज्ञातवास का एक साल का समय भी किन्नर का रूप धारण कर वृहन्नला के नाम से बिताया था । कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में किन्नरों का उल्लेख किया है । उस समय राजाओं ने किन्नरों का अपने निजी सुरक्षाकर्मी के तौर पर तैनात किया हुआ था तथा उनका इस्तेमाल जासूसी के लिए किया जाता था ।

किन्नर शब्द से याद रहे कि 2014 से पहले किन्नरों को भिन्न भाषा और भिन्न तर्ज पर भिन्न नाम से संबोधित किया जाता रहा है, जैसे हिजड़ा, द्विलिंग, छक्का, अरवनी, खुसरा, नामर्द और कई जगह ट्रांसजेंडर्स आदि भिन्न नाम प्रयोग किए जाते रहे हैं । दुनिया के अन्य देशों नेपाल, पकिस्तान, रूस आदि देशों ने इस वर्ग के अपने अधिकार बहुत पहले भी दे दिए हैं, लेकिन भारत की बात करे तो "परतंत्र भारत 1871 से पहले तक भारत में किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स यानी जरायम पेशा की जनजाति की श्रेणी में डाल दिया गया था । बाद में आजाद हिंदुस्तान का जब नया संविधान बना तो 1951 में किन्नरों को क्रिमिनल ट्राइब्स से निकाल दिया गया ।"3 संविधान में वर्णित इन समानता के अधिकारों के आधार पर कुछ किन्नर समुदाय के लोग कुछ सामजिक कार्यकर्ताओं के संघर्ष के बाद किन्नरों को 2014 में तीसरे लिंग के रूप में मान्यता प्रदान की गई ।

संवैधानिक अधिकार प्राप्त होने के बाद भी यह वर्ग आज समाज की मुख्य धारा में सम्मलित नही देखा जाता । आखिर कब तक इस वर्ग को समाज सम्मान की दृष्टि से देखेगा ? पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास समाज

की पुरातन रूढ़िवादी, मानसिकता के प्रति असंतोष और विरोध का घोषणा पत्र है । लेखिका उपन्यास के बारे में लिखते हुए कहती है कि, "लंबे समय से मेरे मन में पीड़ा थी । एक छटपटाहट थी, कि आखिर क्यों हमारे इस अहम हिस्से को अलग–थलग किया जा रहा है । हमारे बच्चों को क्यों हमसे दूर किया जा रहा है । आजादी से लेकर अभी तक कई रूढ़िया टूटी । लेकिन किन्नरों की जिंदगी में कोई बदलाव नहीं आया । क्यों आखिर इनका दोष क्या है ? यही सवाल मुझे बेचौन करता करता था ।"4 इस उपन्यास में किन्नर विनोद उर्फ विन्नी के माध्यम से किन्नर समाज की उस पुरातन रूढ़िवादी समाज व्यवस्था पर कुठराघात किया है, जो एक मनुष्य को मनुष्य नहीं समझता । मानवीय मूल्यों के हनन वाली इसी व्यवस्था के चलते विनोद को सिर्फ चौदह वर्ष की अवस्था में स्कूली शिक्षा के दौरान किन्नर चम्पाबाई के हवाले कर दिया जाता है और विनोद की मृत्यु का कारण दुर्घटना बता दिया जाता है । विनोद की ही तरह लाखों किन्नर बच्चों को जन्म लेते ही उनके माता पिता द्वारा मार दिया जाता है या सड़क, घूरे पर फेक दिया जाता है । अगर कुछ कारणवस अगर ऐसा नहीं हुआ तो किन्नरों के हवाले कर दिया जाता है, जहां से यह कभी बाहर नहीं निकल सकते सिर्फ नारकीय जीवन ही जिन्दगी भर जीना पड़ता है । दोहरे विस्थापन के इसी दर्द के कारण विनोद अपने घर का पता करके अपने माँ से पत्र व्यवहार करता है । उपन्यास की शुरुवात इन्हीं पत्रों के साथ होती है ।

सम्पूर्ण उपन्यास पत्र शैली में लिखा गया ऐसे उपन्यास है जिसमे पत्र जबाबी तौर पर होते हैं विनोद के लिखे गये पत्रों के माध्यम से ही माँ का जबाब सामने आता है । घर और परिवार से बहिष्कृत होने पर विनोद को किन्नर समाज में रहते हुए जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उन सभी दुःख, दर्द का अपनी 'बा' को एहसास करवाता है । दैनिक जीवन के इस यथार्थ से अवगत कराने के साथ लेखिका केवल एक माँ को ही नहीं बताना चाहती है बल्कि सभ्य कहे जाने बाले मुख्यधारा के उस समाज को भी यह एहसास दिलाना चाहती हैं कि आखिर किसी व्यक्ति को उसके लिंग दोष के कारण उसे घर परिवार से क्यों बहिष्कृत कर दिया जाता है । लिंग दोष के रूप में वह पैदा हुए इसमें उनकी क्या गलती बल्कि प्रकृति प्रदत्त दोष भोगने के लिए वह अभिशप्त है । किसी भी व्यक्ति की जन्म लेते ही यदि अपने माता पिता से अलग कर दिया जाए तो उस पीढ़ा और दर्द का एहसास क्या होता है । इन्हीं सभी प्रश्नों को आत्मसात करके विनोद अपनी 'बा' से कहता है कि, "जिस नरक में तूने और पप्पा ने धकेला है मुझे, वह एक अन्धा कुआं है, जिसमें सिर्फ सांप–बिच्छू बनकर वह पैदा नहीं हुए होंगे । बस, इस कुएं ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया ।"5 हिंदी साहित्य में किन्नरों को लेकर काफी उपन्यास लिखे गये लेकिन उन सभी में पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा उपन्यास अपने कथ्य और शिल्प के कारण अपना विशिष्ट स्थान बनता है । अभी तक जितने भी उपन्यास लिखे गये उनमें वर्णित पात्र अपने परम्परागत रीतिरिवाजों का विरोध नहीं करते । लेकिन नाला सोपारा उपन्यास का पात्र विनोद स्वाभिमानी और आत्म निर्भर है समाज द्वारा थोपे गए इन नियमों को वह नहीं मानता और एक प्रेरणा श्रोत के रूप में समाज के सामने आता है । विनोद अपनी 'बा' से कहता है कि, "उनके लात, घूसे, थप्पड़ और कानों में गर्म तेल सी टपकती किसी भी सम्बन्ध को न बख्सने वाली अश्लील गालियों के बाबजूद न मैं मटक–मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ, न सलमेंदृसितारे वाली साड़ियाँ लपेट लिपस्टिक लगा कानों में बुंदे लटकाने को ।"6

आजादी के पहले और बाद में समाज की कई सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं में सुधार हुआ लेकिन किन्नरों के प्रति समाज का रवैया अभी भी उचित नहीं देखा जाता । विनोद शिक्षित है और वह अपनी पीड़ा और दर्द को पत्रों के माध्यम से व्यक्त करता है । लेकिन जो किन्नर अशिक्षित होते हैं, वह तो अपने मनन का दर्द पीड़ा अपने ह्रदय में ही रख सकते है । किन्नरों के आत्मनिर्भरता के साथ साथ शिक्षित होने की बात भी की जाती है । गाने, बजाने के अतिरिक्त मेहनती मजदूरी करके अपना दैनिक जीवन यापन करने की ओर अग्रसर कराता यह उपन्यास अस्मिताओं के विस्फोट का घोषणापत्र नजर आता है । परम्परागत पेशे का विरोध और नांच–गाने की मान्यताओं की तोड़ने का प्रयास प्रदीप सौरभ अपने उपन्यास 'तीसरी ताली' में करते है । तीसरी ताली उपन्यास का पात्र विजय कहता है कि, "मैं नांचना गाना नहीं नाम कमाना चाहता था । भगवान राम के उस मिथक को को झूठलाना चाहता था, जिसके कारण तीसरी योनी के लोग नाचनेदृगाने के लिए अभिशप्त हैदृपरिवार और समाज से वेदखल है ।"7 विजय अपनी पहचान छिपाकर नाम कमाना चाहता था, लेकिन विनोद उसी पहचान को अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व की पहचान बनाना चाहता है ।

किन्नरों की इस समस्त स्थितियों का कारण जितना सामाजिक तथ्यों को जिम्मेदार माना जाता है, उससे कम राजनैतिक विसंगतियों की भूमिका नहीं हैं । अन्दर से भयभीत और कमजोर इन किन्नरों को राजनैतिक लोग अपनी स्वार्थवृति का जरिया बनाने से नहीं चूकते । विनोद विधायक के यहाँ कम्पूटर ट्रेनिग की बात करने जाता है तो विधायक जी सबसे पहले उसके सामने एक शर्त रख देते है और चेतावनी की मुद्रा में कहते है कि, "मगर बरखुरदार पहले ही बताए देते हैं, नौकरी तुम्हें मेरे पास ही करनी होगी । उनकी तर्जनी ने चेतावनी की मुद्रा में अख्तियार की ।"8 विधायक जी

बचपन से ही माता– पिता के आभाव में रह बचपन में ही माता पिता से साथ छुट गया था फिर भी बेसहारा और कमजोर लोगों का दु:ख दर्द समझने में वे समर्थ नहीं हैं विनोद को वह सिर्फ वोट बैंक के रूप में ही प्रयोग करते है । राजनैतिक लोगों की स्वार्थवृति और सत्तालोलुपता की यह लालसा एक कल्याणकारी और लोकतांत्रिक राष्ट निर्माण के लिए हमेशा हानिकारक सिद्ध होती है । सामाजिक रूप से देखे तो सरकार और नेताओं का भी ध्यान इन लोगों के प्रति कम ही जाता है सिर्फ बड़े बड़े मंचों पर बड़े बड़े बादे ही किए जाते है, निभाए नहीं जाते । 2014 में सुप्रीम कोर्ट ने किन्नरों को तृतीय लिंग 'अन्य (0)' के रूप पहचान पत्र बनबाने की मान्यता प्रदान की । उपन्यास का पात्र सरकार द्वारा किए गए इस लिंग निर्धारण को स्वीकार नहीं करता । विनोद का मानना है कि यह लिंग निर्धारण किन्नरों को सिर्फ सीमित करके ही रख सकता है । हमें स्वतंत्र रूप से लिंग चुनने की स्वतंत्रता दी जाए हमें स्त्री बनकर रहना है या पुरुष यह हम लोगों पर छोड़ दिया जाए 'अन्य (0)' में रहकर हमें पहचान पत्र नहीं वनवाना "मर्द और औरत तक तो लिंग विभाजन ठीक है पर 'अन्य (0)' क्यों ? लिंग दोष के चलते हमें 'अन्य (0)' श्रेणी में झोक दिया जाएगा । सामान्य मनुष्यों के बीच सं,सामान्य मनुष्य के रूप में ही पहचाने जाने की ख्वाहिश रखता हूँ ।"9 लिंग का सही निर्धारण नहीं होने के कारण ही उपन्यास में पूनम जोशी के शरीर और मन को छत विछत कर देने के बाद भी उसकी कानूनी कार्यवाई करना कोई उचित नहीं समझता । किन्नर जीवन भर इस तरह के शोषण के शिकार होते रहते हैं । सामाजिक वहिष्कार और तिरस्कार का कारण किन्नरों से ज्यादा ऐसे माता पिता को भी ठहराया है, जो अपने किन्नर बच्चों को दूसरों के हाथ में जिलालत भरी जिन्दगी जीने को मजबूर कर देते हैं । किन्नरों के गुरु और सरदारों की भी इसमें भूमिका रहती है । "असामजिक तत्वों के हाथ की कठपुतली बनने में जितनी भूमिका किन्नरों के संदर्भ में सामाजिक वहिष्कार–तिरस्कार की रही है, उससे कम उनके पथभ्रष्ट सरदारों और गुरुओं की नहीं । ऊपर से विकल्पहीनता की कुंठा ने उन्हें आँधी का तिनका बना दिया है ।"10

## निष्कर्ष

किन्नर वर्ग जो समाज का ही अंग है, जिसको मुख्य धारा का समाज हमेशा से बहिष्कार कर, दुत्कार भरी नजरों से देखता आ रहा है और आज भी यह वर्ग समाज की मुख्य धारा में सम्मिलित नहीं है । अपनी अस्मिता की पहचान के लिए आज भी यह वर्ग अपने अधिकारों एवं सम्मान के लिए संघर्ष के रास्ते पर है । चित्रा मुद्गल का यह चर्चित उपन्यास सिर्फ समाज के ऊपर सवाल ही नहीं उठाता वल्कि उन समस्याओं का व्यापक हल ही प्रस्तुत करता है । पोस्ट बॉक्स नं. 203 नालासोपारा का महत्व समाज की तीसरी सत्ता को उपेक्षा और तिरिस्कार के अँधेरे से बाहर लाकर उसकी सहज मानवीय पहचान के लिए किये जाने वाले संघर्ष में निहित है और यही दरसल वह मुकाम है जहां खड़े होकर चित्रा मुद्गल को गले लगाकर शाबासी दी जा सकती है।"11 इस प्रकार चित्रा मुद्गल का यह उपन्यास यथार्थ का विस्फोटक चित्र ही उपस्थित नहीं करता भविष्य को संकेतित करने के कारण आश्वस्त भी करता है ।

## सन्दर्भ :


1. राय गोपाल: हिंदी उपन्यास का इतिहास ,राजकमल प्रकाशन ,नई दिल्ली,छठा संस्करण रू2016 , पृष्ठ. 2
2. एन .राठोड ,डॉ.ललिता : आधुनिकतारूस्त्री दृविमर्श ,समता प्रकाशन ,कानपुर ,2014, पृष्ठ. 56
3. सिंह प्रताप डॉ.विजेंद्र : जनकृति अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका, वर्ष 2, अंक 18, अगस्त 2016, पृष्ठ 10, ैछ 2454–2725
4. सिंह प्रताप डॉ.विजेंद्र : हिंदी उपन्यासों के आईने में थर्ड जेंडर, अमन प्रकाशन, कानपुर, 2016, पृष्ठ 145
5. मुद्गल चित्रा : पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 11
6. वही, पृष्ठ 9
7. सौरभ प्रदीप : तीसरी ताली, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 195
8. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, पृष्ठ 41
9. वही, पृष्ठ 195
10. वही, पृष्ठ 86
11. मधुरेश : वांग्मय पत्रिका, अंक जुलाईदृदिसम्बर, 2017, पृष्ठ 100ए ैछ 0975.8321